

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्॥ क्र० १/८६/२



Impact Factor
8.642



ISSN : 2395-7115
Jan. 2026
Vol.-23, Issue-1

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)



Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

Publisher :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERCE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 23

ISSUE-1

(जनवरी 2026)

ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),

एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),

डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)

डी.लिट (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल

विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक

टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)



Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : nksihag202@gmail.com

मो. 09466532152

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

- Disclaimer :**
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
 2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
 3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originality of their views/opinions expressed in their articles.
 4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdiction only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबन्धु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैम्पस, काठमाण्डू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरु

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेंगलूरु

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतु बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रु. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रु. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)
खाता धारक का नाम	:	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी
बैंक खाता संख्या	:	1182000109078119
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003



देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्॥ ऋ० १/८६/२

ISSN : 2395-7115



बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gagan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

[भाग III-खण्ड 4]

भारत का राजपत्र : असाधारण

105

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc.,)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals	08 per paper	10 per paper
2.	Publications (other than Research papers)		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 www.bohalsm.blogspot.com

✉ grsbohals@gmail.com

☎ 8708822674

📞 9466532152

अनुक्रमणिका-जनवरी 2026

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहाग	10-10
2.	आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकार: जयशंकर प्रसाद	डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह	11-14
3.	खामोशी में चुप्पी स्त्री जीवन : गीतांजलि श्री के 'माई' उपन्यास के संदर्भ में	Anjaly Prakash, Dr.Sreeja G.R	15-19
4.	Agricultural Productivity and Regional Imbalances in Brazil	Naresh Kumar Meena	20-24
5.	पौड़ी जनपद-दुगड़डा ब्लॉक के अन्तर्गत जैविक कृषि का उत्पादन एवं अर्थव्यवस्था के नये आयाम	डॉ० चन्द्रप्रभा कण्डवाल	25-28
6.	भारतीय ज्ञान परंपरा और संत कबीरदास	डॉ अनिता एस कर्पूर	29-31
7.	पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन: सर्वोत्तम प्रथाएं और भविष्य की दिशाएँ	डॉ. देवेन्द्र कुमार शर्मा	32-38
8.	Assamese modern songs and its essential features : An Analysis	Dr. Appu Borah	39-48
9.	सूफी काव्य साहित्य की प्रवृत्तियाँ(विशेष सन्दर्भ मलिक मुहम्मद जायसी)	सत्यनारायणप्पा	49-55
10.	दिव्यांग विमर्श	डॉ. अश्वनी कुमार ध्रुव	56-59
11.	कबीर के काव्य में आध्यात्मिक, अनुभव एवं सामाजिक विद्रोह	डॉ. ब्रजलता शर्मा, आरती शुक्ला	60-62
12.	सुशीला टाकभोरे के साहित्य में दलित स्त्री की चेतना	अल्पना गौतम, डॉ० सुषमा गौड़ियाल	63-66
13.	थार रेगिस्तान के असिंचित क्षेत्र में कृषि के नवाचार	लक्ष्मण राम मेहरा	67-70
14.	द्विरुक्ति के आधार पर 'गोदान' उपन्यास का विश्लेषण	अर्चना	71-75
15.	“अरुणाचल प्रदेश की न्यीशी समुदाय की बोली में देवनागरी लिपि का प्रयोग”	सुश्री ब्याबंग याना	76-79
16.	“Higher Education: Knowledge Economy”	Ms. Lod Mebin	80-82
17.	अलका सरावगी के उपन्यास एक सच्ची झूठी गाथा	कविता कोठारी	83-88

	उपन्यास में पात्रों का अनुशीलन		
18.	Agricultural Productivity and Its Regional Imbalance of North America	Naresh Kumar Meena	89-93
19.	“हिन्दी उपन्यासों में कथानक की विशिष्टता”	डॉ. प्रकाश नारायण सिंह चौहान	94-96
20.	ज्योतिबा फुले के चिन्तन में सामाजिक न्याय की अवधारणा : एक समीक्षात्मक अध्ययन	विनोद कुमार	97-99
21.	“भारतीय संगीत में महिलाओं का योगदान”	नेहा, प्रोफेसर आन्शवना सक्सेना	100-104
22.	उत्तराधुनिक हिंदी महिला लेखिकाओं के उपन्यास : एक अध्ययन	डॉ. श्रीकला.एस.आर,	105-109
23.	Agricultural Productivity and Its Regional Imbalances of Australia.	Naresh Kumar Meena	110-114
24.	Applying Social Engineering Techniques to Address Social Issues: A Sociological Perspective	Karunarathne Rasika R A, Shyamali. W.M.	115-119
25.	“डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में मानवतावादी चिंतन”	डॉ. नेमीचंद कुमावत	120-126
26.	छत्तीसगढ़ी लोक गीतों का समाज के विकास में योगदान	डॉ. अश्वनी कुमार ध्रुव	127-129
27.	मानव संसाधन एवं तनाव प्रबंधन	किरण पवार, डॉ. दीपक जहागीरदार	130-132
28.	छत्तीसगढ़ के महिला कृषि श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन	डॉ. सुनीता प्रधान	133-135
29.	भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषद् : एक समीक्षात्मक अध्ययन	डा० चन्द्र शेखर उपाध्याय	136-140
30.	रमणिका गुप्ता की कविताओं में चित्रित सामाजिक चेतना	वी. अनीता	141-145
31.	रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन का चित्रण	पुरी गोदावरी	146-149
32.	आधुनिक कविता में किसान चित्रण	डॉ. ममता उपाध्याय	150-153
33.	कुबेरनाथ राय के निबंधों में सामाजिक समरसता	संगीता सिंह	154-156
34.	मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री: सत्ता, स्वायत्तता और संघर्ष	डॉ. जूलिया एम्मानुएल	157-160

35.	‘विमल मित्र’ के उपन्यास ‘चार आँखों का खेल’ का सामाजिक अध्ययन	सुशीला बाणी	161-164
36.	THE ROLE OF SOFT SKILLS IN EFFECTIVE CROSS-LINGUISTIC TRANSLATION	Dr.R.REKHA , Dr.VIDHYA .P, Dr SAJITHA J	165-168
37.	जनजातीय क्रांति के महानायक : बिरसा मुंडा	डॉ. शकुन्तला प्रजापति	169-173
38.	निर्गुण कवि रैदास के काव्य में मानव मूल्यों की सामाजिक चेतना	भरत लाल बंशकार	174-175
39.	आचार्य क्षेमेन्द्र की दृष्टि में कल्कि अवतार एवं उसकी समीचीनता	मितीश दुबे, डॉ० विद्याधर सिंह	176-179
40.	मीमांसा दर्शन में यज्ञ विधान शांखायन ब्राह्मण के आलोक में	नीरज जम्वाल, प्रो. रामबहादुर शुक्ल:	180-183
41.	मधुकर गंगाधर की कहानी का साहित्यिक अवलोकन	डॉ० कल्पना सुधांशु	184-191
42.	छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक का वित्तीय समावेशन में योगदान	Dr. Deepa Dewangan, Pawan Kumar Tamrakar	192-199
43.	पदार्थतत्त्वनिरूपण ग्रन्थेष्ट दृष्टिसे विशेषपदार्थ	सुदीप्त मण्डल	200-205
44.	गढ़वाली लोकसाहित्य: संस्कृति और परंपरा का प्रतिबिंब	अमित मैठाणी, डॉ० ब्रजलता शर्मा	206-208
45.	शिक्षा में तकनीकी का बढ़ता प्रभाव : लाभ, हानियाँ, चुनौतियाँ एवं भविष्य की दिशा	डॉ. सुकन्या चल्ला	209-211
46.	Quality Education in Rural India: SDG 4 Perspective	Dr. Yogendra Kumar	212-216



बोहल शोध मंजूषा : जनवरी 2026

शोध और विचार की परंपरा तभी जीवित रहती है, जब वह समय, समाज और संवेदना—तीनों से निरंतर संवाद करती रहे। **बोहल शोध मंजूषा** का जनवरी 2026 अंक इसी संवाद की एक सशक्त कड़ी के रूप में पाठकों और शोधकर्ताओं के समक्ष प्रस्तुत है। यह पत्रिका केवल शोध आलेखों का संकलन नहीं, बल्कि समकालीन बौद्धिक चेतना, आलोचनात्मक दृष्टि और सामाजिक उत्तरदायित्व का मंच है।

आज का समय बहुस्तरीय चुनौतियों का समय है। वैश्वीकरण, तकनीकी क्रांति, सांस्कृतिक संक्रमण, सामाजिक असमानताएँ और वैचारिक द्वंद्व—इन सबके बीच शोध की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। शोध अब केवल अकादमिक अभ्यास न रहकर समाज को समझने, उसे दिशा देने और भविष्य के लिए वैचारिक आधार तैयार करने का माध्यम बन गया है। **बोहल शोध मंजूषा** इस तथ्य को स्वीकार करते हुए बहुविषयक, बहुभाषिक और समावेशी शोध को प्रोत्साहित करती रही है।

इस अंक में प्रकाशित शोध आलेख साहित्य, समाजशास्त्र, इतिहास, संस्कृति, शिक्षा और समकालीन विमर्शों से जुड़े विविध पक्षों को सामने लाते हैं। हिंदी साहित्य की परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व, लोक और शास्त्र की संवादधर्मिता, स्त्री विमर्श, दलित चेतना, पर्यावरणीय चिंताएँ तथा डिजिटल युग में साहित्य और पत्रकारिता की भूमिका जैसे विषयों पर प्रस्तुत आलेख न केवल ज्ञानवर्धक हैं, बल्कि विचारोत्तेजक भी हैं। इन आलेखों में शोधकर्ताओं की दृष्टि तथ्यात्मक प्रामाणिकता के साथ-साथ संवेदनात्मक गहराई को भी उजागर करती है।

बोहल शोध मंजूषा का उद्देश्य मात्र प्रकाशन नहीं, बल्कि शोध की गुणवत्ता, मौलिकता और सामाजिक उपयोगिता को प्राथमिकता देना है। आज जब शोध प्रकाशन की संख्या बढ़ी है, वहाँ गुणवत्ता, संदर्भबद्धता और नैतिकता पर विशेष ध्यान देना आवश्यक हो गया है। यह पत्रिका शोध की इसी जिम्मेदारी को समझते हुए पियर-रिव्यू की प्रक्रिया के माध्यम से गंभीर और प्रामाणिक लेखन को मंच प्रदान करती है।

यह भी उल्लेखनीय है कि यह पत्रिका नवोदित शोधार्थियों और अनुभवी विद्वानों—दोनों के लिए समान अवसर उपलब्ध कराती है। नव शोधकर्ताओं की ताज़ा दृष्टि और वरिष्ठ विद्वानों के अनुभव का संगम ही किसी भी अकादमिक परंपरा को समृद्ध बनाता है। इस अंक में यह संतुलन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

आज के दौर में जब भाषा, संस्कृति और मानवीय मूल्यों पर अनेक प्रश्नचिह्न खड़े किए जा रहे हैं, तब शोध पत्रिकाओं की भूमिका और भी जिम्मेदार हो जाती है। **बोहल शोध मंजूषा** भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिंदी, के माध्यम से वैश्विक विमर्श में सार्थक हस्तक्षेप करने का प्रयास कर रही है। यह प्रयास न केवल भाषा की गरिमा को बनाए रखता है, बल्कि भारतीय चिंतन परंपरा को भी सशक्त करता है।

अंत में, हम सभी लेखकों, शोधकर्ताओं, समीक्षकों और पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से **बोहल शोध मंजूषा** निरंतर अपने उद्देश्य की ओर अग्रसर है। आशा है कि जनवरी 2026 का यह अंक पाठकों को चिंतन, संवाद और शोध के नए आयामों की ओर प्रेरित करेगा तथा अकादमिक जगत में अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज कराएगा।

— संपादक

बोहल शोध मंजूषा



आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकार: जयशंकर प्रसाद

डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह

हिंदी विभाग,

फीरोज गांधी कालेज रायबरेली,

लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

शोधसार –

मानवता के अनुरागी, प्रकृति के प्रति आकर्षण, अज्ञान सत्ता की अनुभूति, प्रेम का आध्यात्मिक चिंतन व आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकार हैं जयशंकर प्रसाद। रचना विविधता, विषय संप्रेषण, विषय प्रतिपादन, सूक्ष्म चिंतन, बुद्धिवाद तथा दर्शन को अपनी साहित्य साधना का लक्ष्य बनाकर साहित्य जगत को अनुपम कृतियां प्रदान करने वाले अप्रतिम रचनाकार जयशंकर प्रसाद का काव्य आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति का काव्य है। यह वही अनुभूति है जो प्रसाद के साहित्य को साहित्यिक जगत में अति प्रतिष्ठित कराती है। ऐतिहासिक एवं सामाजिक विषयों के लेखन में कवि तथा लेखक प्रसाद ने अपने साहित्य में रसवाद का सम्मिश्रण करते हुए अत्यधिक आत्मीयता व्यक्त की है। उनके साहित्य के अनुशीलन से व पुनर्पाठ से भावी पीढ़ी में सांस्कृतिक चेतना का पुनर्भाव प्रस्फुटित होगा।

प्रस्तावना

आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक उपलब्धियां अनुपमेय हैं। प्रसाद के विषय जीवन की विविधता को दृश्यांकित करते हैं। विचार और अनुभूति के सम्मिश्रण ने उनके साहित्य को अपेक्षाकृत अधिक रमणीय बना दिया है। यदि व्यापकता को साहित्यकार की कसौटी बना दिया जाये तो आधुनिक हिंदी साहित्य के जाज्वल्यमान रत्न प्रसाद जी हैं।

मौलिक तथा नवीन विषयों की सृष्टि, प्राचीनता में नवीनता का प्रवेश, करुणामयी भावना, मार्मिक तथा महत्वपूर्ण घटनाओं व नारी सशक्तीकरण का स्पष्ट चित्रण, लौकिक से अलौकिक प्रेम की ओर साहित्य का प्रेषण, संगीतात्मकता, आनंदवाद की प्रतिष्ठा, मूर्त से अमूर्त गमन प्रसाद का अद्भूत है।

कृतित्व

जयशंकर प्रसाद कृत चित्राधार, महाराणा का महत्व, करुणालय, कानन कुसुम आँसू, झरना व लहर आदकृतियों, सज्जन, कल्याणी परिणय, प्रायश्चित्त, राजश्री, विशाख, अजातशत्रु, जनमेजय का नाग यज्ञ, कामना, स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त

व ध्रुवस्वामिनी नाट्य कृतियाँ, छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी व इन्द्रजाल कहानी संग्रह, कंकाल, तितली व इरावती (अपूर्ण) उपन्यास, काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध, उर्वशी तथा प्रेमराज्य चम्पूकाव्य जैसी कृतियाँ अनुपमेय हैं। देखा जाये तो काव्य, चम्पूकाव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध कोई ऐसा विषय नहीं जहां प्रसाद की साहित्यिक दृष्टि मानवीय मूल्यों की संकल्पनात्मक अनुभूति के साथ उपस्थित न हो।

कालजयी साहित्यकार प्रसाद के साहित्य पर पर्याप्त चिंतन-मनन हुआ। असंख्य शोधालेखों के साथ-साथ उनके साहित्य के विविध पक्षों को लेकर विद्वतापूर्ण असंख्य पुस्तकें तथा आज की तारीख में सैकड़ों-सैकड़ों शोध प्रबंध पूर्ण हो चुके हैं। फिर भी उनके साहित्य पर नित नये-नये दृष्टिकोणों से विचार हो रहे हैं, सेमिनार-संगोष्ठी, शोध आलेख, कार्यशाला, वेबिनार आयोजित हो रहे हैं तथा भविष्य में भी होते रहेंगे ऐसे कालजयी रचनाकार जयशंकर प्रसाद हैं।

व्यक्तित्व

प्रसाद एकान्त प्रिय, मितभाषी, तथा अन्तर्मुखी वृत्ति के व्यक्ति थे, इसलिए उनके व्यक्तित्व में संश्लिष्टता मिलती है। उनके साहित्य में उनकी मनः स्थितियों के बदलते हुए जो रूप मिलते हैं, उनसे उनके व्यक्तित्व को समझने का उपक्रम किया जा सकता है। प्रसाद के व्यक्तित्व, उनके मानसिक गठन तथा आन्तरिक उद्वेलन को उनकी रचनाओं में मुख्यतः देखा और समझा जा सकता है। प्रसाद की आरम्भिक रचनाओं में विचलित मनः स्थितियों, हल्के श्रृंगार की योजनाओं, दुखवादी दर्शन आदि के दर्शन होते हैं। निजी जीवन की पीड़ादायक स्मृतियाँ तथा विक्षोभ तो थे ही, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन और मानवीय क्रिया कलापों में भी विखराव देखकर, उनका मन अशान्त, अधीर और विक्षुब्ध हो उठता था परंतु उनका मन कहता था कि भावुकता भरे उद्गारों से समस्या का समाधान सम्भव नहीं इसीलिए उनका बुद्धिवादी विश्लेषण तथा निर्लेप चिंतक व्यक्तित्व निरंतर इन प्रश्नों से जूझता रहा और साहित्य के माध्यम से क्रमशः दिये गये समाधान निरंतर प्रौढ़ एवं परिपक्व होते गये।

कामना रूपक (1927) में जो समस्या प्रस्तुत की गयी वही महाकाव्य कामायनी (1936) का आधार बनी तथापि कामायनी का लेखक अधिक संतुलित है तथा वैज्ञानिक एवं भौतिक क्षेत्रों में हुई प्रगतियों के प्रति अधिक जागरूक और यथार्थवादी है। भाववादी दृष्टिकोण चिंतन बौद्धिकतापूर्ण और यथार्थ के प्रति सजग होता गया है। तभी तो प्रसाद लिखते हैं-

“शक्ति के विद्युत्तमण जो व्यस्त, विपुल विखरे हों निरन्तर”

समन्वय उसका करें समस्त, विजयश्री मानवता हो जाये।”¹

प्रसाद जी जीवन से अधिकाधिक परिचित होते हुए भी समय के साथ-साथ अधिक संतुलित और गहराई में उतरते चले गये। यथा-

“विस्तृत हों वे बीती बातें, अब जिनमें कुछ सार नहीं।

वह जलती छाती न रही, अब वैसा शीतल प्यार नहीं॥”²

किन्तु जितना गम्भीर होते गये, सहानुभूति का तत्व उतना ही गहराता चला गया। प्रतिक्रिया निरंतर अनुशासित और समाधान कारक होती चली गयी-

“औरों को हंसते देखो मनु हंसो और सूख पाओ।

अपने सुख को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ॥”.....

और यह क्या तुम सुनते नहीं विधाता का मंगल वरदान

शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूंज रहा जयगाना”³

प्रसाद जी के मनरूपी आकाश में वेदनारूपी प्रलयकालीन मेघमाला जो बेहद सघन है घनीभूत पीड़ा सी मस्तक में स्मृति सी छाई है जहाँ कवि प्रसाद पाठक को सम्बोधित करते हुए कहते हैं, अवकाश भला है किनको सुनने को करूण कथा से लिखते हैं वहीं उनकी आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति देखिए-‘सबका निचोड़ लेकर तुम, सुख से सूखे जीवन में।’

बरसो प्रभात हिमकन सा, आँसू इस विश्व सदन में॥”⁴

प्रसाद के नाटक साहित्य की धरोहर है। प्रसाद का मानना है कि प्रेरणा का उद्गम युग कि विशाल कन्दराओं से होता है। नाटककार उसे अपनी प्रतिभा, कला, अनुभव और सामर्थ्य के अनुसार ग्रहण कर कल्पना और यथार्थ के संयोग द्वारा नाटक के रूप में प्रकाशित करता है, भारतीय नवजागरण के जाल में जबकि परतंत्र भारत अपनी सुप्तावस्था से जाग्रत हो चुका था तथा चारों ओर क्रान्ति की ललकार व्याप्त थी ऐसे समय में आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के साहित्यिक प्रसाद का उदय हुआ था।

कालजयी साहित्यकार प्रसाद ने अपने नाटकों में अतीत का गौरव गान गाकर, देशवासियों को पुनः उसी स्वर्ण युग की स्थापत्य की प्रेरणा की थी। प्रसाद जी ने भारतवासियों के हृदय में राष्ट्र प्रेम का जो पुष्प खिलाया था उसकी सुरभि से आज तक वह सुरभित हो रहा है। प्रसाद जी स्कंदगुप्त नाटक में लिखते हैं- “नहीं तो क्या रोने में, भीख मांगने से कुछ अधिकार मिलता है? जिसके हाथ में बल नहीं, उसका अधिकार कैसा।”⁵

यह एक सच्चे सत्याग्रही की पुकार है। प्रसाद की संकल्पनात्मक अनुभूति राष्ट्र बेदी पर बलि देने को कटिबद्ध है- “चक्रपालित, संसार में जो सबसे महान है, वह क्या है,?”

त्याग/त्याग का दूसरा नाम महत्व है, प्राणों का त्याग करना वीरता का रहस्य है।”⁶

ध्रुवस्वामिनी नाटक में प्रसाद जी की आत्मसंकलनात्मक अनुभूति नारियों को उनके आत्मबल से परिचित कराती हैं। ध्रुवस्वामिनी के चरित्र के माध्यम से नारी की उन्नति का मार्ग खोजा है।

ध्रुवस्वामिनी का आत्मबल देखिए -

“ यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा,
नारी का गौरव नहीं बचा सकते, तो तुम मुझे बेच भी नहीं सकते।”⁷

अपने कायर पति रामगुप्त को फटकारती है, और कहती है - निर्लज्ज ! मद्यप ! क्लीव ! ओह तो मेरा कोई रक्षक नहीं! नहीं! मैं अपनी रक्षा स्वयं करूंगी।

मैं उपहार में देने की वस्तु शीतलमणि नहीं हूँ. मुझमें रक्त की तरल लालिमा हैं। मेरा हृदय उष्ण है। और उसमें आत्म सम्मान की ज्योति है, उसकी रक्षा मैं ही करूंगी।”⁸

प्रसाद कृत चन्द्रगुप्त नाटक में अलका का सिंहारण से कहना - “मैं भी आर्यावर्त की बालिका हूँ मैं आम्भीक को शक्ति भर पतन से रोकूंगी। तुन गांधार छोड़ दो।” यह है राष्ट्र के प्रति सच्ची संकलनात्मक अनुभूति।

चन्द्रगुप्त नाटक में दार्शनिक सिल्यूकस की पुत्री कार्नेलिया सिन्धु नदी के तट पर भारतीय संगीत में गाती है-

अरूण यह मधुमय देश हमारा
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरल तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरु शिखा मनोहर,

उड़ते खग जिस ओर मुंह किये, समझ नीड़ निज प्यारा।”⁹
चन्द्रगुप्त नाटक में अलका समवेत स्वर में गाती हैं-

“हिमाद्रि तुम श्रृंग से, प्रबुद्ध शुद्ध भारती-स्वयंप्रभा”
समुज्ज्वला/स्वतन्त्रता पुकारती/अमर्त्य वीर पुत्र हो।
दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो/ प्रशस्त पुण्य पंथ है - बड़े चलो, बड़े चलो।” ¹⁰
और यह गीत राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना का सर्वोत्कृष्ट गीत बन गया।

निष्कर्ष- समग्रतः कह सकते हैं कि-

कालजयी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद का समस्त साहित्य आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति का साहित्य है। प्रसाद का मानना था कि भौतिक जीवन ही आनंद का स्रोत है, जिसके लिए चेतना के मार्ग से गुजरना पड़ता है निःसंदेह उनका साहित्य मानवीय विकास और मानसिक विकास दोनों का प्रतीक है। प्रसाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनों आर्य संस्कृति से आप्लावित हैं। उनके समग्र साहित्य में देश का सांस्कृतिक गौरव संरक्षित हैं। मन की समरस स्थिति से साहित्य के द्वारा जन-जन तक सर्व मंगला ज्ञान की गंगा बहाने का सार्थक प्रयास आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद ने किया है।

सन्दर्भ सूची –

1. प्रसाद जयशंकर - कामायनी श्रद्धा सर्ग - पृ. सं. 26
2. प्रसाद जयशंकर कामायनी स्वप्न सर्ग पृ. सं. 77
3. प्रसाद जयशंकर कामायनी वृद्धासर्ग पृ.सं. 25
4. प्रसाद जयशंकर - आंसू पृ. सं. 78
5. प्रसाद जयशंकर – स्कन्दगुप्त पृ. सं. 44
6. प्रसाद जयशंकर – स्कन्दगुप्त पृ. सं. 46
7. प्रसाद जयशंकर - ध्रुवस्वामिनी पृ. सं. – 24
8. प्रसाद जयशंकर - ध्रुवस्वामिनी पृ. सं. 26
9. प्रसाद जयशंकर चन्द्रगुप्त पृ. सं. 83
10. प्रसाद जयशंकर चन्द्रगुप्त पृष्ठ सं. 142

मो.नं.- 9005678285

ईमेल- singhajendra92@gmail.com



खामोशी में चुप्पी स्त्री जीवन : गीतांजलि श्री के 'माई' उपन्यास के संदर्भ में

Anjaly Prakash

Research Scholar, Department of Hindi

Dr.Sreeja G.R

Research Guide (Assistant Professor) ,

Department of Hindi, Nirmala college Muvattupuzha, Ernakulam

'स्त्री' एक ऐसी शब्द है, जिसका अर्थ शब्दों में अभिव्यक्त करना कभी संभव नहीं है। प्रकृति की संतुलन स्त्री- पुरुष के बराबरी पर ही निर्भर होती है। स्त्री के बिना पुरुष का या पुरुष के बिना स्त्री का अस्तित्व संभव नहीं है। समाज में स्त्री- पुरुष का भेदभाव कभी-कभी नज़र आते हैं। स्त्री को दोगुना दर्जे का स्थान देकर पुरुषों को केंद्र में रखकर समाज अपनी सफर जारी रखते हैं। पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्री को तुच्छ मानकर उनसे व्यवहार करते हैं। साहित्य में स्त्री को अनेक रूपों में चित्रित करते हैं। कहा जाता है कि स्त्री देवी है, लेकिन देवी को जितनी आदर के साथ हम देखते हैं ऐसी कोई आत्मीयता की नज़र स्त्री पर नहीं टिकती। स्त्री देवी है, माँ है, पत्नी है आदि अनेक वर्णन स्त्री को दिया जाता है। लेकिन यह केवल साहित्य की पन्नों पर ही सीमित हो जाते हैं। बातों में आदर देते हैं लेकिन व्यवहार में तो वह आदर गायब हो जाते हैं।

स्त्री जीवन एक अनुत्तरित प्रश्न है। कितनी ही गहराई से छानबीन कर लो यह सवाल बनकर सामने खड़े हो जाती है। जन्म से लेकर स्त्री को पराई अमानत की तरह व्यवहार करते हैं। जन्म होने पर वह माँ-बाप की लाडली बिटिया होती है, लेकिन बड़े होते-होते जीवन की सच्चाई एक जादू की तरह उनके नज़रों के सामने आकर खड़े होते हैं। स्त्री जीवन की गहराई शादी के बाद ही समझ जाते हैं। स्त्री जीवन कितनी अजीब होती है न एक परिवार में जन्म लेकर वहाँ रहकर, बड़ा होकर, शादी के वक्त आ जाने पर अपने को छोड़कर पराए घर के सदस्य बन जाते हैं। शादी के बाद एक और दर्जा भी उन्हें प्राप्त होती है, वह है पत्नी का। पत्नी का अर्थ सहधर्मिनी या सहचारी होती है। पति के इच्छानुसार उनके साथ देना ही पत्नी का कर्तव्य होता है। कहा जाता है हर एक पुरुष के विजय के पीछे एक स्त्री का सशक्त हाथ होती है। लेकिन अपने विजय के पीछे चुप्पे वह शक्ति को वह भूल जाते हैं। यही स्त्री जीवन की त्रासदी का कारण बन जाते हैं। स्त्री को समझकर उनके स्त्रीत्व को आदर देकर उनके अस्तित्व को समझना ही पुरुषों का कर्तव्य होता है।

स्त्री को समझना केवल उनके बाह्य रूपों को समझना नहीं है। उनके शरीर को काबू में करना ठीक नहीं है। स्त्री को उनके अंदर की जज्बातों के साथ जानना ही सही है। स्त्री को उनके अस्तित्व समझकर अपनानेवाले पुरुषों को स्त्री परमेश्वर की तरह मानते हैं। लेकिन दुख के बात यह होती है कि, ऐसे परमेश्वर लोग दुनिया में बहुत कम ही मिल पाते हैं।

साहित्य में एक ऐसी जादुई स्पर्श होती है, जो यथार्थ के साथ - साथ काल्पनिकता को भी एक साथ समाहित करते हैं। जो कुछ सच है उसे उसी तरह अंकित करने की क्षमता साहित्य में होती है। साथ ही साथ रचयिता के काल्पनिकता के अंश को भी सफल तरीके से दिखाया जाता है। साहित्य समाज के पूरक होने के कारण समाज के सच्चाई को साहित्य के माध्यम से प्रदर्शित करते हैं। समाज में निहित समस्याओं को उसी तरह रेखांकित करने का श्रेय साहित्य को दिया जाता है। समाज में निहित स्त्री विषय उनके समस्याएं, और दलितों की चेतना, वृद्धों का दर्द आदि विषयों को बहुत ही मार्मिकता के साथ व्यक्त करते हैं। इस तरह के विषयों में एक ज्वलंत समस्या के रूप में स्त्री विमर्श के सामने आती है।

स्त्री विमर्श एक ऐसी अवधारणा है, जो पुरुष सत्ता के विरुद्ध खड़े होकर स्त्री अपनी आवाज़ बुलंद करती है। पुरुषसत्ता के विरुद्ध खड़े होकर स्त्री जब अपनी अस्तित्व की तलाश करने लगी तब से स्त्री विमर्श की शुरुआत मानी जाती है। स्त्री के विद्रोह की भावना यहाँ प्रकट होती है। अपने पैरों पर खड़े होकर वह अपनी शक्ति की मूल तत्व ढूंढने लगते हैं।

धरती के अभिन्न हिस्सा होने पर भी स्त्री को दोयम दर्जे का स्थान प्राप्त है। सृष्टि में स्त्री और पुरुष बराबर के अंश होती है। जिंदगी रूपी लंबी सफर को सही ढंग से आगे ले जाना स्त्री पुरुष संबंधों पर निर्भर होते हैं। स्त्री के हर भावों में विशेष तत्व चुप्पी रहती है। कभी-कभी उनके चुप्पी ही कई सवालों के जवाब बन जाते हैं। हर घटनाओं में आवाज़ उड़ाना वह नहीं चाहती, लेकिन जब वह अपने हद तक आ जाते हैं, तब उन्हें रोक पाना मुश्किल हो जाते हैं। इसी तरह स्त्री के खामोशी में चुप्पी स्त्री जीवन की यथार्थ झलक गीतांजलि श्री के उपन्यास 'माई' में अंकित किया है।

हिंदी साहित्य में अपनी अलग पहचान रखने वाली महत्वपूर्ण लेखिका है गीतांजलि श्री। उनके रचनाओं की विशेषता की वजह से वह साहित्य जगत में जगमगाती रहती है। साहित्य और समाज में नारी जागरण के लिए उनके रचनाओं ने जो प्रेरणा दी है, वह सराहनीय है। स्त्री जीवन की विविध पहलुओं को बहुत ही महत्वपूर्ण तरीके से व्यक्त किया है। उपन्यास के क्षेत्र में उन्होंने 'माई' उपन्यास के साथ ही पदार्पण किया है। गीतांजलि श्री का पहला उपन्यास 'माई' स्त्री जीवन की यथार्थ झलक को दिखाते हैं। मुख्य पात्र 'माई' है। उनके जीवन यथार्थ को पाठकों के समक्ष लेखिका प्रस्तुत करते हैं।

'माई' गीतांजलि श्री का पहला उपन्यास है, जिसका प्रकाशन 1993 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ था। उपन्यास के शीर्षक के समान केंद्र पात्र माई है। उपन्यास के जरिए नारी चेतना के गहराई को व्यक्त करने की कोशिश हुआ है। उपन्यास की शुरु में ही माई के सेहत के बारे में चर्चा करते हैं। माई के तबीयत ठीक नहीं है उनके रीढ़ की हड्डियाँ कमजोर हो गई है। इसी बात को लेकर शुरू होती उपन्यास आगे एक परिवार की इर्द- गिर्द घूमती है। तीन पीढ़ियों की जिंदगी के जरिए पूरे स्त्री समाज की समस्या को दर्शाने की कोशिश हुआ है। दादी, माई और सुनैना इन तीनों के जीवन के विविध घटनाओं को बहुत ही मार्मिक तरीके से व्यक्त करते हैं। दादी पहले पीढ़ी की प्रतिनिधि है, वह परंपरा के पाबंदियों और मूल्यों को साथ लेकर चलती है। दूसरा जो माई है, वह पितृसत्तात्मक समाज का शिकार है। सुनैना आधुनिक पीढ़ी की है उनके अंदर माई को घर के चार दीवारों से मुक्त कराने की आशा है। लेकिन सुनैना को भी घर

परिवार में पहले से लेकर भेदभाव का सामना करना पड़ता था। उनके परिवार तो एक पितृसत्ता के प्रतिरूप ही था। दादा हुकुम चलाते हैं बाकी लोग उसे बिना सवाल किए मान बैठे थे। ऐसे ही एक लंबी परंपरा समाज के आईना बनकर सामने आती है। स्त्री हूँ इसी कारण से सुनैना को सुबोध की तरह समान अधिकार प्राप्त नहीं था। क्षेत्र कोई भी हो लेकिन वहाँ केवल सुबोध की आवाज़ की बुलंद होती थी। शिक्षा के क्षेत्र में भेदभाव बहुत ही था। उपन्यास में एक बात इस प्रकार है " हम अंग्रेजी सीख जाए उसके दादा पक्ष में थे। दादा ने ही सुबोध को अंग्रेजी ऑफिसर बना पाने के अरमान से बोर्डिंग स्कूल भेजा जहाँ कई टीचर असली अंग्रेज थे। वहाँ से पहली बार सुबोध लौटा तो हिंदी काफी काफी भूल सा गया। खाने में भिंडी पड़ोसी गयी तो उसे याद न आके दे की उसे भिंडी कहते हैं - वो वो...वो...दो...। गूगों की तरह इशारा करे। माई हँस पड़ी मजे में।

मुझे भी दादा ने ही शहर के मिशन स्कूल में भर्ती कराया था। जिसका नाम हमारे गरम-गरम मुल्क में 'सनी साइड कॉन्वेंट' था। दादा चाहते थे मैं अंग्रेजी सीख जाऊँ। पर बोलूँ नहीं हिंदी में भी।¹

यह बातें तो सब कुछ कहती है। सुबोध की तरह सुनैना अंग्रेजी सीखने में किसी को कोई दिक्कत नहीं है, लेकिन इसका प्रयोग कभी न करें यही वह चाहती है। इस बात पर अगर गौर से विचार करें तो ऐसा भी लगेगा, स्त्री जब दायरे से बाहर आ जाएंगे तो वह अपने हक्क के लिए लड़ने की क्षमता प्राप्त करेंगे वह क्षमता की आग को पुरुष कभी सह नहीं कर पाएंगे। सच तो यह है कि, स्त्री अगर अपने परम बिंदु पर आ जाए तो उसे रोकने की शक्ति पुरुष वर्ग के अंदर नहीं है। इसलिए ही वह स्त्री को दमन करके रखते हैं। स्त्री जीवन की गहराई तो बहुत होती है।

दादी और माई कभी भी अपने पति के खिलाफ आवाज़ बुलंद नहीं करती है। लेकिन सुनैना तो इसके खिलाफ है, वह अपने माई को पारिवारिक कैद से मुक्त करना चाहती है। स्त्री के जीवन कितनी दर्द भरी घटनाओं से आगे जाती है यह उपन्यास में दिखाया गया है।

दादा के आदेशों का पालन करने वाली दादी, पिता के हुकुम का पालन करने वाली माई इन दोनों के जीवन को देखकर ही सुनैना और सुबोध का जीवन सफर जारी हुआ था। इसलिए ही वह एक फैसला लेने में सक्षम हो गई कि उसे किस तरह की जिंदगी जीना है। सुनैना कभी-कभी कहती रहती है कि उसे माई जैसी नहीं बनना। उनके तरह सब सहन नहीं करना है। यह फैसला तो अपने माई के जिंदगी से ही सीखा था। उपन्यास में आधुनिकता की राह तो सुनैना ही नहीं उनके साथ सुबोध भी चाहती है। सुबोध पूर्ण रूप से सुनैना को एक आज़ाद पक्षी की तरह देखते हैं वह असल में अपने पारिवारिक ढाँचे के ऊपर उठकर सोचते हैं। उनके ऊँचे मन में यह चाह हमेशा रहा है कि सुनैना कभी यह पारंपरिक जंजीरों में न फंसे। इसलिए विलायत जाते वक्त भी उसे साथ ले जाना चाहती है। वह इसलिए कि वह दूसरे माई को नहीं चाहती। माई की जैसी जिंदगी आगे किसी को ना मिले यही उनकी कामना रही थी। इसी कामना को पूरा करने के लिए ही वह माई को अपने साथ ले जाना चाहती थी, लेकिन उपन्यास के अंत में तो यह न सफल जान पड़ते हैं। ले जाने के लिए केवल उनकी यादें ही रह जाते हैं। यादों को काबू में करके वे चले जाते हैं। घर में तो अभी तक पुरुषों के फैसले ही होती थी। माई को ले जाने की बात को लेकर बात होती थी, तब तो वह अपनी सहमति नहीं देती थी। उसे केवल परिवार के कामों में व्यस्त रहना पसंद था। यह एक लंबी सफर के कारण हुआ। काम करते-करते उसे लगने लगा

¹ गीतांजलि श्री - माई - पृ सं 36

था कि यह काम ही उनके व्यक्तित्व की हस्तार है। उसके अलावा उसे कुछ कर दिखाना नहीं है। यही उनके जीवन की मकसद है। यह विचार उनके मन में स्थिर हो गई। इसलिए वह अपनी जिंदगी से बिल्कुल खुश है। आज़ादी ना चाहने वाली एक कैदी की तरह वह अपनी जिंदगी जीते हैं। वह शिक्षित होने के बावजूद भी वह सब कुछ सहन करते हैं। पति तो उसे सबके सामने चिढ़ाते रहते हैं लेकिन वह कुछ नहीं कहती। सब कुछ सुनकर चुप्प रह जाते हैं। यह चुप्पी में भी कई बातें छिपी होती है, लेकिन इसका मतलब कोई समझ नहीं पाती है। सहनता की प्रतिरूप बनकर माई उभर आते हैं। उपन्यास के अंत में उसके अनुपस्थिति ही दिख जाती है। बहुत सी लोगों को लेकर शुरू हुई उपन्यास अंत में आकर केवल सुनैना और सुबोध से अंत होती है। इन दोनों के अलावा सभी लोगों गुजर जाते हैं। बिल्कुल अंत में माई के देहांत हो जाती है। उसी से दोनों बहुत दुखी हो जाती है। उपन्यास के अंत में एक वाक्य है - "माई जलती रही, अंदर खींचकर आग को। पर समझे, माई की भी आग थी, खोखल नहीं, आग थी ? जिसका दूसरों के लिए जलना हमने देखा पर जिसका अपना जलना, अपने लिए, हमने नहीं देखा"।²

यह एक सच्चाई है। स्त्री हमेशा दूसरों के लिए जलते रहते हैं। अपना परवाह किए बिना वह जलती रहती है। अपनों को किसी भी तरह की तकलीफ आ जाए तो वह सहन नहीं कर पाते हैं। तब उनके अंदर स्थित ममता जाग उठते हैं। इसी वजह से वह युद्ध करती रहती है। आत्मदन के लिए भी वह राजी हो जाते हैं। माई तो स्त्री समूह की प्रतिरूप है, जो अपनों के लिए जान तक कुर्बान देने के लिए तैयार हो जाते हैं। माई की जिंदगी भी भिन्न नहीं था दादा- दादी और पति साथ ही साथ अपने बच्चे इन सभी के इर्द-गिर्द घूमती थी उनकी जिंदगी। माई के बिना उस परिवार का चित्रण करना नामुमकिन था। हमारे समाज में भी बहुत ही ऐसे ही कई माई है जो इस तरह कुर्बानी देती रहती है।

माई भी एक समय किसी का बेटी था, उन लोगों ने माई को यानी अपनी प्यारी बेटी को बहुत ही प्यार से पाला होगा। उनके अंदर भी अपनी बेटी के सुंदर भविष्य की कामना रही होगी, इसलिए ही उन्हें अच्छा शिक्षा देकर वे लोग बड़ा किया था। लेकिन उल्टा ही हुआ। शादी के बंधन से माई की ख्वाहिश तो समाप्त हो जाती है। अपनी शादीशुदा जिंदगी से वे जो कुछ सोचा था इसके विपरीत ही घटित हुआ। अपने माँ- बाप कैसे उसे पालते थे, वैसे पालन पोषण की कामना करके ही माई अपने पति के घर में गृह प्रवेश किया होगा। लेकिन यह कामना केवल सपना ही रह गई। जिम्मेदारियों के गठर कंधों पर आ गई इसके अलावा कुछ भी तो नहीं हुआ। शादी के बाद पत्नी, बहू, माँ आदि किरदारों को एक साथ निभाना पड़ता है। वे सब कुछ सहन करके इन सभी भूमिकाएं अच्छे से निभाती थी। स्त्री है ना इसलिए यह कार्य आसानी से संपन्न हो पाती थी। हर साधारण परिवार के स्त्री की हालत ऐसा ही है। यह चाहते हुए भी अपनी संघर्षों में कभी पराजित हो जाती है। शिक्षित स्त्री होने पर भी वह अपनी संघर्षों से सदा जूझते रहते हैं। उसे यह लड़ाई लड़ने की हिम्मत ही नहीं थी। अंदर मन में वह सक्षम थी लेकिन उस संघर्ष की आग को बाहर लाने की क्षमता उससे नष्ट हो चुकी थी, या उनके चारों ओर स्थित पितृसत्ता उसके क्षमता को लूट लेती थी। इसलिए माई केवल पन्नों में केंद्रित नहीं पूरे समाज में फैले हुए हैं। बहुत ही ऐसी माई है हमारे नज़रों के सामने। कुछ लोग लड़ते हैं और कुछ लोग चुप रह जाते हैं। चुप रहने वालों की जिंदगी वही खत्म हो जाती है। लड़ने वालों की जिंदगी भविष्य के पन्नों में संग्रहित भी होती है।

भारतीय समाज में स्थित साधारण एक परिवार की यथार्थ चित्रण "माई" के द्वारा प्रदर्शित है। जिस तरह जिम्मेदारियों को संभालते - संभालते अपने जीवन माई आगे चलती थी ऐसा ही चित्रण समाज में मौजूद कई परिवारों में दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है कि, गीतांजलि जी ने अपने कल्पना के बल पर नहीं यथार्थता के सहारे ही कहानी को

² गीतांजलि श्री - माई - पृ. सं 152

लिखा है। यह केवल माई की ही नहीं पूरे स्त्रीत्व की कहानी है। अपनों को अपना मानकर जीने वाले स्त्री जनों की जिंदगी यहाँ देखने लायक है।

एक रचना की सफलता तो पाठकों के बीच की लोकप्रियता पर निर्भर होती है। लोकप्रिय रचना होने के लिए रचना के अंदर एक तरह की जादू की अंश होनी चाहिए। गीतांजलि श्री की उपन्यास 'माई' में एक ऐसी ही जादू रहती है। इसी कारण से माई रचना एक साहित्यिक विधा ना होकर सच्चाई हो जाती है। पाठक और रचना के बीच साधारणीकरण हो जाते हैं, यही रचनाकार का विजय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. माई – गीतांजलि श्री – राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली – 1993
2. स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ – रेखा कस्तवार – राजकमल प्रकाशन ,नई दिल्ली – 2006

Post office- kalady ,pin code 683574

Mob No. 6235862871



Agricultural Productivity and Regional Imbalances in Brazil

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

Abstract

Brazil stands as a global agricultural powerhouse with vast biodiversity and significant production of commodities such as soybeans, coffee, sugarcane, beef, and poultry. However, its agricultural productivity is marked by stark regional disparities that reflect historical, economic, and environmental factors. Recent studies reveal that productivity growth in Brazil's agriculture sector is unevenly distributed across regions. The Center-West and Matopiba regions exhibit higher soybean yield growth rates (around 0.64–0.65 bushels per year), driven by favorable climate, larger farm sizes, and technological adoption. In contrast, the South and Northeast regions face slower productivity gains, often constrained by climatic variability and structural inequalities. Total Factor Productivity (TFP) analyses from 1995 to 2009 show that states with higher productivity are predominantly in wealthier southern and southeastern regions, while poorer northern and northeastern states lag behind, perpetuating economic and social inequalities. This pattern aligns with the historical agrarian structures and rural property relations that have shaped Brazil's uneven development. Public policy initiatives, such as the National Productive Forests Program (PNFP), aim to integrate regenerative agriculture and agroforestry to boost productivity while restoring degraded lands, particularly focusing on family farmers and marginalized regions. These efforts are aligned with Brazil's broader environmental and rural development goals, including Planaveg 2.0. Climate change poses additional challenges, disproportionately affecting semi-arid and less developed regions through droughts and heatwaves, threatening food security and agricultural sustainability. Sustainable agricultural practices and targeted productivity improvements in these vulnerable biomes could reduce regional disparities and foster inclusive rural growth.

Keywords: Brazil, agricultural productivity, regional disparities, soybean yields, family farming, Total Factor Productivity (TFP), regenerative agriculture, agroforestry, climate change, rural development, economic complexity, Planaveg 2.0, National Productive Forests Program (PNFP), Matopiba, Center-West, Northeast region, sustainable agriculture, land productivity, rural inequality.

Introduction

Brazil stands as a global agricultural powerhouse, leading in production of soybeans, coffee, sugarcane, beef, and poultry, with agriculture contributing about 6.8% of its GDP and employing a large rural workforce. Over the past five decades, Brazil's agricultural productivity, especially soybean yields, has grown rapidly—matching and even surpassing U.S. yield growth rates—with an average annual increase of 0.61 bushels per acre since 1974. However, this productivity growth is unevenly distributed across regions: the Center-West (including Mato Grosso) leads with the highest yield increases due to favorable climate, larger farms, and better technology adoption, while the South shows slower growth linked to climate variability and smaller farm sizes. The Matopiba region (parts of Tocantins, Maranhão, Piauí, Bahia) is an emerging agricultural frontier with recent yield improvements but still faces challenges related to infrastructure and sustainability. Despite the dynamism of corporate agriculture driving exports, small-scale family farming—responsible for 77% of agricultural production and employing 75% of farm labor—is marked by low economic dynamism, limited access to credit, and high poverty, especially in the semi-arid Northeast. Regional disparities extend beyond productivity to income, education, infrastructure, and access to services, with the South and Southeast regions significantly outperforming the North and Northeast in human development indicators. These persistent inequalities reflect historical, climatic, and policy factors, including fragmented regional development strategies and unequal distribution of rural credit, which favors larger farms in the South over smaller family farms in poorer regions. Climate change exacerbates these challenges, with frequent droughts and heatwaves threatening food security and agricultural sustainability, particularly in vulnerable semi-arid zones. Addressing Brazil's agricultural productivity and regional imbalances requires integrated policies that promote technological adoption, equitable credit access, sustainable practices, and targeted support for marginalized rural communities to ensure inclusive growth and resilience.

Statement of the problems

Regional Productivity Disparities: Research shows that agricultural productivity, measured by Total Factor Productivity (TFP) and economic complexity indexes, varies widely across Brazil's states and biomes. The wealthier South and Southeast regions consistently outperform the poorer North and Northeast, where productivity remains low and growth sluggish. For example, states in the Northeast exhibit some of the lowest TFP levels, reflecting entrenched poverty and limited technological adoption. This gap perpetuates regional inequality and limits national agricultural potential.

Unequal Access to Resources and Credit: Family farmers, who represent 75% of rural properties and produce 77% of agricultural output, face severe disparities in access to credit and financial services. Only about 15% of family farmers obtain credit, with concentration skewed toward larger properties in the South. Under the main rural credit program (PRONAF), average credit per hectare in the South is eighteen times higher than in the North. This unequal distribution restricts smallholder farmers' ability to modernize, adopt sustainable practices, and increase productivity, especially in vulnerable regions.

Climatic and Environmental Challenges: Brazil's diverse biomes face increasing climate risks such as droughts, heatwaves, and extreme weather events, disproportionately affecting less developed regions like the semi-arid Northeast. These climatic stresses threaten soil quality, crop yields, and food security, exacerbating regional disparities. Moreover, deforestation and land degradation remain critical issues, particularly in frontier agricultural zones, complicating efforts to balance productivity with environmental sustainability.

Technological and Structural Constraints: While some regions, notably the Center-West and Matopiba, have seen robust yield improvements driven by technology adoption and favorable climate, others lag due to smaller farm sizes, limited infrastructure, and lower investment capacity. The soybean sector, a key driver of Brazil's agricultural exports, shows strong growth in select regions but is not representative of the entire country's agricultural landscape.

Objectives

- Understand and quantify regional productivity gaps
- Analyze the drivers of regional imbalances
- Promote sustainable productivity growth tailored to regional contexts
- Link regional agricultural productivity to broader economic development
- Address social and gender inequalities in agricultural productivity

Literature Review

- Brazil ranks as the world's fourth largest agricultural producer by land use and output value (FAO, 2017).
- The agricultural sector is highly heterogeneous: large, capital-intensive export farms coexist with numerous small, labor-intensive family farms.
- In 2006, 36% of farms were under 5 hectares but contributed only 7% of output value; conversely, 2% of farms over 500 hectares produced 36% of output (Helfand et al., 2018).
- Total Factor Productivity (TFP) is the preferred measure to capture productivity differences, accounting for labor, capital, and inputs beyond simple yield metrics.
- Larger farms generally exhibit higher crop yields and land productivity, especially for key crops like maize and soybeans (Fisher et al., 2016; Filho & Vian, 2016).
- Helfand et al. (2018) show that TFP growth varies by farm size, with large farms benefiting from scale economies and small farms constrained by market imperfections.
- Productivity levels and growth rates differ markedly across Brazil's 27 states, mirroring broader regional economic inequalities (Schettini & Azzoni, 2013).
- High-productivity states tend to sustain higher growth, suggesting widening regional productivity gaps over time.
- **Methodology**
- **Economic Complexity Approach:** Alexandre de Queiroz Stein et al. (2024) apply economic complexity metrics to agriculture, calculating Product Complexity Index for agricultural products (PCI-Argo) and Economic Complexity Index for regions (ECI-Argo) using detailed census data. This method links higher complexity scores with greater productivity, education, income, and human development, revealing an inverted U-shaped relationship between complexity and productivity that informs targeted regional policies.
- **Spatial Decomposition of Total Factor Productivity (TFP):** Felema and Spolador (2023) use a spatial autoregressive frontier model (SAR) on panel data from 510 geographic regions across census years (1995/96, 2006, 2017) to decompose TFP growth into direct and spillover effects. Their methodology incorporates spatial lags to capture productivity diffusion across neighboring regions, identifying key drivers such as rural credit, soil correction, no-till farming, and technical assistance. This spatial econometric approach highlights temporal and geographic correlations in productivity growth and regional spillovers.
- **Biome-based Computable General Equilibrium (CGE) Modeling:** Campos et al. (2025) develop TERM-Biomass, a CGE model tailored to Brazil's diverse biomes, to simulate the economic and environmental impacts of hypothetical 1% productivity

increases in large-scale and family farming. This biome-specific modeling integrates climate change considerations and sustainable agricultural practices, allowing assessment of regional inequality reduction potential and sectoral ripple effects, especially in cattle and soybean production.

- **Value Chain and Regional Integration Analysis:** Sanguinet et al. (2023) employ input-output models to trace value-added flows within and across Brazilian regions, linking agricultural production to national and global value chains. Their methodology identifies spatial connectivity patterns, showing that advanced regions (e.g., Southeast) benefit from integration at multiple scales, while peripheral regions supply raw materials, underscoring the importance of regional linkages for development and productivity.
- **Data Sources and Survey Integration:** These methodologies rely on comprehensive datasets including the Brazilian Agricultural Census (IBGE), regional economic statistics, and farmer surveys such as McKinsey's Global Farmer Insights (2024), which provide granular data on productivity practices, technology adoption, and regional challenges. Combining econometric, spatial, and modeling techniques with primary survey data ensures robust, multidimensional analysis of productivity and its regional imbalances.

Conclusions

Brazil has emerged as a global leader in agricultural productivity, driven by technological adoption, sustainable practices, and large-scale commercial farming, particularly in soy and cattle sectors. Between 1980 and 2023, productivity gains transformed Brazil from a food importer to a major exporter, with notable advances in regenerative agriculture and AgTech adoption. Despite national success, significant regional disparities persist. The South and Southeast regions enjoy higher productivity, better infrastructure, and greater capital investment, while the North and West regions lag behind due to limited access to technology, infrastructure, and human capital. These imbalances reflect broader socio-economic inequalities in income, education, and public services. Climate change poses a growing threat to Brazil's agricultural productivity, especially in the Cerrado and Amazon frontier regions that account for half the country's output. Increasing temperatures, droughts, and shifting rainfall patterns are reducing the suitability of vast agricultural lands, with projections indicating that by 2060 up to 74% of these lands may fall outside optimal climatic conditions. This jeopardizes double-cropping practices and pressures farmers toward further deforestation, undermining sustainability.

References

- Brazil stands as a global agricultural powerhouse, ranking among the top producers and exporters worldwide, with crop production reaching a record 308 million metric tons in 2021 (USDA, 2022). Its agriculture sector contributes about 8% to GDP directly and up to 29% when including processing and distribution (USDA, 2022).
- Despite this success, Brazil exhibits significant regional disparities in agricultural productivity and development. The South and Southeast regions are highly productive, benefiting from better infrastructure, technology adoption, and capital investment, while the North and Northeast lag behind due to structural challenges (World Bank, 2017; Policy Center).
- The World Bank's 2017 flagship report on Brazil's agricultural productivity growth highlights that productivity gains are unevenly distributed, with small farms in the South and Southeast showing higher capital use and technical change compared to farms in less developed regions. This gap reflects differences in access to natural, human, and physical capital (Arias et al., 2017).

- A biome-based analysis by Campos et al. (2025) emphasizes that productivity improvements in large-scale and family farming vary across Brazil's diverse ecological zones. The study suggests that targeted public policies promoting sustainable agricultural practices could boost productivity in less developed biomes, potentially reducing regional inequalities.
- The Southeast region, despite its agricultural strength, faces limitations such as land constraints, environmental regulations, and future development challenges that may slow growth unless addressed by innovation and policy reforms (de Castro, 2014).
- Brazil's agricultural transformation is driven by factors including research-led yield improvements, expansion of arable land, and the unique ability to harvest multiple crops annually on the same land. Soybean cultivation, concentrated in the Center-West and South, is a key driver of export growth and economic influence (USDA, 2022; Campos et al., 2025).



पौड़ी जनपद-दुगड़डा ब्लॉक के अन्तर्गत जैविक कृषि का उत्पादन एवं अर्थव्यवस्था के नये आयाम

डॉ० चन्द्रप्रभा कण्डवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर (भूगोल विभाग)

रा० स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

प्रस्तावना-

खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता रसायनों के कारण संदूषण गंभीर स्वास्थ्य खतरों और पर्यावरण मुद्दों पर बढ़ती चिंताओं के कारण सुरक्षित और स्वस्थ भोजन की उपभोक्ता मांग में वृद्धि हुई है। इस बढ़ती मांग ने कृषि की एक नई धारा को जन्म दिया है जिसे जैविक कृषि के रूप में जाना जाता है।

जैविक कृषि एक कृषि प्रणाली है जो प्राकृतिक प्रक्रियाओं, जैव विविधता और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल चक्रों के उपयोग पर जोर देती है और रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों (जी०एम०ओ०) जैसे सिंथेटिक आदानों के उपयोग को कम करती है। इसके बजाय, यह पारिस्थितिक सिद्धान्तों और प्रथाओं जैसे फसले चक्रण, हरी खाद, खाद बनाना, जैविक कीट नियंत्रण और जैविक उर्वरकों का उपयोग करके मृदा स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र संतुलन बनाए रखने पर निर्भर करती है। जैविक कृषि का लक्ष्य पारिस्थितिक तंत्रों, जानवरों या लोगों पर कम से कम नकारात्मक प्रभाव डालते हुए भोजन का उत्पादन करना है। (एफ०ए०ओ० और डब्ल्यू०एच०ओ० 2007)

जैविक खेती की पूरी विधा प्राकृतिक प्रक्रियाओं के सामंजस्य व उनके एक दूसरे पर प्रभाव की जानकारी पर आधारित होने के कारण इससे न तो मृदा जनित तत्वों का दोहन होता है और न ही मृदा की उर्वरता का हास होता है जैविक खेती की पूरी प्रक्रिया में मिट्टी एक जीवंत अंश है तथा मृदा में रहने वाले सभी जीव रूप इसकी उर्वरता के प्रमुख अंग हैं और सतत उर्वरता संरक्षण में योगदान करते हैं। अमेरिकी कृषि विभाग (यू०एस०डी०ए०) के राष्ट्रीय जैविक मानक बोर्ड के अनुसार, 'जैविक' शब्द की अधिकारिक परिभाषा इस प्रकार है-

(लिबरहार्ट, 2003): "एक पारिस्थितिक उत्पादन प्रबंधन प्रणाली जो जैव विविधता, जैविक चक्रों और मृदा जैविक गतिविध को बढ़ावा देती हैं और बढ़ाती हैं। यह कृषि-बाह्य आदानों के न्यूनतम उपयोग और प्रबंधन प्रथाओं पर आधारित है जो पारिस्थितिक सामंजस्य को बहाल, बनाए और बढ़ाती हैं।"

भारत का ध्यान जैविक कृषि की ओर तब केन्द्रित हुआ है जब वर्ष 2004-05 में राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना (एन०पी०ओ०एफ०) का शुभारंभ किया गया। वर्ष 2004-05 के अन्तर्गत जैविक कृषि का क्षेत्रफल 42000 हेक्टेयर था, जो कि अब वित्तीय वर्ष 2024-25 में बढ़कर 15 हेक्टेयर हो गया है। राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना (एन०पी०ओ०एफ०), राष्ट्रीय बागवानी मिशन (एन०एफ०एफ०), राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आर०के०वी०वाई०), परम्परागत कृषि विकास योजना (पी०के०वी०वाई०), नेशनल मिशन ऑफ नेचुरल फार्मिंग

के अन्तर्गत जैविक कृषि को भारत में प्रोत्साहन मिल रहा है। नौ राज्यों ने जैविक कृषि नीतियाँ तैयार की हैं, जिनमें से उत्तराखण्ड, नागालैंड, सिक्किम और मिजोरम ने 100 प्रतिशत जैविक बनने की अपनी मंशा व्यक्त की है। हालांकि, उत्तराखण्ड और सिक्किम ने स्वयं को “जैविक राज्य” घोषित किया है। सिक्किम भारत का पहला पूर्ण जैविक राज्य है। इसे 2016 में पूर्ण जैविक प्रदेश घोषित किया गया था। उत्तराखण्ड ने जैविक कृषि अधिनियम-2019 पारित करके खुद को जैविक राज्य बनाने की दिशा में एक अहम पहल की है।

वर्तमान में, उत्तराखण्ड में केन्द्र पोषित योजनाओं के अंतर्गत जैविक कृषि कार्यक्रमों को संचालन किया जा रहा है, जिनमें राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आर0के0वी0वाई0), परम्परागत कृषि विकास योजना (पी0के0वी0वाई0), स्वच्छता एक्शन प्लान, नमामि गंगे क्लीन अभियान, नेशनल मिशन ओन नेचुरल फार्मिंग प्रमुख है। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत कृषि विभाग एवं उत्तराखण्ड जैविक उत्पाद परिषद द्वारा थर्ड पार्टी प्रमाणीकरण के अंतर्गत जैविक प्रमाणीकरण किया जा रहा है।

पी0के0वाई0 योजना के अंतर्गत प्रथम एवं द्वितीय चरण में 3900 क्लस्टरों में कार्यक्रम संचालित क्या किया गया जिसमें उत्तराखण्ड कृषि विभाग, उत्तराखण्ड जैविक उत्पाद परिषद, उद्यान सुगंध पौध केन्द्र एवं रेशम विभाग द्वारा किया जा रहा है।

Uttarakhand Organic Commodities Board (UOCB) का गठन 19 मई, 2003 को किया गया, यह उत्तराखण्ड की एक नोडल एजेंसी है जो जैविक खेती पर ध्यान केन्द्रित करती है और उसे बढ़ावा देती है। यू0ओ0सी0बी0 कृषि और बागवानी, औषधीय सुगंधित पौधों एवं जड़ी-बूटियों और पशुपालन जैसे संबंध क्षेत्रों में जैविक गतिविधियों को बढ़ावा तथा राज्य में सतत् ग्रामीण विकास को प्राप्त करने पर समान और स्पष्ट रूप से जोर देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

उद्देश्य—

उत्तम गुणवत्ता युक्त, रसायन-मुक्त और पोषक तत्व युक्त खाद्य पदार्थों, विशेषकर स्थानीय फसलों का उत्पादन बढ़ाना। प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा, जल और पर्यावरण का समुचित उपयोग एवं संरक्षण सुनिश्चित करना। मृदा के स्वास्थ्य और उसकी दीर्घकालीन उर्वरता को बनाए रखना, जिससे भूमि कटाव रोका जा सके। पौधों एवं पशुधन का उपयोग कर खेत के भीतर जैविक चक्र को गति प्रदान करना और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना। रासायनिक कृषि तकनीकों से होने वाले सभी प्रकार के प्रदूषणों से पर्यावरण को संरक्षित करना। कृषकों को सुरक्षित वातावरण के साथ-साथ कम लागत पर अधिकतम और सतत् उत्पादन प्राप्त कराना।

विधितंत्र—

यह शोध पत्र स्वयं सर्वेक्षण एवं विभिन्न स्रोतों से एकत्रित द्वितीयक आंकाड़ों के आधार पर शोध पत्र में उत्तराखण्ड कृषि विभाग, उत्तराखण्ड जैविक कमोडिटी बोर्ड, और परम्परागत कृषि विकास योजना जैसे सरकारी निकायों के आधिकारिक प्रकाशनों का संकलन किया गया है, साथ ही पत्रतीय कृषि, जैविक उत्पादन और सरकारी हस्तक्षेपों के मूल्यांकन से संबंधित शोध पत्रों का गहन अध्ययन और विश्लेषण किया गया है।

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि—

दुगड्डा पौड़ी गढ़वाल जिले का एक प्रमुख विकास खण्ड है, जो भौगोलिक रूप से शिवालिक श्रेणी और उत्तर भारत के भाबर क्षेत्रों के मध्य एक संक्रमणीय क्षेत्र (Transitional Zone) के रूप में कार्य करता है। यह विशिष्ट अवस्थिति कृषि नवाचारों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। खोह नदी की उपस्थिति इस क्षेत्र में सिंचाई का स्थायी आधार सुनिश्चित करती है। यह सतत् जलीय आपूर्ति, यहां की अनुकूल उप-समशीतोष्ण जलवायु के साथ मिलकर, जैविक कृषि हेतु एक मजबूत पारिस्थितिक आधार निर्मित करती है।

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि कार्यक्रम विभिन्न स्तरों पर सक्रिय रूप से चलाए जा रहे हैं जो क्षेत्र के किसानों और अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रहे हैं। इस क्षेत्र में केन्द्र व राज्य पोषित योजनाओं के अंतर्गत जैविक कृषि को बढ़ावा दिया जा रहा है। जिनमें से राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, पारम्परिक कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय कृषि प्रसार एवं प्रौद्योगिकी मिशन आदि कुछ महत्वपूर्ण योजनाएं हैं।

इन सभी परियोजनाओं के अंतर्गत वर्मी कम्पोस्ट का निर्माण व प्रशिक्षण, विजिट, जैविक उत्पादों का विपणन एवं प्रमाणीकरण जैसे कार्य किये जा रहे हैं, साथ-साथ ही यहां पर पारम्परिक कृषि विकास योजना के अन्तर्गत पी0जी0एस0 प्रमाणीकरण, जैविक खेती हेतु भूमि का जैविक रूप में परिवर्तन, बायोलोजिकल नाइट्रोजन हार्वेस्ट प्लांटिंग, प्राकृतिक कीट नियंत्रण, जैविक उत्पादों की पैकिंग, तरल बायोपेस्टिसाइड की व्यवस्था आदि मदों में कार्य सम्पादित किये जा रहे हैं।

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि आर्थिक रूप से रामणी, पुलिण्डा, बलि, मथांगा आदि गांव व्यावसायिक रूप से अपना रहे हैं। जैविक कृषि जिनमें प्रमुख मडुवा, झंगोरा, भांग खाने वाली भट्ट, सोयाबीन, खीरा, मूला, अरबी, गिंटी, पालक, राई एवं बरसाती साग सब्जी का उत्पादन व्यावसायिक रूप से किया जा रहा है। स्थानीय किसानों की आर्थिक संवहनीयता को प्रत्यक्षतः बढ़ाती है। बाजार में रासायनिक मुक्त उत्पादों पर प्राप्त होने वाला मूल्य, किसानों की शुद्ध आय में महत्वपूर्ण वृद्धि करता है। साथ ही, परम्परागत कृषि विकास योजना (पी0के0वी0वाई0) जैस कार्यक्रमों के माध्यम से क्लस्टर आधारित कार्यप्रणाली अपनाने से, बाह्य सामग्री जैसे महंगे उर्वरकों पर निर्भरता कम हुई है, जिससे उत्पादन लागत प्रभावी ढंग से नियंत्रित होती है। कोटद्वार जैसे वाणिज्यिक केन्द्र से निकटता किसानों को सीधे बाजार से जुड़कर अपने उत्पाद बेचने की सुविधा प्रदान करती है।

जैविक कृषि ने स्थानीय समुदाय और पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव डाला है। किसान समूहों के सामूहिक प्रयास और संस्थागत विकास में सामाजिक पूंजी का निर्माण हुआ है, जिससे वे प्रमाणन और सहकारी विपणन जैसे जटिल कार्यों को सफलतापूर्वक संचालित कर पाते हैं। इस प्रणाली में महिला किसानों की सक्रिय भागीदारी उनके आर्थिक और निर्णय लेने के सशक्तिकरण में सहायक है। पर्यावरणीय मोर्चे पर, जैविक पद्धतियों ने मृदा स्वास्थ्य और जल-प्रदूषण नियंत्रण में महत्वपूर्ण सुधार किया है, जिससे क्षेत्र की दीर्घकालिक पारिस्थितिकीय संवहनीयता सुनिश्चित हुई है। इसके अतिरिक्त, कृषि की लाभप्रदता बढ़ने से ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं के लिए व्यवहार्य आजीविका के अवसर सृजित हुए हैं जो पलायन को रोकने में सहायक सिद्ध हो रहा है।

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि के अन्तर्गत खरीफ की फसलों में मंडवा, झंगोरा, धान और मक्का आदि का उत्पादन किया जा रहा है। इसी के साथ रवि के फसलों में गेहूं, जौ, सरसों का उत्पादन किया जा रहा है। पारम्परिक दलहन एवं तिलहन में उदड़, गहत, मूसर, काला भट्टा, आलसी और तिल हैं। इस क्षेत्र में पारम्परिक नकदी फसलों और बागवानी में अदरक एवं हल्दी का उत्पादन किया जा रहा है साथ ही साथ सब्जियों में आलू, फ्रेंच बीन, प्याज, मूला प्रमुख हैं। फलों में आड़ू, पुलम, आम, लीची का अत्यधिक उत्पादन किया जा रहा है।

दुगड्डा ब्लॉक के अन्तर्गत कोटद्वार नगर के निकट जिनकी दूरी लगभग 30 कि०मी० से 50 कि०मी० के दायरे में रामणी, पुलिण्डा बलि, कांडा दैनिक जरूरत की सब्जी, साग, भांग, जख्या, तिल, गहत, भट्ट, खीरा, ककड़ी स्थानीय अन्य खाद्य सामग्री कोटद्वार में लाकर व्यापार करते हैं तथा उपरोक्त चीजों की मांग अधिक होने के कारण मनमाने कीमत पर बेचते हैं। जैविक साग-सब्जी की मांग नगर में अधिक है जिससे अब दुगड्डा ब्लॉक के अन्तर्गत अधिकांश कृषि भूमि में जैविक कृषि को महत्व दिया जा रहा है तथा ग्रामीण किसान आर्थिक रूप से सक्षम हो रहा है।

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि को बढ़ावा देने के सुझाव:-

दुगड्डा ब्लॉक में जैविक कृषि को बढ़ावा देने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्य किए जाने चाहिए जिससे कि यहां के छोटे एवं सीमान्त कृषकों को भी लाभ मिल सके। जैविक कृषि बढ़ाने के लिए निम्नलिखित कार्य को किया जाना चाहिए-

1. इस क्षेत्र में स्थानीय खाद्य केन्द्रों या क्लस्टर से गोबर खाद (वर्मीकम्पोस्ट और नाडेप) बनाने की छोटी यूनिट लगाई जानी चाहिए।
2. किसानों को जीवामृत और अन्य जैविक कीटनाशक जैसे नीम का अर्क को बनाने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे कि कृषक स्वयं जैविक कीटनाशक को अपने घर में ही बना सकें।

3. जैविक खेती का प्रमाणीकरण लेने की प्रक्रिया को सरल और सस्ता बनाया जा सके, जिससे कि कृषक आसानी से प्रमाण पत्र को हासिल कर सके।
4. दुगड़डा ब्लॉक में कोटद्वार नगर में एक जैविक स्टोर खोला जाना चाहिए जहां क्षेत्र के किसानों का 'पहाड़ी जैविक उत्पाद' बेचा जाना चाहिए, साथ ही जैविक उत्पादों की पैकिंग और ब्रांडिंग अच्छी होनी चाहिए ताकि उन्हें अच्छा दाम मिल सके।
5. किसान समूहों को बड़े शहरों के खरीदारों या ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से सीधे जोड़ा जाए ताकि किसानों को पूरा दाम मिल सके।
6. महिला स्वयं सहायता समूहों को जैविक खाद बनाने, पैकेजिंग और उत्पादों की गुणवत्ता जांचने का मुख्य काम सौंपा जाना चाहिए जिसके कि क्षेत्र महिलाओं को विकास की मुख्य धारा से जुड़ने का मौका मिलेगा, तथा इससे महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिलेगा।
7. ग्रामीण युवाओं को जैविक खेती को एक बिजनेस के तौर पर अपनाने के लिए आसान लोन और ट्रेनिंग दी जाए, जिससे उन्हें गांव छोड़कर शहर न जाना पड़े।

संदर्भ सूची-

1. Lakhera Girish and Mishra Amar Kumar : International Journal of Advanced Research in Engineering and Technology (UARET) Volume 11, Issue 5, May 2020, pp. 978-983, Article ID: UARET_11_05_106
2. Singh Suresh and Gupta J.P. : Organic Agriculture in Uttarakhand: Progress , Potential, and Policy Perspectives (2024)
3. Pankaj Rawat: Population exodus in Pauri Garhwal : Out- migration raising questions on Existence of hilly state Uttarakhand International Journal of Academic Research and Development (2017)
4. Meena, V.S., & Sharma, S: Organic farming : a case study of Uttarakhand organic commodity Board, Journal of Industrial Pollution Control, 31(2), 201-206. (2015)
5. Shaila Seshia Galvin Organic Designs and Agrarian Practice in Uttarakhand, India
6. <https://agriculture.uk.gov.in/hi/scheme/>
7. <https://uocb.org/>
8. <https://pauri.nic.in/hi/document->
9. <https://cdn.s3waas.gov.in/>
10. <https://www.pib.gov.in/>
11. <https://cdnbbsr.s3waas.gov.in/>
12. जैविक खेती (कृषक प्रशिक्षण पुस्तिका), कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय कृषि, सहाकारिता एवं किसान कल्याण विभाग।



भारतीय ज्ञान परंपरा और संत कबीरदास

डॉ अनिता एस कर्पूर,

सह प्राध्यापिका,

हिन्दी विभाग रामैया इन्स्टीट्यूट ऑफ बिजनेस स्टडीस, गोकुला, बेंगलूरु।

भारतीय ज्ञान परंपरा अत्यंत प्राचीन है। जहां मानव ने धरती पर जन्म लिया तब से यह परंपरा चलती आ रही है। आज का युग विज्ञान का युग होने के कारण अनेकों सवाल दिमाग में आ रहे हैं। जैसे क्या यह ज्ञान सिर्फ शिक्षा तक ही सीमित है? क्या सिर्फ शिक्षित लोग ही ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं? नहीं यह तो अनुभव से प्राप्त होता है। इसके लिए शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती। ज्ञान से तात्पर्य हर विषय से होता है। जब से इन्सान धरती पर आया है कुछ न कुछ खोज कर रहा है। अब तक उसने बहुत सारे विचारों को आत्मसात किया है। तो क्या दक्षिण के आलवार संतों के पास ही ज्ञान था। भारतीय ज्ञान के द्वारा संत तुलसीदास, संत कबीरदास, संत रैदास ने अपने विचारों को अपने अनुभवों से समाजसेवा की। यह सब क्या है? इसी असमंजस में जब इस बात पर विधिवत रूप से विचार किया गया तब सही अर्थों में इस बारे में पता चला।

ज्ञान की कोई सीमा नहीं होती वह समय के साथ बदलती रहती है। हर समय ज्ञान प्राप्त करना होता है। इसके लिए शिक्षा होना जरूरी नहीं अर्थात् पाठशाला जाना जरूरी नहीं है। हां अगर पाठशाला जायेंगे तो अच्छी तरह से और जल्दी समझ में आता है।

सत्यम, शिवम और सुंदरम की बात को भाषा साक्षात्कार करती है। भाषा सच में अत्यंत सुंदर होती है, चाहे वह किसी भी प्रांत की भाषा हो। हर भाषा का साहित्य अपने आप में वंदनीय है। वेद, उपनिषद, पुराण, शास्त्र और लोक साहित्य भी तो एक प्रकार का ज्ञान है। जिसे केवल दार्शनिक व आध्यात्म ही नहीं बल्कि सामाजिक व वैज्ञानिक विषयों को भी अपने साथ लेकर चलती हैं। अगर इस परंपरा का ज्ञान सही अर्थों में प्राप्त करना है तो लोककथाओं का सहारा लेना पड़ेगा। प्राचीन संस्कृति और बौद्धिक विरासत को भी अपने साथ लेकर एकीकृत करती है। लोगों द्वारा शिक्षा प्राप्त करना भी इसी परंपरा का एक सिद्धांत है। उसके मार्गदर्शक की आवश्यकता रहती है। मानते हैं कि उसमें बदलाव समयानुसार होता रहा है। भाषा समाज के लिए लाभदायक है। सर्व विदित है, जो कहा गया है-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,

बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।'

-भारतेन्दु हरिश्चंद्र

प्राचीन समय में गुरुकुल पद्धति के द्वारा शिक्षण का कार्य होता था। अभी सुविधाएं इतनी बढ़ गई हैं कि व्यक्ति गुरुकुल पद्धति को भूल रहा है। प्राचीन समय में शिक्षा प्राप्त करना मतलब मानवता को प्रोत्साहन करना था, आज समाज को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। फलस्वरूप साहित्यकारों ने बीड़ा उठाया।

विदेशी लोग भी हिन्दी भाषा सीखना चाहते हैं। अमेरिका में वर्तमान समय में हिन्दी भाषा को द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है। तक्षशिला और नालंदा विश्वविद्यालय जो शिक्षा के लिये प्रख्यात हैं, वहां शोधकार्य के लिए अनेक विद्यार्थी आ रहे हैं। यह जगह शिक्षा के लिए अनेक वर्षों से विरासत के समान है। यहां पर हर तरह का ज्ञान का समन्वय होता है। चाहे वह लौकिक हो या परलौकिक, धर्म, भोग तथा त्याग के बारे में भी ज्ञात होता है।

भारतीय संस्कृति अपने आप में श्रेष्ठ है। चाहे नृत्य हो या समाज में नाटक की बात करें। इस ज्ञान परंपरा में भरतनाट्यम में भरतमुनि ने पहला नाट्य शास्त्र लिखा था। आयुर्वेद के बारे में चरक और सुश्रुत ने बताया था। वैसे देखा जाय तो हिन्दी साहित्य एक कल्पवृक्ष के समान है।

इस बारे में संत कबीरदास जी ने ज्ञान के महत्व को प्रतिपादित करते हुए बताया है कि
पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय, ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होया...
इसी प्रकार कबीर दास के दोहे समाज को नयी दिशा दिखाती हैं।

कथणीं कथी तो क्या भया, जे करणी नां ठहराइ।

कालबूत के कोट ज्युं, देषतहीं ढहि जाइ॥

जैसी मुख तैं नीकसै, तैसी चालै चाला।

पारब्रह्म नेड़ा रहै, पल में करै निहाला॥

कबीरदास जी ने कथनी और करनी के फर्क को समझाया है। यह अपने आप में अद्वितीय है। संत परंपरा में बहुत सारी ऐसी बात हैं, जो समाज को सोचने पर मजबूर करती हैं। समाज को एक नया मोड़ देती हैं। चाहे कबीर हो, तुलसीदास हो या रैदास हर किसीने समाज में नयापन लाने की कोशिश की है। आजकल के साहित्यकारों का भी यही रीत है। ज्ञान मात्र अपने तक सीमित न रहकर वह जनसामान्य को ध्यान में रखकर समाज सुधार हेतु रचनायें की हैं। लौकिक और परलौकिक, भक्ति हो या फिर समयानुसार व्यक्ति में कोई भी भावना में बदलाव लाने हेतु ज्ञान परंपरा सहायक रहा है। दूसरे शब्दों में कहें, तो यह ज्ञान भारतीय संस्कृति की धरोहर है।

"बाल्मीवक भए ब्रह्म समाना। अन्य मुवन जपवहं वजन्ह जप जाना॥"

इस प्रकार तुलसीदास के बाद भी हिन्दी में इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

हम जब भी ज्ञान परंपरा की बात करते हैं तो हम एक बार अपने नैतिक मूल्य व जीवन मूल्यों की ओर देखते हैं। मीराबाई ने मूर्ति में कृष्ण के होने का आभास कराया था।

“मेरे तो गिरिधर नागर दूसरों न कोई”

कबीरदास जी की सोच उनसे भिन्न प्रतीत होती है। वे हर किसी में परमात्मा से साक्षात्कार करते हैं। परब्रह्म परमात्मा की बात करते हैं कबीर के ब्रह्म की भी बात करते हैं। कबीर के अनुसार उनका कोई आकार नहीं है।

"दुजा भ्रम तवज लीजै, एक राम को नाम।

कहै कबीर सुनो भाई साधो, एकै सबहीं का ठाम॥"

कबीर के अनुसार ब्रह्म की कोई रूपरेखा नहीं होती। संत साहित्य अपने आप में अद्वितीय है। संत किसी के शत्रु नहीं होते वे हमेशा परमात्मा में लीन होते हैं। कबीरदास संतों के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि-

"संतन को कहा सीकरी सो करी।

गुरु कुम्हार विष कुंभ है, गवढ़-गवढ़ काढ़ै खोरी॥"

गुरु और शिष्य की परंपरा के बारे में अत्यंत सुंदर रूप से समाज को इंगित किया है। संत में इतनी क्षमता होती है की सही रास्ता लोगों को दिखाते है।

इसलिए कबीरदास संतो के बारे में अपने विचार यों प्रकट करते है—

"संत ऐसे चाहिए, जैसा सूप सुभाय।

सार-सार को गवह रहै, थोथा देई उड़ाया॥"

सारतः कहने का तात्पर्य है कि व्यक्ति अनेक विषयों का जानकार है। जिसे हम नकार नहीं सकते। साहित्यकारों ने व्यक्ति के मन से मात्र पर्दा हटाने की बात कही है। विविधता में एकता की बात भारत देश करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा मात्र शिक्षा तक ही सीमित न रहकर एक अमिट प्रभाव व्यक्ति पर छोड़ जाता है। चाहे क्षेत्र कोई भी हो ज्ञान की आवश्यकता रहती है। व्यक्ति के जीवन में अनुभवों के द्वारा प्राप्त ज्ञान भी सराहनीय है। हिन्दी साहित्य में संतो ने प्रमाणित किया है। अपनी भाषा में लिखा साहित्य सबको जोड़ देता है। भक्तिकाल के संतो ने अपनी तरफ से समाज में सुधार लाने का प्रयास किया है। हमारी संस्कृति को बचाने का प्रयास भी किया है। भाषा, साहित्य और संस्कृति अपने आप में अनोखी बात लेकर आती है। यह तीनों एक दूसरे के पूरक है इतना ही नहीं, यह कहे कि इसके द्वारा ही भारतीय संस्कृति समृद्ध रहती है तो अतिशयोक्ति न होगी।

संदर्भ सूची :

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
2. अंतर्जाल
3. कबीरदास ग्रंथावली



पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन: सर्वोत्तम प्रथाएं और भविष्य की दिशाएँ

डॉ. देवेन्द्र कुमार शर्मा

उप पुस्तकालयाध्यक्ष,

केन्द्रीय विश्वविधालय हिमाचल प्रदेश, धर्मशाला, जिला-कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश)

प्रस्तावना :

पुस्तकालय एक ऐसा स्थान है जो ज्ञान, सूचना, और सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखने का महत्वपूर्ण कार्य संपादित करता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी और डिजिटलीकरण के युग में, डेटा प्रबंधन ने पुस्तकालयों के कार्य प्रणाली को गहराई से परिवर्तित किया है।

पुस्तकालयों का महत्व आधुनिक समाज में अग्रणी और अनिवार्य है, जो ज्ञान की खान से जुड़ा हुआ है और सामाजिक, सांस्कृतिक, और शैक्षिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के दौर में, डेटा प्रबंधन ने पुस्तकालयों के संग्रह, संचयन, और उपयोग में महत्वपूर्ण बदलाव लाया है। यह लेख "पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन: सर्वोत्तम प्रथाएं और भविष्य की दिशाएँ" डेटा प्रबंधन के महत्व, सर्वोत्तम प्रथाएं, और भविष्य की दिशाएँ पर ध्यान केंद्रित करता है।

पुस्तकालयों का डेटा प्रबंधन महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे संग्रहित ज्ञान को संरक्षित और संरक्षित किया जा सकता है, ताकि उपयोगकर्ताओं को सही समय पर सही जानकारी मिल सके। डेटा प्रबंधन के माध्यम से पुस्तकालय संगठन डिजिटल संसाधनों को प्रभावी रूप से प्रबंधित कर सकता है और उपयोगकर्ताओं को उचित और विशेषज्ञ सेवाएं प्रदान कर सकता है।

इस लेख में हम डेटा प्रबंधन के उद्देश्य, सर्वोत्तम प्रथाएं, और भविष्य की दिशाओं को समझने का प्रयास करेंगे। विशेष रूप से, हम विचार करेंगे कि कैसे पुस्तकालय संगठन अपने डेटा संसाधनों को संरक्षित कर सकते हैं, उन्हें प्रभावी ढंग से प्रबंधित कर सकते हैं, और उपयोगकर्ताओं को उचित और समृद्ध सेवाएं प्रदान कर सकते हैं। इसके अलावा, हम डेटा प्रबंधन के क्षेत्र में भविष्य की दिशाओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे और आगे के अवसरों को अन्वेषित करेंगे जो पुस्तकालयों को डिजिटल युग में सशक्तिकरण कर सकते हैं। यह लेख पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन के महत्व, सर्वोत्तम प्रथाएं, और भविष्य की दिशाएँ पर ध्यान केंद्रित करेगा।

कीवर्ड : डेटा प्रबंधन, पुस्तकालय डेटा, सूचना प्रबंधन, डेटा संरक्षण, डेटा विश्लेषण

1. डेटा प्रबंधन का महत्व:

1.1 पुस्तकालयों में डेटा के संग्रह, संचयन, और प्रबंधन का महत्व

पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन का महत्व आधुनिक युग में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। डेटा प्रबंधन का उद्देश्य डिजिटल संसाधनों को संग्रहित, संचित, और प्रबंधित करना होता है ताकि उपयोगकर्ताओं को विभिन्न जानकारी के स्रोतों तक पहुंच मिल सके।

पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन के महत्व की कुछ मुख्य वजहें निम्नलिखित हैं:

संग्रह संरक्षण: पुस्तकालयों में रखी गई सभी जानकारी को संग्रहित रखने के लिए डेटा प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह सुनिश्चित करता है कि डिजिटल संसाधनों का संचयन सही रूप से हो रहा है और कोई डेटा हानि नहीं हो रही है। इसके लिए अच्छी तकनीकी और सुरक्षा के माध्यम से डेटा को संरक्षित रखा जाता है।

संचयन और व्यवस्थापन: जब जानकारी का संग्रह होता है, तो उसे सही तरीके से संचयित और प्रबंधित करना भी आवश्यक होता है। डेटा प्रबंधन की मदद से पुस्तकालय संगठन अपने विभिन्न स्रोतों से आये डेटा को सही ढंग से संचयित और संगठित कर सकता है। इससे जानकारी को खोजना और पहुंचाना भी सरल होता है।

प्रभावी उपयोग: संग्रहित जानकारी का उपयोग उपयोगकर्ताओं के लिए होना चाहिए। डेटा प्रबंधन के माध्यम से, पुस्तकालय संगठन उपयोगकर्ताओं को सही समय पर सही जानकारी प्रदान कर सकता है, जिससे उनका काम और अध्ययन सुगम और अधिक प्रभावी हो सके।

अनुसंधान और विकास: पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन के उपयोग से अनुसंधान और विकास कार्यक्रमों को भी बेहतर ढंग से प्रबंधित किया जा सकता है। यहां आवश्यक जानकारी को संग्रहित, प्रक्रिया किया और विश्लेषित किया जा सकता है, जो अनुसंधान के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है।

इस प्रकार, पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन का महत्व सिद्ध होता है क्योंकि यह संग्रहित जानकारी को संरक्षित, संचयित और उपयोगकर्ताओं को सही समय पर प्रदान करता है। इसके अलावा, यह अनुसंधान और विकास कार्यक्रमों को भी समर्थ बनाता है जो ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए आवश्यक होते हैं।

1.2 संग्रहित डेटा का उपयोग सेवाओं के विकास और उपयोगकर्ताओं की सेवा में सुधार के लिए

संग्रहित डेटा का उपयोग सेवाओं के विकास और उपयोगकर्ताओं की सेवा में सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण तकनीक है। डेटा प्रबंधन के अनुसार, पुस्तकालय संगठन संग्रहित जानकारी का सही तरीके से उपयोग करके उपयोगकर्ताओं को सर्वोत्तम सेवाएं प्रदान कर सकता है। यहाँ कुछ तकनीकी और आवश्यक कदमों की चर्चा की गई है:

डेटा को सही रूप से संग्रहित करना: सेवाओं के विकास के लिए, संग्रहित डेटा को सही ढंग से संग्रहित और व्यवस्थित किया जाना चाहिए। डेटा की अच्छी गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए अनुशंसित नियमों और मानकों का पालन किया जाना चाहिए।

विश्लेषण और प्रक्रिया करना: संग्रहित डेटा को विश्लेषित करने के लिए विभिन्न विश्लेषण तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। इससे उपयोगकर्ताओं के आवश्यकताओं को समझने में मदद मिलती है और विशेषज्ञ सेवाएं प्रदान की जा सकती हैं।

उपयोगकर्ता अनुकूल सेवाएं विकसित करना: संग्रहित डेटा के आधार पर, पुस्तकालय संगठन उपयोगकर्ताओं के लिए अधिक उपयोगकर्ता अनुकूल सेवाओं का विकास कर सकता है। इसमें विभिन्न ऑनलाइन सामग्रियों, डिजिटल संग्रहों, और सांस्कृतिक रिसोर्सेज जैसी सेवाएं शामिल हो सकती हैं।

सेवाओं की पुनरावलोकन और सुधार: संग्रहित डेटा के उपयोग के परिणामस्वरूप मिली जानकारी के आधार पर, सेवाओं को समय-समय पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इससे सेवाओं की पुनरावलोकन किया जा सकता है और उन्हें और अधिक उपयोगकर्ता अनुकूल बनाया जा सकता है। इस प्रकार, संग्रहित डेटा के सही उपयोग से, पुस्तकालय संगठन उपयोगकर्ताओं को बेहतर सेवाएं प्रदान कर सकता है और उनकी सेवाओं में सुधार कर सकता है।

2. सर्वोत्तम प्रथाएं:

2.1 मानकीकरण और डेटा प्रकारों का परिभाषण

सर्वोत्तम प्रथाएं का पहला आधार यह है कि पुस्तकालय संगठन अपने डेटा प्रबंधन की नीतियों और प्रक्रियाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित करें। यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि किस प्रकार की जानकारी को संग्रहित, संचित, और प्रस्तुत किया जाएगा, और किस प्रकार की नियमितता और मानकीकरण का पालन किया जाएगा। इसके लिए, निम्नलिखित प्रथाएं अच्छी तरह से पालन की जानी चाहिए

मानकीकरण: डेटा मानकीकरण का आधार रखना अत्यंत महत्वपूर्ण है। पुस्तकालय संगठन को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए कि विभिन्न प्रकार की डेटा कैसे मानकीकृत किए जाएंगे, जैसे कि बायोमेट्रिक्स डेटा, कैटलॉग डेटा, आदि।

डेटा प्रकारों का परिभाषण: पुस्तकालय संगठन को अपने उपयोगकर्ताओं के डेटा के प्रकारों को समझने के लिए परिभाषित करना चाहिए। उदाहरण के लिए, परिभाषित करें कि कौन सा डेटा प्राथमिक है, कौन सा सेकेंडरी है, और किस प्रकार के डेटा को कैसे प्रोसेस किया जाएगा।

नीतियों का अनुपालन: मानकीकरण और डेटा प्रकारों के परिभाषण के साथ-साथ, पुस्तकालय संगठन को अपनी नीतियों और मानकों का अनुपालन भी सुनिश्चित करना चाहिए। यह निश्चित करेगा कि संग्रहित जानकारी का उपयोग सही और नैतिक ढंग से होता है।

इन प्रथाओं के अनुसार, पुस्तकालय संगठन, संग्रहित जानकारी को सही दें।

2.2 सुरक्षित डेटा संचयन और प्रबंधन की नीतियों का अनुसरण

सुरक्षित डेटा संचयन और प्रबंधन की नीतियों का अनुसरण पुस्तकालय संगठनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह नीतियाँ संग्रहित डेटा की सुरक्षा, गोपनीयता, और विश्वसनीयता को सुनिश्चित करती हैं। इसके लिए निम्नलिखित प्रमुख नीतियों का अनुसरण किया जाना चाहिए:

डेटा सुरक्षा की नीति: इस नीति के अनुसार, संग्रहित डेटा को सुरक्षित रखने के लिए सही तकनीकी और नैतिक मानकों का पालन किया जाना चाहिए। इसमें डेटा के एक्सेस और उपयोग पर नियंत्रण और सुरक्षा के लिए सुरक्षा के निर्देश शामिल होते हैं।

गोपनीयता की नीति: इस नीति के तहत, उपयोगकर्ताओं के व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाते हैं। यह सुनिश्चित करता है कि उपयोगकर्ताओं की गोपनीयता का पालन किया जाता है और उनकी व्यक्तिगत जानकारी का उपयोग केवल अधिकारित उद्देश्यों के लिए होता है।

डेटा प्रकारों के प्रबंधन की नीति: इस नीति में संग्रहित डेटा के विभिन्न प्रकारों को सही तरीके से प्रबंधित करने के लिए निर्देश शामिल होते हैं। यह सुनिश्चित करता है कि डेटा को सही ढंग से संग्रहित, संरक्षित, और प्रस्तुत किया जाता है।

उपयोगकर्ता पहचान और एक्सेस की नीति: इस नीति में उपयोगकर्ताओं की पहचान, उनके अनुमति स्तर, और डेटा तक पहुँच की प्रक्रिया को परिभाषित किया जाता है। यह सुनिश्चित करता है कि केवल अधिकारित उपयोगकर्ताओं को ही डेटा तक पहुँच मिलती है।

संग्रहित डेटा की बैकअप और रिस्टोरेशन की नीति: इस नीति के अनुसार, संग्रहित डेटा का नियमित बैकअप किया जाता है ताकि किसी भी आपात स्थिति में डेटा को पुनः प्राप्त किया जा सके।

इन नीतियों का सख्त अनुसरण करने से, पुस्तकालय संगठन संग्रहित डेटा को सुरक्षित, गोपनीय, और विश्वसनीय ढंग से प्रबंधित कर सकता है।

2.3 डेटा क्षेत्रों के लिए बेहतरीन प्रबंधन प्रणालियों का अनुसरण

डेटा क्षेत्रों के लिए बेहतरीन प्रबंधन प्रणालियों का अनुसरण पुस्तकालय संगठनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधन प्रणालियों की चर्चा की गई है जो डेटा क्षेत्रों के लिए अनुकूल हो सकती हैं:

समर्थन की नीति: डेटा क्षेत्रों के लिए सही समर्थन प्रदान करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें उपयोगकर्ताओं को डेटा एक्सेस और प्रोसेसिंग के लिए आवश्यक सहायता और गाइडेंस शामिल होती है।

सुरक्षा प्रणाली: डेटा क्षेत्रों के लिए सुरक्षा प्रणाली का अनुसरण करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह सुनिश्चित करता है कि डेटा की सुरक्षा और गोपनीयता को सही ढंग से संरक्षित किया जाता है।

प्रक्रिया प्रणाली: डेटा क्षेत्रों के लिए उचित प्रक्रिया प्रणाली का अनुसरण करना आवश्यक है। इसमें डेटा की संग्रहण, प्रक्रिया, और प्रस्तुति की प्रक्रिया को स्पष्ट और संगठित ढंग से परिभाषित किया जाता है।

गुणवत्ता प्रणाली: डेटा क्षेत्रों के लिए गुणवत्ता प्रणाली का अनुसरण करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें डेटा की गुणवत्ता और वैधता की निगरानी की जाती है ताकि उपयोगकर्ताओं को मान्य और सही जानकारी प्रदान की जा सके।

अनुसंधान और विकास: डेटा क्षेत्रों के लिए अनुसंधान और विकास की प्रणालियों का अनुसरण करना उचित है। इससे नई तकनीकियों और उपायों का अध्ययन किया जा सकता है जो डेटा क्षेत्रों को बेहतर ढंग से प्रबंधित करने में मदद कर सकते हैं।

इन प्रणालियों का अनुसरण करने से, पुस्तकालय संगठन संग्रहित डेटा के विभिन्न क्षेत्रों को संगठित और प्रबंधित कर सकता है, जो उपयोगकर्ताओं को बेहतर सेवाएं प्रदान करने में मदद करता है।

3. भविष्य की दिशाएँ:

3.1 डेटा विज्ञान और क्रियात्मक डेटा प्रबंधन के उत्थान

भविष्य की दिशाएँ में, डेटा विज्ञान और क्रियात्मक डेटा प्रबंधन के उत्थान का महत्वपूर्ण योगदान होने की संभावना है। निम्नलिखित तत्व इस प्रकार के उत्थान की दिशा को प्रेरित करेंगे:

बढ़ती डिजिटलीकरण: डिजिटलीकरण के साथ, डेटा की मात्रा और प्रकार दोनों ही बढ़ जा रहे हैं। इससे डेटा विज्ञान और क्रियात्मक डेटा प्रबंधन के क्षेत्र में नई तकनीकियों और उपायों का विकास हो रहा है।

बढ़ती डेटा की मात्रा: विभिन्न स्रोतों से आने वाले डेटा की वृद्धि और उसकी समझ में नई समस्याओं का सामना करने की आवश्यकता है। इससे डेटा प्रबंधन और विश्लेषण के लिए नई तकनीकों की आवश्यकता होगी।

मशीन लर्निंग और एमएल: मशीन लर्निंग और एमएल की तकनीकें डेटा के साथ काम करने के लिए अधिक प्रयुक्त हो रही हैं। इससे डेटा की गहरी समझ, पैटर्न पहचान, और विश्लेषण की क्षमता में वृद्धि हो रही है।

ब्लॉकचेन प्रौद्योगिकी: ब्लॉकचेन प्रौद्योगिकी डेटा सुरक्षा और गोपनीयता के क्षेत्र में नए संभावित उत्थान लाने की संभावना है। इससे पुस्तकालय संगठन अपने डेटा को सुरक्षित रखने में मदद मिल सकती है।

एकीकृत डेटा प्रबंधन: डेटा को एकीकृत रूप से प्रबंधित करने के लिए एकीकृत डेटा प्रबंधन प्रणालियों का विकास होगा। यह पुस्तकालय संगठनों को अधिक अद्यतन और संगठित डेटा संग्रह करने की क्षमता प्रदान करेगा।

इन तकनीकों और प्रणालियों के उत्थान से, पुस्तकालय संगठन अपने डेटा संग्रह को और अधिक उपयोगी और सुरक्षित बनाने में सक्षम हो सकता है।

3.2 एआई, मशीन लर्निंग, और बड़ा डेटा (Big Data) के उपयोग के लिए डेटा प्रबंधन के नए प्रासंगिकताएं

एआई, मशीन लर्निंग, और बड़े डेटा के उपयोग के लिए डेटा प्रबंधन के नए प्रासंगिकताओं की अधिक विस्तृत चर्चा निम्नलिखित रूप में की जा सकती है:

एकीकृत डेटा संग्रह: डेटा प्रबंधन की प्रक्रिया को और अधिक एकीकृत और संगठित बनाने के लिए एआई और मशीन लर्निंग का उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए, आपको डेटा के संग्रह, संचयन, और प्रबंधन के लिए स्वचालित उपाय विकसित करने होंगे, जिससे डेटा की गुणवत्ता और उपयोगिता में सुधार हो।

डेटा की स्वचालित विश्लेषण: एआई और मशीन लर्निंग के उपयोग से, बड़े डेटा सेट्स को स्वचालित रूप से विश्लेषित किया जा सकता है। यह विश्लेषण उपयोगकर्ताओं को बेहतर और तेज निर्णय लेने में मदद कर सकता है, जैसे कि उत्पादन की अंतरिक्षिकता, विपणन की रणनीति, और उत्पाद की गुणवत्ता का मूल्यांकन।

स्वचालित निर्णय लेना: एआई के उपयोग से, पुस्तकालय संगठन अपने डेटा से संबंधित निर्णयों को स्वचालित रूप से ले सकता है। उदाहरण के लिए, डेटा विश्लेषण के माध्यम से उपयोगकर्ताओं के व्यवहार और आवश्यकताओं को समझा जा सकता है और उसके आधार पर सेवाओं को समायोजित किया जा सकता है।

गहन अनुशंसाएं प्रदान करना: एआई और मशीन लर्निंग के उपयोग से, पुस्तकालय संगठन उपयोगकर्ताओं को गहन और व्यक्तिगत अनुशंसाएं प्रदान कर सकता है। इससे उपयोगकर्ताओं को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार सेवाएं प्राप्त करने में मदद मिलती है।

बिग डेटा के समाधान: बड़े डेटा के साथ काम करने के लिए, एआई और मशीन लर्निंग के उपयोग से नए और उन्नत समाधान विकसित किए जा सकते हैं।

3.3 डेटा अवैज्ञानिक प्रयोगों के साथ डेटा प्रबंधन के नए संभावित नेतृत्व

डेटा प्रबंधन के नए संभावित नेतृत्व के रूप में डेटा अवैज्ञानिक प्रयोगों का महत्व बढ़ रहा है। डेटा अवैज्ञानिक प्रयोगों का मुख्य उद्देश्य डेटा को समझना और उससे नये निर्णय लेना है, जिससे कि डेटा के संग्रह, संचयन, और प्रबंधन में नए और सुगम तरीके आ सकें। निम्नलिखित हैं कुछ महत्वपूर्ण प्रयोग:

अद्वितीय डेटा वैज्ञानिक प्रयोग: डेटा अवैज्ञानिक प्रयोग नए डेटा वैज्ञानिक तकनीकों और उपायों का अनुसरण करते हैं जो डेटा के साथ काम करने में अद्वितीय हो सकते हैं। इससे डेटा प्रबंधन प्रक्रियाओं को और अधिक विवेचनशील बनाया जा सकता है।

अत्यंत संबलित डेटा नियंत्रण: डेटा अवैज्ञानिक प्रयोगों का उपयोग डेटा को संबलित और नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है। इससे डेटा की गुणवत्ता, सुरक्षा, और गोपनीयता को सुनिश्चित किया जा सकता है।

गहन डेटा संशोधन: डेटा अवैज्ञानिक प्रयोग डेटा की गहन समझ तथा संशोधन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं। इससे डेटा का विवेचन और अध्ययन किया जा सकता है, जिससे नई और मौलिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सुगम और व्यक्तिगत अनुशंसाएं: डेटा अवैज्ञानिक प्रयोग से, उपयोगकर्ताओं को सुगम और व्यक्तिगत अनुशंसाएं प्रदान की जा सकती हैं। इससे उपयोगकर्ताओं को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार सेवाएं प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

गतिशील डेटा प्रबंधन: डेटा अवैज्ञानिक प्रयोग से, डेटा प्रबंधन प्रक्रियाओं को और गतिशील बनाया जा सकता है। इससे डेटा की समयानुकूलता और प्रभावी प्रबंधन की गारंटी दी जा सकती है।

ये सभी प्रयोग डेटा प्रबंधन के नए नेतृत्व की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं और पुस्तकालय संगठनों को अधिक समर्थ बना सकते हैं।

4. निष्कर्ष:

डेटा प्रबंधन पुस्तकालयों के सशक्तिकरण में एक कुशल और समर्थ उपाय है। सावधानीपूर्वक निर्धारित नीतियों और प्रयोगों के माध्यम से, पुस्तकालय संगठनों डेटा संसाधनों का बेहतर उपयोग कर सकते हैं और डिजिटल युग में उनके मान्यताओं को बनाए रख सकते हैं।

पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन के विकास का महत्व डिजिटल युग में उनके निरंतर महत्व और प्रभाव के लिए अवश्य है। इस लेख के माध्यम से, हमने डेटा प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं को अन्वेषित किया है, जिसमें इसका महत्व, सर्वोत्तम प्रथाएँ, भविष्य की दिशाएँ, और एआई, मशीन लर्निंग, और बड़े डेटा विश्लेषण के समाहार का समावेश है।

हमने शुरुआत में डेटा प्रबंधन के महत्व को मान्यता दी, जिसमें इसकी भूमिका को सेवाओं में सुधार, उपयोगकर्ता अनुभव को बेहतर बनाने, और सूचित निर्णय लेने का अहम योगदान माना गया। डेटा प्रबंधन की प्रभावी प्रथाएँ के लिए डेटा प्रकारों और परिभाषाओं का मानकीकरण महत्वपूर्ण माना गया।

इसके बाद, हमने सुरक्षित डेटा संचयन और प्रबंधन की नीतियों का पालन करने की महत्वपूर्णता पर चर्चा की, साथ ही डेटा प्रबंधन क्षेत्रों के लिए बेहतरीन प्रबंधन प्रणालियों का अनुसरण करने की आवश्यकता को भी उजागर किया। हमने भविष्य की दिशाएँ के रूप में डेटा विज्ञान और क्रियात्मक डेटा प्रबंधन के उत्थान पर ध्यान दिया, जिससे पुस्तकालय संगठनों को डेटा का उपयोग नई और अधिक उपयोगी तरीके से करने की क्षमता मिलती है।

साथ ही इसमें डेटा अवैज्ञानिक प्रयोगों के प्रासंगिक और प्रभावी उपयोग को समझने की आवश्यकता को उजागर किया। इन प्रयोगों के माध्यम से, हम डेटा प्रबंधन प्रक्रियाओं में नई उत्थान और सुधार कर सकते हैं, जिससे डेटा का समझ और इसका उपयोग बेहतर बना सकता है। इसके अलावा, डेटा अवैज्ञानिक प्रयोग से पुस्तकालय संगठनों की टीम की विशेषज्ञता को बढ़ावा मिलता है।

सन्दर्भ:

1. Borgman, C. L. (2015). Big data, little data, no data: scholarship in the networked world. MIT Press.
2. Jubb, M. (2016). Open access and the future of scholarly communication: Policy and infrastructure. Facet Publishing.
3. Corti, L., & Thompson, P. (2004). Secondary analysis of survey data. SAGE Publications Ltd.
4. Bishop, A. P., & Star, S. L. (1996). Social informatics of digital library use and infrastructure. In Proceedings of the 1996 ACM SIGCPR conference on Computer personnel research (pp. 176-184).
5. Chowdhury, G. (2010). Introduction to digital libraries. Facet Publishing.
6. Dempsey, L., & Malpas, C. (2013). The library in the life of the user: Engaging with people where they live and learn. OCLC Research.
7. Yakel, E., & Torres, R. M. (2003). AI: A guide to electronic resources. ABC-CLIO.
8. Singh, S. K., & Joshi, R. (2014). Library and information science: UGC-NET/SLET (JRF & LS) practice sets and solved papers. Arihant Publications.
9. Anderson, R. (2013). Digital curation: A how-to-do-it manual. American Library Association.
10. Chowdhury, G. G., & Chowdhury, S. (2010). Organizing information: From the shelf to the web. Facet Publishing.

sharmadk73@gmail.com



Assamese modern songs and its essential features : An Analysis

Dr. Appu Borah

Assistant Professor,

Department of Assamese , Maibang Degree College, Maibang

Abstract

Culture is the backbone of a nation. It evolves through the synthesis of language, religion, customs and traditions, beliefs etc. the songs are also a part of culture. Having its genesis in human feelings and emotions the song not only reflects a culture, but also preserves its history of a nation too. Song and music, is the most powerful among all the other fine arts— Drama, Sculpture, Painting and Dance. The percolation of modern song its universal appeal and its impact upon the society in relatively greater than the other form. It is only modern song that has broken away from the confines of the folk and classical music to move towards new horizon. Our study reflects all the dimensions and features of the modern Assamese Song.

Key words: Culture, Modern Assamese song, folk and classical music, tune, musical features.

1.0 Introduction :

Culture is the identity of a nation; it is the glory of a nation too. A culture evolves through synthesis of language, religion, customs and traditions, beliefs, joys and sorrows, love and affection, and its education and learning. The songs and lyrics are also a special part of a culture. Considered as part of the Assamese national culture when all assess the heritage of Assamese songs, we come to see that the charyapadas written between 8th and 11th century, are the ancient examples of Assamese lyric. However, these cyaryapadas or songs are the common heritage of Assam, Bengal as well as Orissa. After the charyapadas, no evidence of lyric compositions in Assam has been found in the following several centuries. Ofcourse we may assume that a tradition of song continued in Assam. This is evident form the Borgeets, Dramatic songs Bhatimas, Kirton Ghosha, Namghosha. More over one can early assume from the folk songs that these song have maintained a tradition from ancient times, and since and those times the people have an access and familiarity with the oral song tradition.

Changes in socio-cultural life, brings about changes in all other fields. And so change came to the world of lyrics and music too. The contemporary events are the main factors for this change. Two important events were the most decisive factors in bringing about changes in Assamese songs- The British occupation of Assam and the activities begun by the Missionaries

in Assam. Through the Christian religious music, the western music arrived in hand one finds Assamese tunes used Christian songs. On the other hand, a part of from use of Ragas, we also find a creative application of indigenous folk songs in Assamese lyrics and music. More over, Assamese songs acquired a wonderful form in terms of compositions and time. In the discussion of the topic, an attempt has been made to bring out the form of modern songs and its musical qualities.

1.1 Objective of the study :

The objectives of this paper entitled, “Musical Features of Assamese Modern Songs : An Analytical Study are as follows:

- To outline in brief the history of Assamese song.
- To bring into focus the form features of Assamese modern song.
- To assess the musical qualities of Assamese modern song and bring into focus the musical qualities of Assamese modern song.
- Importance also lies in the assessment of musical qualities of it is also importance to asses and analyse. The influence of indigenous songs upon the Assamese modern song.

1.2 Method of study :

This paper makes use of both descriptive and analytical methods of study based on their needs to discuss various aspects. Review method has been applied in enlisting the lyricists of modern Assamese lyrics.

2.0 The history of Assamese Modern Song :

Although the history of Assamese song is very old, yet the scholars have not yet been able to classify them in terms of their time or period of competition. Assam is the land of confluence of many races and languages. That is why the Assamese culture is multicoloured as it has evolved through assimilation and synthesis. One of most in valuable cultural resources of this process are the Assamese folk songs. These songs in their melodious verse, and free, uninhibited expressions have captured the universal basic and primitive feelings and emotions of rustic life in the most natural terms have been orally handed down from generations to generation. These folk songs have perennially enraptured the heart and minds of men since time immemorial. These folk songs are rich. Besides their aesthetic charm, and power of giving delight, they have also established an everlasting relation with the the various religious and customary traditional rituals observed in Assamese social life from one's birth to death. Various eminent critics, besides Maheswar Neog have recognised the Assamese songs as Assamese lyrical literature. A through study of the history of Assamese songs reveal that the modern Assamese songs have acquired its modern from through modern songs written by adopting ideas and themes from oral literature in modern times, in very much the same way as Assamese literature in acquired its modern from through the Arunudoï launched in 1846. Having received first eposure through the Arunudoï. Assamese lyric has over the centuries have changed with the passage of time embedding in it the changing modern thoughts and ideas. On that basis, the modern Assamese songs can be chronologically grouped into

(1) Songs of the Pre Independence times/period.

(2) Songs of the Post Independence times/period.⁷

Given below is a brief discussion on the same..

2.01 Songs of the Pre-Independence Era :

The Modern Assamese songs emerged through the pages of the Arunudoï in the nineteenth century. The Arunudoï published the songs and poems written in an innovative way.

The main objective of Missionaries behind the publication of the paper was to preach Christianity. Obviously, most of the articles published in it were related to the Christian religion. The songs published in this paper were also written with the aim of propagation of Christianity. They were the hymns written in praise of Christ and Christianity. Though few in number, these songs published in the Arunodoi brought variety to Assamese song.

In later course, the literary movement initiated by the Junaki Magazine in 1889, the songs published in it broke away from the prevailing classical ideals, and introduced and revealed new free liberal thought and ideas. Poets like Lakhminath Bezbaruah, Padmanath Gohain Baruah, Lakhiram Baruah, Ambikagiri RaiChaudhury, Umesh Chandra Chaudhury, Benudhar Rajkhowa were the eminent lyricists of these songs. The author of the Assamese National Anthem, Lakhminath Bezbaruah wrote a song which reveals patriotism, humour, and love. One trend is also a Bhakti (religious) trend in Assamese lyrics. Some of these poets and lyricists were also influenced by the songs of Dhirendra Lal Roy and Rabindranath Tagore of Bengal. This impact is visible in Bezbaruah's lyrics also. There was even a page for songs entitled "Geetar Sorai" in the literary magazine The Usha edited by Padmanath Gohain Baruah. Only one book of songs has been published as a collection of Ambikagiri Raichoudhury's Songs. In his songs we find a strong urge and appeal for freedom and the desire to build a fresh pure society by eradicating age old social evils. In them the spirit of Indian nationalism is very strong. A study of the lyrics by Umesh Chandra Chaudhury, brings us into close contact and intimacy of the poet with the rustic life. Three of his lyric collections are—Debadhwani, Mondakini and Pratidhwani.¹ In the lyrics of Padmadhar Chaliha we find prominently the theme of patriotism, besides love, empathy for Assamese Social life. The collection of his lyrics are: Phulani (The flower of Garden), Swaraj Sangeet (Music of swaraj) and Geetlahari (wave of songs). Another prominent lyricist of this period was Kamalananda Bhattacharya. The collection of songs named 'Bawla' gives us a glimpse of his thoughts. 'Geetawali' by Satyanath Bora, published in 1883 was the first collection of Assamese songs. It was Lakhiram Baruah who took the first step towards giving musical status to Assamese lyrical literature. He wrote a series of articles for the Usha. But his greatest contribution to Assamese song are his two books of high standard Sangeet Sadhona and Sangeet Kosha published between 1901-1911. In addition to that, Sangeet Ratnawali and Sangeet Siksha Xupan written with English notations are the richest treasure of Assamese Music. Devendranath Changkakati was another contemporary lyricist. His two books 'Sangeet Beinar Series' and 'Sangeet Upokromonika' are based on Hindusthani Classical Music. Kiritinath Bordoloi made audacious attempt to compose songs adapting tunes from Sukannani, Durgabori, Aainaam, Dhainaam, Biyanaam, and other folk songs. He made a noble effort to establish Kamrupia Sangeet, as one of the disciplines of Indian Classical Music, like the south Indian classical music. The most eminent and the most popular Assamese lyricists Parbati Prasad Baruah, Jyoti Prasad Agarwala and Bishnu Prasad Rabha also began writing songs in the pre-independence years and carried forward this exercise upto the post independence years. In the song books like Gungunani, Lutee, Mayapi, Sukula Dawar, Oi Kahua phool by Parbati Prasad Baruah, the margin between poetry and song becomes shadowy. His songs draw highly the art of composition and tunes from folk songs. Lucid diction, simple rhyming, bewitchment of the natural beauty of Assam. Light humorous touch, sorrow trust in a life mixed with sorrow, admiration for the creator of this beautiful world are the main features of the songs of Parbati Prasad Baruah. Jyotiprasad Agarwala was the contemporary poet lyricist of Parbati Prasad Baruah. With his creations of more than three hundred songs he gives an extra ordinary dimension to Assamese lyrical literature. These songs are the best examples of unique blending of poetic

beauty and musical sweetness (charm). Based on the synthesis of Indian classical music, western and indigenous numbers, his songs have been given classic status as 'Jyoti Sangeet'. Beauty of the creation, victory of the mass people, awareness of the public, fight against corruption, worship of the motherland, energetic appeal to the youth the vision of a new era, appeal for an apocalyptic revolt for eradication poverty, sympathetic depiction of rural life, quest for beauty, response and reactions to the multifarious beauty of nature, are some of the prominent themes that go in the making of the beauty and charm of Jyoti Sangeet. In the two collections Mukti Deol and para janamar Xubha Laganat by Bishnu Prasad Rabha. One gets his expression of patriotism and individual feelings and desires. Another lyricist of the Pre-Independence era was Mitraddev Mahanta. His 'Geeti xatadalat' is a medley collection of one hundred songs on variety of themes. Among them patriotism, prayer to divinity, humorous subjects are the prominent themes. Besides the above mentioned lyricist, the other poet lyricists who have enriched the Assamese lyrics are: Kamal Chaudhury, Paragdhara Chaliha, Narayan Bezbaroa, Darponath Sarmah, Ikramul Majid, Molin Bora, Anandiram Das, Ganesh Gogoi, Sivaprasad Bhattacharya, Prasannalal Choudhury, Tarunram Phukan, Nabinchandra Bordoloi.

2.02 Songs of the Post Independence Era :

India became free from British rule in 1947. With it the trend of patriotic and revolutionary trend in Assamese songs also changed its tune. Now, instead of singing for the dethronement of imperial rule, the poets, took to writing songs expressing the pains sufferings and deprivation of the poor class, calling upon loud and clear for revolt against capitalistic exploitation and wrote in visualization of a classless, exploitationless new society. Some few of them also wrote on unity and integrity of the people. The earlier trend went on side by side with these new ones also. Some of the lyricists of this period, wrote more prominently and with greater feelings on objective love, hopes and aspirations and the pains and despondence of the people. After Independence, the two Radio centers Dibrugarh and Guwahati—were established and through their broadcastings, Assamese songs became widely circulated, and hence gained more popularity. Many lyricists got the opportunity of exposure through these radio centers. During this period, folk based song gained special popularity in terms of both art of composition and tune. However, the exercise and practice of Raga based songs, i.e. classical based songs also continued. Most of these lyricists themselves were also tune setters remarkable names in the list were—Bhupen Hazarika, Purushottam Das, Lakshyadhara Das, Kamal Narayan Choudhury, Taphojjuli Ali, Hemen Hazarika, Rudra Baruah, Parag Chaliha etc. Bhupen Hazarika is a name well known in the country as a famous singer and composer. His songs have been collected in four collections—'Jilikabo Luitore Paar', 'Sangram Logne Aji', 'Aagoli Bahore Lahori Gagona' and 'Bohman Brahmaputra'. His songs are expressions of his love for the nation, sympathy and commiseration for the poor and the downtrodden response to contemporary issues, great esteem for the glorious heritage, and his individual thoughts and ideology. Three books are there to the credit of Purushottam Das—they are: Surabani, Tribeni and Shreemoyee. It is said that he also wrote many other songs besides these included in these three books. Kamal Narayan Chaudhury has only one collection of songs to his credit viz Gitanjali. All the songs found in this book are written in the pattern of folk song.

The songs written by Lakshyaheera Das, are purely lyrical romantic expressions of personal love, beauty and personal love and sorrows. For him tune is the tool for self expression. Her collection are 'Sursetu', 'Geetali', 'Mayurponkhee'. Another artist is Taffajul Ali. The book of his collections are—'Anustup', 'Mondakanta' and 'Aghori Kokaideur Geet'. His songs focus focus upon the brittleness and fragility of life. Though he was primarily overwhelmed by

feelings of the heart, its sorrow and delights and the sense of defeat in life, yet he has not ever related the society and the world around him. His art of composition bears a special charm. In the songs of Hamen Hazarika, the influence of 'Bangeet' is apparent. Another artist Rudra Barua. His songs portray the beauty and charm of the pastoral rustic life of the country folk. A strong optimism keeping the light of life glowing in the midst of poverty gives his lyrics an special dimension. His collection of songs 'Kalangpariya Geet'—have the touches of folk songs and Bangeet, and this touch adds to the appeal of these songs. The songs of Parag Chaliha have in them the appeal of patriotism and indigenous tunes, besides other attractions. His songs are compiled in the collection named 'Ban Punar Mon Geet'. The lyrics of these poet writers and their art and tunes have given Assamese lyrics a depth and horizon.

3.00 Modern songs and its essential features :

3.01 Form :

Song and music, is the most powerful among all the other fine arts—Drama, Sculpture, Painting and Dance. The percolation of modern song its universal appeal and its impact upon the society is relatively greater than the other form. It is only modern song that has broken away from the confines of the folk and classical music to move towards new horizon.

With the rise of demand of modern song, it has also generated special attraction for the new generation. In consequence, a trend has set in among the youngsters, to adopt modern music as a profession and trade through regular practice experimentation and performance.

Modern song/music has the ability to cross the boundaries—geographical, natural, ethnic and linguistic and extend itself beyond those limits. On the other hand, the impact of globalization on modern music is prominent. In modern music, there is the inevitability of originality in terms of thoughts emotion, and language, in terms of tune melody and rhythm and in the visualization of the contemporary cosmopolitan life. One finds in modern song, the scope for presenting the social realities from one's own perspective. Besides, he gets the scope for regular experimentation and artistic development. In addition to being enthralled by the beauty of nature and emotionally drawn towards his own land and people, the modern lyricists also tried to realize the inner individual entity of man and thus the modern lyricists started to explore the human mind. Withdrawing themselves from the conventionalities, the modern Assamese lyricists created the trend of modern Assamese song by adding to their own creativity the elements of western music.

The practice of both folk and classical music depends upon some kind of patriotism (Royal, Religious or ruling groups). Modern song in its beginning was free from such patriotism, but in our times we see various business agencies and multinational companies have come forward for its patronization. In consequence, the market of modern song has been expanded. In present times, the trend of modern song has established itself as an effective, profit-giving commercial trend.

With the expansion of modern song there is parallel rise in consciousness and attraction in the society. Besides other music, modern song competition, workshop on modern song are being frequently organized in the village and towns in the aegis of govt. & non govt. agencies.

In recent times there is an addition of a new trend in modern song of songs written in imitation of western music. This is called 'fusion music'. This is a kind of music in which several kinds of prevailing tunes on songs are mixed up with a song as a tune. For example one may take up a raga based song or a tune composed with a particular musical instrument, and he or she may add to it tunes from a western song, or a tune as a song from a traditional number. The fusion is done in such a way that the musical elements of all of them are synthesized without

distorting the original. As a result the song or the tune acquires a musical beauty with a new dimension.

The little 'Adhunik Geet' i.e modern song was used in the beginning without analyzing its essential features. In later course, this created some problem in the minds of those engaged in analyzing and interpreting modern song. It is natural for human being to give a name to any person or a thing or a concept. In many cases, though, names of persons are given on the basis of his qualities, place and time, it is not inevitable that, the name will always unfailingly carry the same meaning or these features and the rules of their composition.

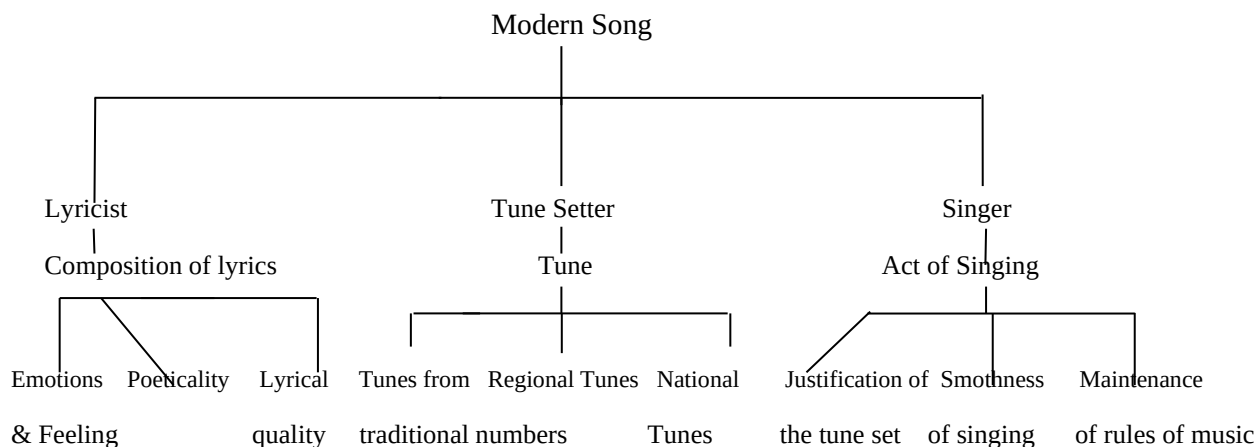
3.02 Features :

Every genre of song has its own characteristic features and these features primarily depend upon their tunes. An analysis of the classical music, Borgeet, Lukogeet etc. shows that each of them has its own essential features. Modern songs, on the other hand puts emphasis on the rules of composition together with tunes.

4.00 Musical Features of Modern Assamese song :

While making an assessment of the musical features of modern Assamese songs one needs to observe the essential features and the responses and reactions of modern songs. Such analysis is dependent upon the character of modern song. However, a symmetry underlie the modern songs also. It is for this reason that modern society, as ever green, ever new intelligible and over desired element. Therefore, modern songs have been received into the area of systematic music

In the trend of modern Assamese song the trio the lyricist, the tune seller and the singer are organically related to one another. Secondly, these three main acts (lyricist's act of composing the song. The tune setter selling the tune, and the singer singing it) are guided by rules of music. The following diagram makes the point clear².....



What follows is an attempt to explain how modern songs just unity in maintained through integration and symmetry of acts of these three individuals involved.

4.01 Composition of the lyric :

Three elements in particular, maintains the unity of the act of composition of a song. They are :

(a) Feelings & emotions (b) Poetical quality (c) Lyrical quality

The specialities connected with these three elements are also remarkable. For example.....

4.01.01 Feelings and Emotion :

The basic needs in the resources of the song writer for composing songs are feelings and emotion of his heart. There is, however, no prescribed rules as to what should be the particular emotions involved for writing a song. But the feelings and emotion working behind the creation must be decent musical and universal. The expressions of the fine feelings is the main functions of lyrics.

The lyricist does not have the scope for describing or presenting all the different shades of the felt emotions. That is, certain external or internal reactions may create certain associated emotion in the heart of the song writer, but they are not found (because they cannot be described through words) in the words of a song. Any attempt to do so, may interrupt or even distort the poetic beauty and lyrical quality of a song.

Secondly, another side of a song writer's responsibility is to feel nuances of feelings and express them in words. For example the feeling of sorrow may comprise within it all kind of pains and sufferings, but it has different shades and colours in relations to response and reactions. The sorrow felt at the demise of one's mother, and sorrow of wants and deprivation are not to the same. But in both cases, there is the presence of fine feelings. These feelings are sharp but this is revealed only for the point of its limit. For example the lyricist does not enjoy the scope of comparing the feelings expressed with other similar reactions for amplification. That is the lyricist is bound not to engage in verbosity, and express his feelings in limited number of words. The basic difference between poetry and song also lies in this point.

4.01.02 Poetic quality :

The modern songs are based on talk (word). It has its place both in literature and music. Therefore one important feature of modern song is to contain poetic beauty. Poetry is the meaningful melodious words to reveal the poet's imagination. The lyricist is poet. Therefore in their lyrical compositions merely the arrangement of words for setting tune is not adequate. The words in the song must also be effective enough enable the reader and audience to lift up to the world of the lyricist's imagination. Since tune is a matter of hearing (auditory), and modern lyrics are coloured with this auditory tune, therefore, the inherent thought and meanings should also correspond with it. That is, the lyricist must aim at enabling the audience to understand the meanings of the words through its very tune.

However, not all the modern songs do contain these two qualities in equal amount. The main reason behind this is the dual of composition of lyrics (priority of both speech & tune). To determine both these qualities of lyric, the lyricist has to decide it on the ground of its place of use. For example the lyrics of the movies give priority to tune over words. While setting the tune of these songs, the musician takes into account on the story of the film or the point of climax. So it can be said too that, the composition of lyrics are also based on the story of a film or the point of climax. In other fields, the lyricist has enormous scope for expression of literary values, in his individual compositions.

4.01.03 Lyrical quality :

Another important element of lyrical poetry is its lyrical quality. It affects both on the aesthetics of composition and tune. Like irrelevant dull talk, rhymes poetry may have an appeal on our minds, but it never becomes pleasant in terms of hearing and reading. (Incidentally, it may be mentioned that the beauty of modern poetry lies in its pattern and structure, It may be different in case of audibility and structure) Therefore rhyme helps poetry as an element to make it pleasant for hearing and reading. Given the fact that songs are the most beautiful expressions

of the feelings of the human hearts, rhyme becomes most indispensable. Hence, the relation between the words of a lyric and the tune is organic.

It is not only in modern songs, but in traditional songs also for convenience judicious expressions of the tune. The songs were written dividing them into three parents – sthayee, (main), the Antara (interim) and the Sanchari (the extension) with a view to preserving the lyricality of the songs. But keeping pace with the rapidity of the movement of modern life, the song writers must have confused themselves to the first two stanzas only. Not only in modern songs, but in classical music also only the sthayee and the Antara tunes are used. There are, however a few ragas where all the three stages are put to use.

Never the less, two types of rules of expressing tunes upon the sthayees and the Antaras of modern songs. First through synthesis or assimilations of rhyming and tune; and secondly, solely through tunes. In general, the first rule is applied in almost all the modern songs. Because, although the lyricist and the tune setter proceeds separately, that is, although the poet in a skilled lyricist who can express emotion without help of rhyme, but without help of the tune setter, it is not easy to set tunes to rhymeless compositions. On the other hand, the lyricist gets more freedom in expressing these feelings. Therefore, with the prospect of setting tunes the lyricist by and large makes his composition with rhyme in order to keep it easy or convenient for tune setting.

4.02 Tune of song :

Tune is the soul of all kinds of songs. The tunes (melody) of classical music, folk songs and mythical songs are primarily natural and emotional. These songs have drawn their potential of enthusing the audience as they are performed in particular contextual environment and are composed in abiding by the rules of performance the place, role and context. But they are no hard and fast rule regarding the expression of place, time and emotions in modern song. The same number may be presented or performed by various singer in various ways. Like as the lyricist does not have to bring into consideration the limits at the time of his writing a song, in the similar manner, the tune setter does not bring in to consideration (or it is not possible) the actual emotion and feelings of the lyricist while setting tune to the lyrics. In general, the tune is set primarily aiming at the emotions feelings apparent in the lyrics. In this context also it is seen that the tune setter keep in mind the point of popularity while setting a tune. In order to acquire this kind of popularity tune setters especially rely on the songs which have remained very popular or on the songs acquiring novelty based on the tunes of those numbers. Therefore, it is obvious that, there is scope for creation of tunes from song or from the tunes of several songs. The mystery of tune has been revealed as much as new songs are being written and in consequence the principle of tune setting that was in fashion in early times has become almost extinct and the new trend that has set in may be termed as ‘cooking fish with its own oil without pouring oil by the cook.’ i.e set tunes to new songs by borrowing lines from other songs but creating his own line for the lyrics.

To make an assessment of this new trend of tune setting. We have to take each song with the musical notations (swaralipi) which is something impossible. Still if we listen to the modern songs comparing them with tunes of songs of various communities, there emerges three types of tunes. They are :- Tune of Indigenous Songs, Regional tunes and National tunes.

4.03 Vocal Quality :

The vocal quality of the singer plays a key role in raising the standard and enlivening a song, as much as the words of lyrics and tune of the tune setter does. There is no distinction between the vocal quality of the classical singer and the singer of modern song. All kinds of singing,

or singers of all categories of song must have to acquire mainly the following three musical qualities.

4.03.01 Justification of the Tune :

Whether a tune is created on the basis of the thoughts and feelings of the lyrics, or on the basis of the features of composition, a tune is the creation of the tune setter. The capability to express the tune into is not the only requirement on the part of a singer. The success of a singer depends upon how he makes the tune more musically enthralling by making a synthesis of his voice rhyme and melody.

4.03.02 Fluency of Voice :

The resource that makes a song attractive to the ear is mainly the fluency of the singer's voice. Voice emerging through suspension of the vocal cord, voice coming out only through the nostrils or broken voice damages the audible beauty of a song. Such barriers or faults of singing are the ability to smoothly maintain the grace and charm of the song, rhythm, throw etc. are control over respiratory system.

4.03.03 Maintenance of musical rule :

Apart from the above mentioned two qualities, the singers of all category must also acquire a fair knowledge of Taal, Maan & Laya. It is the synthesis or synchrony and music originate from this very ground, even our day to day conversations are without time and place and tune and melody repels over ears. Through the modern songs are prosaic in character, yet, to give justice to the words one needs proper rhyme vs rhythm. That is why, a singer must acquire a fair idea of these musical rules.

5.00 Conclusion :

From the discussion made on the topic “Musical Features of Modern Assamese Song : An Analytical Study” it is found that the tradition of Assamese songs has been in the incessant flow from early time through both oral and written literature. Like modern literature, modern song also has a history. The publication of the Arunodoi in the 1846 not only contributed towards ushering of the modern Assamese Literature but also brought modernity in the field tune setting and melody of Assamese song. Withdrawn from the traditional tunes and lyrics. The tunes of three songs were drawn from western music and they were primarily based on the tunes of Christian divine songs. The second phase of change in the lyrics and the art of composition of the Assamese modern song was effected by the lyricists of the Jonaki period. The first person who gave a written form to modern Assamese song was Lakhiram Baroah. His book “Sangeet Kosha” published in 1910 contains songs with nations.

The trend or the stream of modern Assamese song can be divided into two types. They are ...

(1) Song of pre-Independence and

(2) Song of post-Independence .

The essential features of the songs of pre-Independence are: nationalistic and patriotic, intimacy with rural life, love of nature spirituality , sympathy for the community life, and tunes of various folk songs (eg. Biya Naam, Aai Naam based songs). On the other hand the songs written in the post Independence era have the key themes like empathy for the downtrodden class, assimilation and unity, pride for the glorious heritage, expression of personal thoughts and emotions, giving stress to reflectiveness and subtle emotion and feelings.

From the discussion on the musical qualities of Assamese modern songs have reflected the contemporary Assamese society in an aesthetic and well organized manner. As a result of this the modern songs have become the ever cherished matters for the society. The modern songs have brought equal priority to the tune setter and the singer, besides the lyricist. Poeticity , lyricism and feelings became prominent elements in the art of writing songs. Addition was made of the tunes of indigenous traditional songs, along with the regional and national tunes of India in the field of tune setting.

Hence, in fine we may say that the area of modern song is vary vast. There is much scope has future study in this area. The art of composition lyrics vary from one lyricist to another, and though all the lyricists represent their times in some way or the other, the art of composition and the style of presentation of some few lyricists are very subtle and they write with a keen observation.

End note :

1. Suren Goswami, *Asomiya Adhunik Geetot Dristipat*, pge. 16
2. Ibid, pge. 17

Bibilography:

1. Goswami Prafulla Dutta (Ed.), *Baro Mahor Tero Geet*, Sahitya Akademi, 4th publish, 2017
2. Goswami Luknath, *Adhunik Asomiya Sangeetor RupkarSokol*, Rekha publication
3. Ibid, *Adhunik Asomiya Sangeetor Itihas*, Rekha Prokashon
4. Goswami Suren, *Asomiya Adhunik Geetot Dristipat*
5. Nath Dr. Prasanna Kumar, *Aadhunik Asomiya Geet –Porichoi Aru Porjaluchana*, Jyoti Prokashon
6. Neog Maheswar, *Asomiya Sahityar Ruprekha*, Chandra prokas, Guwahati, 1st publish, 1962
7. Sarmah Satyendranath, *Asomiya Sahityar Itibritto*, Bani prokas, pathsala, 1st publish: 1959
8. Sarma Sashi, *Asomor Lukosahitya*, Student Stores publication, 3rd Edition, 2016



सूफी काव्य साहित्य की प्रवृत्तियां (विशेष सन्दर्भ मलिक मुहम्मद जायसी)

सत्यनारायणप्पा

सहायक प्रोफेसर, हिंदी- विभाग,

नागार्जुन कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, चिक्कमरलि, डोड्डामरलि,
नंदी पोस्ट व होबली चिक्काबल्लापुरा तालुक- जिला, कर्नाटक राज्य, पिन- 562101

विषय प्रवेश:-

मलिक मुहम्मद जायसी ने भक्तिकालीन सूफी काव्य धारा प्रेममार्गी शाखा में भूमिका अदा कर सूफी सूर्य रूप में प्रसिद्ध हुए. जायसी ने सूफी-प्रेम-काव्य धारा में पद्यावत, सामान्य सर्वत्र हो और विशेष गैर-सर्वत्र होता है जायसी काव्य की वैसे जायसी को सूफी-काव्य-धारा प्रवर्तक माना जाता है उनके मलिक मुहम्मद जायसी ने भक्तिकालीन सूफी काव्य धारा (प्रेममार्गी शाखा) में भूमिका अदा कर सूफी-सूर्य आखिरी कलाम, कहरनामा सहित कई रचनाएं लिखी सामान्य और विशेष में काफी अन्तराल होता है विशेषताएं भी गैर-सर्वत्र रूप में है जो केवल एवं अधिक रूप में सूफी-काव्य-धारा से ही मेल खाती है साहित्य में विषयवस्तु अंतर्गत प्रेम-व्यंजना, कथानक रुढ़ियां, लोक-तत्व, सांस्कृतिक दृष्टि, प्रकृति-चित्रण, सौन्दर्य दृष्टि, रूपक तत्व आदि-आदि विशेषताएं विद्यमान है. उपरोक्त विशेषताएं ही जायसी का साहित्यिक योगदान है.

प्रेम-भावना सम्बन्धी:-

रूप में सूफी काव्यों में प्रेम की व्याख्या कुछ यूँ है उनकी प्रेम-व्यंजना में आत्मसमर्पण-कष्ट सहिष्णुता, माधुर्य-रस, देवी सम्पदा, ईश्वरीय-सौन्दर्य, परमसत्ता रूप में स्थापित किया है. जायसी की प्रेम-व्यंजना के स्वरूप अति-बहु-रूप में माना है. वे प्रेम को आग-पानी, जीवन-मृत्यु, साध्य-साधन, कठोर-कोमल, मादक सुरा-मोक्ष अमृत, संयोग-वियोग आदि-आदि स्थापित करते है जायसी की प्रेम-भावना प्रेम वासना को धोती है तो प्रेम-भाव को शांत करती है.

"तीनि लोक चौदह खण्ड, सबै परे मोहि सुझि

पेय छांडि नहि लोन किछु, जो देखा मन बुझि"

एषनाएँ का अंत एवं कामनाएं खाख होती है चिंताओं की चिता बन जाती एवं बैचनी रुक जाती है, प्रेम-साधना लक्ष्य प्राप्त कर ज्ञान रूप में लिप्त हो जाती है. जायसी प्रेम-भावना में प्रेमी मोह-माया के जंजाल से मुक्त होकर अपनी द्वेष आदि पर लगाम लगाकर अपने द्वंदों को मिटा, सब कठिनाइयों आदि को पार करता हुआ खुद ही दीपक-देखनहार बनकर प्रिय-प्रियतम बन सर्वेसर्वा रूप धारण कर कार्य करता है • अंत में वह (प्रेमी/प्रेमिका) पूर्ण अद्वैत प्राप्त कर अखंड

आनंदस्वरूप में लीन हो जाता है। जायसी का आधार ग्रन्थ 'पद्मावत' लौकिक-प्रेम से पारलौकिक-प्रेम की और अग्रसर होता है एवं इसमें साहित्यिक 'इश्क हकीकी' के दर्शन होते हैं जायसी की प्रेम-भावना में प्रेम रूप में विरह-अग्नि, सदैव-मिलन, रात्रि-बैचेनी, दिन-सुख आदि है जायसी प्रेम को कर्म, धर्म, पंथ, मुक्ति, स्वप्न, सुषुप्ति, जीवन-मरण सम्बन्धी तत्त्व विद्यमान है एक पद्यांश प्रस्तुत है।

"प्रेम घाव दुख जा न कोई। जेहि लागि जाने पै सोइ ॥
परा सो पेम समुद्र अपारा। लहरहि लहर होइ बिसभारा ॥
विरह भंवर होई भांवरी देह। खिन-खिन जीव हिलोरहि तोई
खिनहि निसास वृडि जिअ जाई। खिनहिं उठे निससै बौराई ॥
सिनहि पति खिन होई मुख सेता। खिनहि चेत खिन होई अचेता ॥
कठिन मरन तें पेम व्यवस्था। न जिअं जिवन न दसई अवस्था ॥"2

सूफी काव्य प्रेम भावना में जायसी ने सर्वव्यापकता, सार्वभौमिकता, शीर्ष, अतियता, सर्वत्र का गंभीरतापूर्वक समायोजन किया है जायसी ने प्रेम-व्यंजना में आध्यत्मिकता, प्रतीकात्मकता, अनन्यता, एकाग्रता सहित फारसी प्रभाव भी स्थापित किया है।

कथानक रूढ़ियाँ सम्बन्धी:-

जायसी के सूफी-काव्य की आधारभूत प्रवृत्ति सिद्ध हुई है कथाकार काव्य में रोचकता एवं निरंतरता स्थापना हेतु प्रसंगों, प्रतीकों, कहानियों, किस्सों, आदि का प्रयोग किया करते हैं जिन्हें 'कथानक रूढ़ियाँ' की संज्ञा दी जाती है जायसी ने इन्हें कहानियों एवं आख्यानों माध्यम से अपने साहित्य में प्रस्तुत किया है जायसी ने इन कथानक रूढ़ियों में 'द्वीप पर सुंदर स्त्री मिलन' के माध्यम से पद्मिनी की प्राचीनतम कथा का समायोजन किया है जो सात-समुन्द्र पार, नौ-द्वारों के पहरों पर सैनिकों की निगरानी में रहती है उसका वर्णन किया है। उसके सौन्दर्य से चन्द्रमा-कैलाश आदि प्रभावित होते दिखाए हैं ऐसी सुन्दरी द्वीप पर नायक को मिलती है जिसे कथानक रूढ़ि रूप में स्थान दिया, 'पक्षी द्वारा सम्प्रेषण कला' रूप में जायसी जी ने तोते, हंस, सुक को कथानक रूढ़ि दिखाया है पक्षियों का सौन्दर्य भी कथानक रूढ़ियाँ रूप में द्रष्टव्य है। भारतीय संस्कृति में राजाओं को 'सिद्धि-प्राप्ति हेतु जोगी बनना' दिखाया गया है। पद्मावती के सौन्दर्य को हीरामन तोते से सुन रत्नसेन, पूरण, गोपीचंद आदि उसकी प्राप्ति-हेतु जोगी रूप धारण कर लेते हैं। जायसी ने 'प्रेमोदयः स्वप्न-दर्शन एवं चित्र दर्शन प्रयोग माध्यम से उत्पन्न किया है। जायसी ने 'दूती' कथानक रूढ़ि के मध्यम से दूती द्वारा भेष बदल, धार्मिक मोह में बाँध, विवेक चालाकी-भय सहित लोभ-माया दिखा नायिका का हृदय-परिवर्तन हेतु रूप में दिखाया गया है। हीरामन तोता एक-स्थान पर रत्नसेन को पद्मावती का सौन्दर्य-रूप दिखाकर रत्नसेन को बेहोश करा देता है। जायसी ने कथानक रूढ़ि में 'सात-समुन्द्र' को दिखाया है। इन सात समुन्द्रों के नाम खारे, खीर, दधि, उदधि, सुरा, किलकिला, मानसर है। मानसर खण्ड का प्रस्तुत अंश-

एक दिवस पुन्यों तिथि आई। मानसरोदक चली नहाई॥ पद्मावती सब सखी बुलाई। जनु फुलवारी सबै चलि आई॥
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सु केत करना, सब बेली ॥
कोइ सु मौलसिरी, पहुपावती। कोइ जाही जूही सेवती ॥
कोइ सानेजरद, कोइ केसर।
कोइ सिंगार हार नागेसर।
कोइ कूजा, सदबर्ग चमेली।

कोइ कदम सुरस रस बेली॥
चलीं सबै मालती सँग, फूर्ती कँवल कुमोद
बेधि रहे गन गंधरब, बासपरम दामोद"2

ये भारतीय कथानक में अपना विशेष स्थान रखते हैं जायसी ने 'देवी प्रकोप' माध्यम से किलकिला समुंद्र में लहरें उठना, समुंद्र में बेलगाम वायु चलना . समुंद्री जहाज का डूब जाना एवं राक्षस द्वारा समुंद्र-भंवर में डालना आदि-आदि देवी-प्रकोप रूप में दिखाया गया है 'पार्वती द्वारा परीक्षा लेना जायसी के कथानक रूढ़ि रूप में विद्यमान है. यह परीक्षा रत्नसेन की होती है जिसमें वह सफल होता है और बाद में शिव-स्तुति होती है. 'महादेव द्वारा सिद्धि-दान' प्रदान करना दर्शाया गया है. ऐसे सिद्धि-दान में महादेव की कृपया अनिवार्य बताई गई है. महादेव स्वयं नायक का मार्गदर्शन करता है तथा राजा को सिद्धि-गुटका भी प्रदान करते हैं. 'लगभग सभी देवताओं द्वारा मदद करना' जायसी के सूफी काव्य की कथानक रूढ़ि बनकर उभरी है. रत्नसेन-पद्मावती मिलना हेतु देवता गण भाट रूप करते हैं, देवताओं में सर्वोच्च महादेव ब्रह्मा, विष्णु, शेषनाग, 33 करोड़ देवता, 96 कोटि मेघ, 50 अग्नि-जल, सवा लाख पर्वत, 9 नाथ, 84 सिद्ध, गरुड़ एवं गिद्ध की सहायता नायक/नायिका हेतु की जाती है. कथानक रूढ़ि के अंतर्गत 'स्वयं समुंद्र द्वारा ब्राह्मण वेश धरना' सूफी काव्य की प्रवृत्ति है. यह राजा-रानी को जुदा कर देते और वियोग में राजा आत्मदाह का प्रयास करता है तथा समुंद्र द्वारा रानी से मिलाने का आश्वासन मिलने पर बैशाखी पकड़ाकर नायक को मंजिल तक पहुंचाता है. जायसी ने 'समुंद्र उत्पन्न रत्नों' को कथानक रूढ़ि में समायोजित किया है. उन्होंने चार रत्नों में हंस रत्न, सोनहा पक्षी का वंशज रत्न, शार्दूल-शावक रत्न और पारस पत्थर रत्न को कथावस्तु में स्थान दिया है. जायसी ने 'यक्षिणी-सिद्धि' कथानक रूढ़ि के अंतर्गत एक दिन अमावस्या की रात्रि चंद्रमा दिखा असम्भव कार्य करके दिखाया. जायसी ने 'सती' सम्बन्धी कथानक रूढ़ि के माध्यम से कथावस्तु रूप में उस समय में सामन्ती युग आधारित जन्म-जन्मान्तर सम्बन्धी धारणा के नारी को सती प्रथा जैसे रीति-रिवाजों में दर्शाया है।

लोक तत्व सम्बन्धी:-

जायसी की प्रवृत्तियों में जनजीवन सम्बन्धी चित्रण दर्शाया है, लोकतत्त्व का अर्थ समाज में लोक-जीवन एवं उनके रहन-सहन आदि से लिया जाता है. जायसी को सूफी सिद्धांतों के ज्ञाता संग भारतीय परिवेश में जीवन यापन करते दीखते हैं. जायसी की सूफी-काव्य-प्रवृत्तियों में 'जन-जीवन' द्वारा उच्च वर्ग (ऐश्वर्य) जिनके पास सरोवर, तालाब, मेवे, और बड़े-बड़े विशाल बाजार हैं. उनके वस्त्रों संग आभूषण दिखाए, मध्यमवर्ग वो थे जो धनवानों के पास कार्य करते थे. निम्न वर्ग में खेती, खेल, मजदूरी, नाचने वाले आदि शामिल हैं. 'नारी की दयनीय स्थिति' में पितृपक्ष प्रधान दर्शाया है जहाँ पत्नी पति पर निर्भर है तथा कुछ महिलाएं महलों में नौकरी भी करती हैं. समाज में पुरुष वर्ग अपनी प्रभुता रखता है. एक अंश प्रस्तुत है-

"तिन्ह संतति उपराजा भाँतिन्ह भाँति कुलीन हिन्दु तुरक दुवौ भए अपने अपने दीन""3

समाज में स्त्री को विलासिता वस्तु माना जाता है तथा निम्नवर्ग महिलाएं दासी जीवन जीती हैं. समाज में हिन्दू महिलाएं मुस्लिम शासकों से डरती एवं कुछ महिलाएं वेश्याओं का काम करती हैं।

आदि पिता जो अहा हमारा । ओह नहिं यह दिन हिंए विचारा ॥

छोह न कीन्ह निछोहैं । गा हम बेचि लागे एक गोहूँ ॥

मकू गोहूँ कर हिय बेहराना । पै सो पिता नहिं हिंए ॥"4

जायसी ने लोक तत्व के माध्यम से प्रयाग-बनारस-द्वारिका-केदारनाथ-अयोध्या-हरिद्वार-मथुरा, बद्रीनाथ, रामेश्वर, त्रिवेणी, कुरुक्षेत्र, गोरखनाथ आदि तीर्थ स्थलों को स्थान दुनी है। भारतीय समाज में अवतारवाद दिखाया गया है। जायसी ने समाज में सती प्रथा को दर्शाया है। बेटी घर से विदा होकर पूर्णरूपेण पति के पराधीन हो जाती है। विवाहित नारी पति संग सम्मानित और विधवा रूप में सदैव अपमानित होती रहती है। पति के मरते ही पत्नी को मरना होता था और उसको मारने की व्यवस्था रूप में जोर-जोर से बाजा बजाना, दान-पूण्य जैसी क्रियाएं करना, सात-बार शव परिक्रमा करवाकर आग में डाल दिया जाता था। क्षत्रिय वीर गति प्राप्त वीरता दिखाते हैं जिसे जोहर की संज्ञा दी जाती है। जायसी ने लोकतत्व प्रवृत्ति में 'पर्व-त्योहारों' को भी स्थान दिया है। भारत जैसे देश में पति-आयु वृद्धि हेतु कारवां का वर्त दिखाया है। समाज में सावन माह में तीज त्यौहार पर झूला झूलना, कार्तिक माह में दीपावली तथा अगहन माह में नव-वस्त्रों को धारण किया जाता है। जायसी जी ने 'विवाह-विधि' को सामाजिक इकाई परिवार को बढ़ाने हेतु दर्शाया है। विवाह मांगलिक कार्यों के लिए पगड़ी-धारण, घोड़ी-सवार, द्वार-सजावट, मंडप एवं चौक की पूजा, कहार-केवट, जल-कलश, दम्पति गठबंधन, पंडित द्वारा वेद-पाठ, सात फेरों से पूर्व वर-माला आदि को दर्शाया गया है। डॉ. अमरबहादुर सिंह लिखते हैं, "कहरानामा में जायसी ने महारू अथवा कहार जाति के दो रूपों का वर्णन किया है- एक केवट होकर नाव चलाने, मछली पकड़ने पकड़ने तथा दूसरा डोली उठाने का।"⁵ सामाजिक में जायसी ने 'धार्मिक विश्वासों' में धरती को प्रथम मानकर वेदों में आस्था दिखाई है। भारतीय समाज में पंडित को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। जायसी ने अपने काव्य में उपनिषदों, पुराणों एवं ऐतिहासिक काव्यों में कथाओं की समाहित किया गया है। समाज राम एवं कृष्ण की लीलाओं को दर्शाया गया है तथा साथ-साथ अर्जुन कथा, भीम कथा, श्रवण कथा, दुष्यंत-शकुन्तला कथा और राजा भोज के जीवन सम्बन्धी कथाओं को सूफी काव्य साहित्य की प्रवृत्ति रूप में स्थापित किया गया। जायसी की लोकतत्व विशेषता दर्शाते हुए डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल जी लिखते हैं कि, "जायसी सच्चे पृथ्वी-पुत्र थे, वे भारतीय जनमानस के कितने निकट थे- इसकी पूरी कल्पना करना कठिन है। गाँव में रहने वाला जनता का जो मासिक धरातल है, उसके ज्ञान की जो उपकरण सामग्री है, उसके परिचय का जो क्षितिज है उसी सीमा के भीतर हर्षित स्वर कवि ने अपने गन का स्वर ऊँचा किया है। जनता की उक्तियाँ, भावनाएं और मानताएं मानो स्वयं छद में बंधकर उनके काव्य में गूँज उठी।"⁶

सांस्कृतिक दृष्टि सम्बन्धी:-

मलिक मुहम्मद जायसी मानव जीवन में मानव का सम्पूर्ण विकास को संस्कृति का वृत्त माना है। जायसी की सूफी मत पर भारतीय दर्शन को संस्कृति का प्रभाव हमें बहुदेववाद, साख्य-मत, हिन्दू-सूफी रहस्यवादी शब्दावली, वैचारिक उदारता, अल-गजाली आदि सांस्कृतिक दृष्टिकोण स्थापित किया है। भारतीय सूफियों जायसी ने सांस्कृतिक योगदान रूप में प्रेम-प्रधानता, काव्य-दृष्टि, विस्मृति और पुनः प्रस्थापित प्रक्रिया को अपनाया है। जायसी जी ने साहित्यिक भाषा रूप में अवधि को स्थान दिया।

जायसी ने 'सामूहिक धार्मिकता' का प्रचार प्रसार बौद्धों के अनुसार किया तथा हिन्दुओं की भांति वर्त-उपहास-संस्कारों को अपनाकर भजन-कीर्तन-सत्संग-लंगर आदि सामूहिकता को अपनाया, उन्होंने 'गुरु में देवत्व भाव' रूप में गुरु-शिष्य सम्बन्ध, ज्ञान-प्राप्ति-साधन, शंकराचार्य एवं आलवारों की पूजा आदि पर जोर दिया। सूफी सम्प्रदाय में मंदिरों का विकास भी होने लगा। रामानुज की गुरु परम्परा में भारतीय सूफी मत के रूप में धार्मिक सांस्कृतिक दृष्टिकोण प्रदान किया। जायसी जी ने 'एकान्तिक प्रेम एवं अलौकिक आदर्श' सांस्कृतिक रूप स्थापित किया जिसमें उन्होंने इश्क-मजाजी और इश्क-हकीकी द्वारा दिव्य-प्रेम सम्भव बताया है। मानव प्रेम की भीतर ही ईश्वर-मार्ग पर चलकर स्वकीया और परकीया प्रेम में भिन्नता द्वारा अस्वीकार किया है। दरअसल सूफी काव्य पर जायसी द्वारा निर्गुण-धारा-काव्य का प्रभाव

दीखता है. गुरु को चमक लाने वालों की श्रेणी में रखा गया है. जायसी की 'भक्ति-भावना' हमें इस्लाम संदेह रूप में दिखती है. जैसे लिंगायत शैवों के जगतगुरु सूचकशब्द 'अल्लामा प्रभु' का साम्य भी अरबी-शब्दावली में है. जायसी की सूफी सांस्कृतिक दृष्टि में परिवेशजन्य तथा क्रिया-प्रतिक्रिया-मूलक प्रभाव पर बल दिखाया है. अतः इसमें प्रतिवाद की रति भर कोई आशंका दिखाई नहीं देती. जायसी के 'साहित्यिक कला सम्बन्धी' में हिंदी की प्रेम गाथाओं की साहित्यिक अक्षुण्ण परम्परा की शुरुआत की. सूफी को अनमोल रत्न बताया. भारतीय साहित्य में फारसी-उर्दू महत्व स्थापित किया. अन्य बोलियों पर प्रभाव छोड़ा. जिसमें कव्वाली-गजल-खयान एवं गीतों का भरपूर प्रयोग किया गया, स्मरणीयता स्थापित की।

- साहित्य में फारसी-उद महत्व स्थ

प्रकृति चित्रण सम्बन्धी:-

जायसी की काव्यगत 'प्रकृति-चित्रण' के लगभग सभी चित्रण प्रयोग किये हैं. उन्होंने 'प्रकृति के उद्दीपन रूप' को मानव के संयोग अवस्था को मध्यनजर रखकर षडङ्गतु रूप में तथा वियोग रूओप में बारहमासा रूप में प्रकृति के उद्दीपनकारी मार्मिक चित्रण सूफी काव्य प्रवृत्ति रूप में किया है. इस प्रकृति रूप में जायसी जी ने स्वाभाविक, मार्मिक, मनोवैज्ञानिक मनःस्थिति का वर्णन भी किया है. जिसका माध्यम प्रकृति उद्दीपन रूप है. जायसी ने 'प्रकृति के आलम्बन रूप' में पक्षियों, तालाबों, समुद्र आदि का चित्रण किया है. इस चित्रण में जायसी ने प्रकृति के उग्र (किलकिला समुद्र), शांत रूप (मानसर समुद्र) सहित कल्पना को मिश्रित किया है. कमल-फूलों का खिलना परन्तु समुद्र में नहीं खिलते जैसे चित्रण किए हैं. सूफी काव्य में जायसी के समय का प्रभाव भी देखने को मिलता है. जायसी ने सूफी प्रवृत्ति में 'प्रकृति के अलंकारिक रूप' में प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत बिम्ब भावों को स्थान दिया है. अप्रस्तुत में मुहावरों रूप में प्रस्तुत अंश. 'पानी जईस बुलबुला होई' 7 रूप में कह सकते हैं. जायसी ने कमल उपमान द्वारा विरह दग्धा नागमती का वर्णन प्राकृतिक रूप में शक्तिमान सूर्य-चन्द्रमा-कमल आधारित रचना की. जिससे नायिका की तुलना अतिशयोक्ति रूप में स्थापित की जायसी ने सूफी प्रवृत्ति के अंतर्गत 'प्रकृति के वस्तु-परिगणना-रूढ़ि रूप' में लावा फुलवारी, जूही, सुगंध, गुलाल, चंपा, केवड़ा, फली और फूल आदि बड़ी-सूची गिनवाई है. कथा-वर्णन के प्रतिरोध एकत्रित करते हैं. जायसी की सूफी काव्य में इनकी बहुलता है. जायसी ने 'प्रकृति के प्रतीक-संकेत रूप' में नए प्रतीकों को अपनाया. प्राकृतिक अपदा को अलौकिक भक्ति शक्ति एवं ब्रह्म को उपलक्ष्य रूप में भी दर्शाया है. उन्होंने आध्यात्मिकता को स्थान दिया है. वे सिंहलगढ़ को मानव शरीर मानना. इन प्रकृति रूप में सम को साधना को लंब संकटों से परिपूर्ण माना तो सात-समुद्र को कठिनाइयों के रूप में माना. जायसी ने सूफी काव्य प्रकृति के माध्यम से नीति और उपदेश रूप में प्रयोग कि है. जायसी ने 'रूप-सौन्दर्य के उपमान रूप' में काव्य में मानव-भावों की अभिव्यक्ति हेतु रूप-सौन्दर्य के उपमान प्रकृति का प्रयोग किया है. जिसमें विरह अभिव्यक्ति सरोवर उपमान द्वारा वर्णन किया है. जायसी ने मानव की विषाद, हर्ष आदि मनोरम अभिव्यक्ति की है. जायसी ने 'प्रकृति के संवेदनशील रूप' के माध्यम से मानवीय भावों की अभिव्यंजना की साथ ही केशों की छाँव में श्यामलता-सघनता रूप में जगत को अंधेर में डूबते दिखाकर प्रकृति-चित्रण किया है. सूफी काव्य में जायसी का प्रकृति-चित्रण स्थान रखता है।

सौन्दर्य दृष्टि सम्बन्धी:-

जायसी , सौन्दर्य के जितने आंतरिक पारखी थे उतने ही बाहरी पारखी भी थे. जिसमें उन्होंने कर्म-भाव एवं रूप सम्बन्धी सौन्दर्य को स्थापित किया तथा सूफी साहित्य को विभिन्न रोचकता, आकर्षण एवं मनोहक बनाया. जायसी जी के सौन्दर्य-दृष्टि प्रकारों में हम चित्र बहुरूपता, मर्म-करीब और जीता-जागता रूप देखते हैं. जायसी जी, परम्परावादी

कवि-लेखक रहे इसमें कोई सन्देश नहीं। जिनके अनुसार मांग, बरौनी, भौंह, अघर, कपोल, ग्रीवा, पेट, मुख, कटि आदि का अति-सुंदर उल्लेख किया है। जायसी प्रकृति प्रेमी भी अधिक रहे इसमें प्रकृति-सुन्दरीय रूप में दर्शायी गई है। जायसी सौन्दर्य दृष्टि में विरह वेदना का चित्र अधिक गहनता सजीवता, मार्मिकता और गंभीरता से करते हैं। जायसी के 'भाव-सौन्दर्य रूप' में सजीव और सुकुमार चित्र प्रस्तुत किए हैं। वही जायसी 'कर्म सौन्दर्य रूप' की व्याख्या के अंतर्गत कर्म सौन्दर्य चित्र में चारुता एवं भव्यता सहित मेहनत, विश्वास, वीरता, भगवान् पर भरोसा आदि चित्रण किये हैं। जायसी का 'रूप सौन्दर्य' प्रकृति रूप में दोनों रूपों सौम्य-भयानक में चित्रित हुआ।

रूपक तत्व सम्बन्धी:-

मलिक मुहम्मद जायसी ने सूफी-काव्य प्रवृत्तियों में विशेषता रूप में 'रूपक तत्व' का समावेश किया है। उन्होंने अपने काव्यों में प्रेम-कथाओं में एक-एक रूपक कथा मानकर सृजन किया है और साहित्य को अन्योक्तियुक्त रूप स्थापित किया है। जायसी जी, कहते हैं कि पद्मावत में रत्नसेन (आत्मा), पद्मावती (परमात्मा), हीरामन तोता (गुरु), राघवचेतन (शैतान), नागमति (सांसारिक पंच) तथा अलाउद्दीन (माया) रूप में रूपक तत्व है। जायसी जी ने इन रूपकों को इस प्रकार साहित्य में प्रयोग किया है जैसे महाकाव्य-शैली में विस्तारपूर्वक कही गई एक ऐसी प्रेम गाथा जो युगों से लोक में एक आदर्श प्रेम-कथा रूप में प्रचलित है। जायसी जी सूफी थे इसलिए इनके कथावस्तु रूप में प्रेम-का-स्थान निश्चित किया गया। जिससे उनके साहित्य की प्रवृत्तियाँ हृदयस्पर्शी एवं संवेदनशीलता निर्माण कर गईं। जिसके परिणामस्वरूप सूफी काव्य की प्रवृत्तियों में आध्यात्मिकता के दर्शन होते दीखते हैं। जीवन में आत्मा-परमात्मा वाला रूपक तो इस पर सही रूप से घटित ही नहीं हो पाता बल्कि इस साहित्यिक प्रवृत्तियों में समाज में यथार्थ लोक/जन-जीवन का रंग बहुत अधिक है।

काव्य दृष्टि सम्बन्धी:-

जायसी, सूफी साहित्यिक प्रवृत्ति में अपना जितना योगदान भाव-पक्ष से प्रस्तुत करते हैं उतना ही कला-पक्ष से अपना दृष्टिकोण स्थापित करते हैं। जायसी की समस्त काव्यों का प्रतिनिधित्व उनका 'पद्मावत' महाकाव्य करता है। जिनेम काव्य-दृष्टि भी उजागर होती है। भक्तिकाल में दो महाकाव्य (रामचरितमानस एवं पद्मावत) लिखा गया उससे पूर्व पृथ्वीराज रासो महाकाव्य तथा इनके पश्चात प्रिय-प्रवास का निर्माण हुआ, जायसी जी, सच्चे अर्थों के कला-प्रेमी भी रहे हैं। जायसी जी ने सूफी काव्य प्रवृत्तियों में चित्रात्मकता का समावेश किया जिसमें 'नख-शिख खंड', 'बसंत-खंड', 'दूती-वर्णन' आदि प्रयोग कर चित्रात्मकता दर्शायी है। जायसी जी ने बिम्बात्मकता रूप में वस्तु संश्लिष्ट रूप में नायिका के मुख को चन्द्रमा और शरीर मलयगिरी का चन्दन तथा बाल साँपों के समान दर्शाकर बिम्बात्मकता का प्रदर्शन किया है। जायसी जी ने प्रतीकात्मकता में प्रतीकों के मध्यम से अमूर्त को मूर्त, अदृश्य को दृश्य, अश्रव्य को श्रव्य तथा अप्रस्तुत को प्रस्तुत रूप में बनाया। यथा: दशम दुआर = ब्रह्म-रन्ध्र, नवपौरी नव इन्द्रियाँ आदि आदि। जोकि सूफी साहित्यिक प्रवृत्तियाँ हैं।

जायसी की काव्य-दृष्टि प्रवृत्तियों में 'काव्य-रूप' में हम पद्मावत को एक महाकाव्य की उपाधि देते हैं। जिसमें प्रेम कथा के साथ-साथ शांत रस, वीर रस, क और न रौद्र रस के दर्शन होते हैं। इन सबसे जायसी जी को श्रृंगार रस पसंद है। जायसी जी नायक-नायिका के चरित्र-चित्रण में स्वभाविकता-शालीनता-मार्मिकता प्रवृत्ति ख देखने को मिलती है। जायसी जी 'शैली' रूप में उहात्मक, वर्णनात्मक, उपदेशात्मक एवं कथा-उपकथन रूप में प्रस्तुत करते हैं। जायसी जी की भाषिक प्रवृत्ति रूप हम भाषा का व्यवहारिक शब्दावली-मुहावरों-लोकोक्तियों का प्रयोग करते हैं। जिससे साहित्यिक भाषिक

प्रवृत्ति में आकर्षण-लाक्षणिक एवं सारगर्भिता का समावेश होता है। जी 'अलंकार' प्रवृत्ति रूप में शब्दों अलंकारों एवं अर्थालंकारों का अधिक प्रयोग करते हैं। उनके प्रमुख शब्दालंकारों अलंकार में अनुप्रास, यमक, श्लेष तथा अर्थाल उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, अन्योक्ति आदि का सुंदर प्रयोग किया गया। जिससे साहित्यिक प्रवृत्ति में सुन्दरता समाई है।

अतः जायसी के काव्य में समाज की विषयवस्तु चित्रण भरपूर मात्रा में किया गया है। जायसी द्वारा सामन्ती जीवन सहित निम्न जातियों की अभिव्यक्ति की त मुस्लिम-धर्म दर्शन से लोगों को अवगत कराया। जायसी ने अपने समाज के लोक एवं शास्त्र की अभिव्यंजना की और के स्थानों पर लौकिक प्रेम को ईश्वर से बढ़कर म जायसी जी हिन्दुओं के प्रति सहानुभूति रखते हैं तथा भारतीयों को वृद्धमल संस्कृति की मनोहारी व्याख्या भी की है। सूफी काव्य में अतुल्य काव्य-वैभव का समावेश जायसी जी प्राकृतिक वातावरण के अंगभूतों के अंगभूतों वर्णन में पौराणिकता-सहित-काल्पनिकता के आवरण की निवारण किया है। जायसी ने अपने काव्य वर्णनों में संश्लिष्ट एवं आलंकारिक शैलियों के साथ-साथ ज्योतिष, कामशास्त्र, पुराण, दर्शन, कला, राजनीति, आदि ज्ञान भी प्रदान किया है। उनका ज्ञान धार्मिक भक्ति और विज्ञान दोनों का मिश्रण भी है। जायसी जी पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग करते हैं। सामान्य जनजीवन के आवास, भोजन, उपकरण का प्रयोग शब्दावली रूप उन्होंने लोकोत्तियों एवं मुहावरों में पाठकों की रुचियों, उनके साधनों, उनकी समस्याओं एवं उनके सामाजिक लक्ष्यों के संदर्भ में विपरीत-भावों तथा पदार्थों के मिश्रि की अद्भुत अक्षमता है। मलिक मुहम्मद जायसी जी प्रेमभाव, कथानक, विषयवस्तु, चरित्र-चित्रण, कला पक्ष आदि-आदि रूप में बहुज्ञ सिद्ध-काव्य-कवि है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. सम्पादक डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पद्मावत, पृष्ठ 134-135,
2. जायसी ग्रंथावली, सम्पादक आचार्य रामचंद्र शुल्क, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण 2013 नयी दिल्ली-110002 पृष्ठ स.187
3. जायसी ग्रंथावली (सं) माताप्रसाद, हिंदुस्तान एकेडेमी, इलाहाबाद, पृष्ठ 656, प्रकाशन संस्करण 1952
4. पद्मावत, जायसी ग्रंथावली, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, सं २०१३ पृष्ठ 586,
5. कहरानामा मसलानामा, सम्पादक अमरबहादुर सिंह, हिन्दुतानी एकेडेमी, इलाहाबाद, पृष्ठ-89, प्रकाशन 1962
6. पद्मावत, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, लोकभारती प्रकाशन नई दिल्ली -110034
7. जायसी साहित्य में अप्रस्तुत योजना, डॉ. विद्याधर त्रिपाठी, लोकवाणी प्रकाशन, संस्करण-2008 दिल्ली-1100



दिव्यांग विमर्श

डॉ. अश्वनी कुमार ध्रुव

प्रोफेसर,

शास.महाविद्यालय नगरी, जिला-धमतरी (छ0ग0)

साहित्य हमेशा से ही समाज को एक समग्र दृष्टि प्रदान करता है। वर्तमान भारतीय समाज की संरचना ऐसी है कि जिसमें अनेक वर्ग जाति, संप्रदाय, धर्म के लोग हैं जो आपस में प्रेम भाव से रहते हैं। आपसी प्रेम की यह परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। भारतीय समाज में दिव्यांगजनों का गौरवशाली इतिहास रहा है। समय में हमारे समाज का बड़ा हिस्सा किसी न किसी तरह की दिव्यांगता का दंश झेल रही है। आदिकाल से ही विकलांग व्यक्तियों ने समाज के लिए व्यापक योगदान दिया है। पहले इन्हें सहानुभूति की दृष्टि से देखा जाता था परन्तु आज दिव्यांगों की प्रति लोगों की धारणा बदल गयी है। आज दिव्यांगता होना अभिशाप नहीं है। लेकिन सामाजिक जनों के रवैये और धारणाओं में परिवर्तन न होने के कारण दिव्यांगताओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऐसे में इनकी मनःस्थिति को परिवर्तन करने के लिए दिव्यांग विमर्श की आवश्यकता है। दैनिक जीवन में कई स्थान पर वह अन्य लोगों की तुलना में अधिक नुकसान झेलते आ रहे हैं। ऐसे में दिव्यांग विमर्श समाज की धारणीय विकास की एक पहल है। इसके माध्यम से समाज में सकारात्मक योगदान देने वाले दिव्यांगों के जीवन के प्रेरक प्रसंगों द्वारा अन्य दिव्यांगों की प्रतिभा को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

विकलांग शब्द की शब्दगत अर्थ की बात करें तो उसे अपंग, अपाहिज, निशक्त अंग बाधित या अंग्रेजी में Crippled ,

Hendicapped और सरकारी शब्द Disabled भाषाविद कहते हैं। सामान्य जन समुदाय अलग-अलग परिवेश में अपने मानसिक भावों और परिस्थिति जन्यता से उनका अर्थ निकालते हैं।

प्राचीनकाल से ही साहित्य में दिव्यांग चरित्रों को प्रस्तुत किया है। परन्तु इन चरित्रों की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। दिव्यांगता वैसे तो जन्मजात या दुर्घटना के कारण उत्पन्न होती है। उनके लिए कहा गया है –

उम्मीद मत छोड़ों

जब आपको लगेगा कि

**अब कुछ नहीं हो सकता
तभी चमत्कार होगा ।**

साहित्य समाज का अन्योन्याश्रित अंग है। समाज साहित्य से जुड़कर एक आधारभूत सेतू बन मानव जाति को उसमें समाहित तथ्यों को उभारती है, और वही साहित्य समाज में स्थापित समस्याएँ, गति विधियाँ घटनाएँ एवं परिवेश तथा मानवीय संवेदनाएँ जो सर्वेदनात्मक दृष्टिकोण से साहित्य में निहित होती है।

संसार में ऐसा कोई मानव नहीं है जो पूरी तरह से निर्दोष हो या पूरी तरह से गुण रहित है। संसार के सभी प्राणीयों में कुछ गुण और कुछ दोष भी है। “ दिव्यांगता की समस्या उतनी ही प्राचीन है। जितनी मानव सभ्यता। ” कभी कभी विकलांगों को देखकर लोग कहते हैं –

**यह व्यक्ति टूटता क्यों नहीं
लेकिन सच तो यह है कि**

वो टूट-टूट कर मजबूत बना होता है।

दिव्यांग समाज की बात करने से पहले हमें दिव्यांग शब्द पर विचार करने की आवश्यकता है कि ये दिव्यांग कौन है दिव्यांग का शाब्दिक अर्थ तो दिव्यांग है, अर्थात् जिसके पास दिव्य अंग हो “ यह शब्द हमारे देश के यशस्वी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने दिया है, इसके पहले इन्हें विकलांग कहा जाता था। अर्थात् –

“विकलः विकृतः न्यूनः अपूर्णः अक्षमः अल्पक्षमः शरीरोग”

मंद बुद्धि वाले प्राणी को विकलांग कहते हैं। समाज में विकलांगता से तात्पर्य किसी अंग में विकृति का आना है।

दिव्यांग को अंग्रेजी में Disability के नाम से जाना जाता है। जो काफी सार्थक लगता है क्योंकि इसका अर्थ है अक्षमता, अर्थात् व्यक्ति जो दृष्टि बाधित है उसकी अक्षमता यह है कि वह देख नहीं सकता, किन्तु अन्य कार्य को बहुत बेहतर तरीके से कर सकता है, और अंधेरे में कोई कार्य करना है तो वह आसानी से कर सकता है।

भारतीय समाज में दिव्यांगों को दया और सहानुभूति की दृष्टि से देखा जाता है। दिव्यांगों के प्रति लोगों की धारणा यह है कि दिव्यांग होना किसी व्यक्ति का उसके पूर्व जन्मों का फल है। भारतीय समाज की यह मान्यता है कि जो व्यक्ति पूर्व जन्म पाप या पुण्य करता है, उसका फल उसे अगले जन्म में मिलता है। डॉ. के.एस. वाजपेयी जी ने लिखा है कि “ जरा सोचिये जो जन्म से विकलांग है उनका जीवन दर्शन क्या होगा शायद एक शून्य जिसकी हम कल्पना मात्र ही कर सकते हैं, उसकी सोच, उसका व्यक्तित्व , बाधाएं , दूसरों पर निर्भर जीवन और एक बहुत बड़ा प्रश्नवाचक चिन्ह जिसका शायद उत्तर खोज पाना वाकई एक चुनौती है।”

आज के समय में विकलांगों (दिव्यांग) पर विमर्श होना अत्यन्त आवश्यक है। विकलांग विमर्श की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि दिव्यांग जन समाज और अर्थव्यवस्था की मुख्य धारा से बाहर होकर हाशिये पर है वे दैनिक जीवन में कई पहलुओं पर गैर विकलांग लोगों की तुलना में अधिक नुकसान का अनुभव करते हैं। कई दिव्यांग जनों द्वारा प्रतिकूल परिणाम झेलने की वजह से उनके स्वयं एवं उनके परिवार के जीवन में गुणवत्ता की कमी आती है। जिसके कारण स्वयं को अवाधित महसूस करते हैं। जबकि समाज उन्हें अपने उपर बोझ समझता है। दिव्यांगों के माता-पिता , बच्चों और भाई-बहन को भी इस नकारात्मक दृष्टि कोण, गरीबी और सामाजिक बहिष्कार का दंश झेलना पड़ता है।

विकलांगता अभिशाप नहीं – बल्कि एक चुनौति है जिसे कोई भी सम्बन्धित व्यक्ति अपनी समझदारी, विवेक, हिम्मत से स्वीकार कर स्वयं को अपने सामाजिक जीवन के विकास की मुख्य धारा से जोड़ने में कामयाब हो सकता है।

**“जिन्दगी में कभी किसी को कम मत समझना,
पूरी दुनिया को डुबोने वाला समंदर**

तेल की एक बूंद को नहीं डुबो सकता”

“विकलांग बंधु समाज हेतु बोझ नहीं है। वे भी स्वावलम्बी होकर समाज के विकास में योगदान दे सकते हैं। उनकी प्रतिभा और योग्यता को उभारने हेतु अवसर जरूरी है।”

जो व्यक्ति निम्नवत सोच के कारण “अंधे को अंधा नहीं कहा जाय तो क्या करना चाहिए” मानसिक पंगुता के द्रयोतक है। जब कोई पढ़ा लिखा मनोविशेषज्ञ यह कह दे की विकलांगों को खिलवाने से क्या फायदा ? तो यह विचार या सोच किस मानसिकता की घोटक है। जिसे हम पंगु या विकलांग कहते हैं , वो व्यक्ति हमेशा एक नयी छाप छोड़ जाता है। साहित्य विधा हो या अन्य क्षेत्र में अपना व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब स्थापित कर सकते हैं। बिमारी और विकलांगता पर किसी का वश नहीं है।



जिन्दगी पर तो है.....

जिन्दगी सतरंगी सपनों की ही हसीन मंजिल.....

इसे पाना थोड़ा मुश्किल है, पर असंभव नहीं ,

बस चाहिए विस्तार पाने की एक छोटी सी इच्छा

एक छोटी सी आशा

मानव मन में संवेदना के मूल्यों का विशेष भावात्मकता है। जो किसी भी व्यक्ति विशेष या प्राणी विशेष के प्रति उतना ही संवेदनात्मक भाव रखता है। मानव-मानव के प्रति वो भाव कहीं लुप्त हो जाता दिखाई देता है। हम संवेदन जब होते हैं जब किसी पर वेदना या दुखों का पहाड़ टूट पड़े। दुख को देखकर, आहत, निराश, हताश हो जाते हैं, अन्यथा इसी कारण वश अ.....आह हे भगवान हाय, आदि दयनीयता प्रद शब्दों का प्रयोजन करते हैं।

विकलांग जो मानसिक और शारीरिक न होकर सामाजिक मानवीय मूल्यों की भावात्मकता का ग्लानि रूप है। समाज की वैचारिक मनो में विकलांगता प्राप्त करवाती है।

मैं विकलांग न शरीर से, न मन से

जो देख मुझे रखता 'संवेदना' हृदय में

आज समाज की दृष्टि छिन्न हो गई

ऐ देख मुझे 'मैं विकलांग नहीं बना

विकलांगता समाप्त करो मन की शुद्धता से

भारत सरकार द्वारा दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 की धारा 13 (1) के अनुसार सक्षम,सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि दिव्यांगजनों को भी अन्य लोगों के समान ही चल या अचल संपत्ति का स्वामित्व का उत्तराधिकार प्राप्त करने, अपने वित्तीय मामलों पर नियंत्रण रखने बैंक एकाउंट, बंधक और अन्य प्रकार के वित्तीय जन तक पहुंचाने का अधिकार है। संविधान के अनुच्छेद 21 ए के तहत, जहां शिक्षा को मौलिक अधिकार माना गया है और विकलांग अधिनियम 1995 के अनुच्छेद 26 में विकलांग बच्चों को 18 वर्षों की उम्र तक मुक्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। जनगणना 2001 के मुताबिक 51 प्रतिशत विकलांग व्यक्ति निरक्षर हैं।

अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि दिव्यांग विमर्श साहित्य की आवश्यकता है। सरकार सुविधायें प्रदान कर रही है, नियम कानून बना रही है। किन्तु समाज का धारणीय विकास साहित्य ही कर सकता है। हमारे समाज का एक बड़ा हिस्सा दिव्यांगता का दंश झेल रहा है। इस वर्ग विशेष को छोड़कर समाज का सर्वांगीण विकास असम्भव सा है। अतः अब यह समय आ गया है कि सदियों से वंचित विकलांग समाज पर लेखनी चलाई जाए। इससे समाज का विकलांगों के प्रति जो नकारात्मक रवैया है, उसमें बदलाव होगा। दिव्यांग विमर्श से दिव्यांगों को आत्मसम्मान और स्वालम्बन की भावना का विकास किया जा सकता है।

संघर्ष करता जरूर है,
लेकिन हमें बाहर से सुंदर और अंदर से मजबूत बनाता है।
जीवन एक संगीत है,
इसे गुनगुनाते रहिए
हालात चाहे कैसे भी हो, हमेशा मुस्कुराते रहिए।
चलते रहना ही जीवन है ,
ठहर जाने से हालात नहीं बदलते,
आगे बढ़ते रहने से ही बुरा समय दूर हो सकता है।

संदर्भ :-

1. डॉ. पाठक विनय कुमार विकलांग विमर्श – दशा और दिशा
2. डॉ. यादव पूजा हिन्दी साहित्य और दिव्यांग विमर्श
3. डॉ. बाला अंजू हिन्दी साहित्य और दिव्यांग विमर्श
4. पत्र पत्रिकाओं से संकलन

मो. 9617808055,9424237228



कबीर के काव्य में आध्यात्मिक, अनुभव एवं सामाजिक विद्रोह

डॉ. ब्रजलता शर्मा

शोध निर्देशिका,

आरती शुक्ला

शोधार्थी,

पी.के. विश्वविद्यालय करैरा जिला शिवपुरी(म०प्र०)

शोध सार :-

भक्तिकालीन निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक, कालजयी सतंकवि कबीर अनुठे व्यक्तित्व को लेकर उत्पन्न हुए। उन्होंने अपनी व्यक्तिगत साधना सम्बन्धी विचारों को इस रूप में अभिन्यता किया कि वे समाजोपयोगी बन गए। कबीर ऐसे संक्रमणशील युग में अवतरित हुए जब समाज में अनेक मत मतांतरों एवं साधना पद्धतियों का प्रचलन था। उन्होंने सिद्धों की वाणी, नाथों की हठयोग साधना, सूफी साधकों के प्रेम तत्व, भारतीय वेदांत के अद्वैतवाद, इस्लाम के एकेश्वरवाद आदि में समन्वय स्थापित कर मौलिक आध्यात्मिक अनुभव ग्रहण किए और इन्हीं आध्यात्मिक अनुभवों के आधार पर समाज में व्याप्त अमानवीय पाखण्डों का विरोध कर सामाजिक समरसता स्थापित करने का प्रयास किया।

बीज शब्द : निर्गुण, अद्वैतवाद एकेश्वरवाद, आध्यात्मिक, हठयोग, सामाजिक समरसता।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में चौदहवीं शताब्दी के मध्य से सत्रहवीं शताब्दी के मध्य का कालखण्ड भक्तिधारा के विकास का रहा जो भक्तिकाल के नाम से अभिहित है। भक्तिकाल के उदय को लेकर विभिन्न विद्वानों में मतभेद है। डॉ० ग्रियर्सन ने इसे ईसाइयत की देन कहा है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे बाह्य आक्रमणों का प्रभाव माना। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भक्तिकाल को बाहरी प्रभाव की उपज न मानकर भारतीय परम्परा स्वतः स्फूर्त विकास माना है। वे भक्तिकाव्य के विकास के पीछे दो तत्व मानते हैं—(1) बौद्ध चिंतन प्रक्रिया का विकास, और (2) प्राकृत, अपभ्रंशों की श्रृंगारिकता के विरुद्ध प्रतिक्रिया। जयशंकर प्रसाद ने इसे भारतीय अनात्मवाद की प्रतिक्रिया माना है। प्रसिद्ध पाश्चात्य कला आलोचक और इतिहासकार प्रो. टेवेल ने अपने 'हिस्ट्री ऑफ आर्यन रूल' में लिखा है मुसलमानी सत्ता के प्रतिष्ठित होते ही हिंदू राजकाज से अलग कर दिए गए इसलिए दुनिया के झंझटों से छुट्टी मिलते ही उनमें धर्म की ओर जो उनके लिए एकमात्र आश्रय स्थल रह गया था, स्वाभाविक आकर्षण पैदा हुआ।¹ वस्तुतः भक्तिकाल में भागवत धर्म का प्रचार प्रसार बढ़ा और भक्ति भावनाओं की अभिव्यक्ति लोक भाषाओं के माध्यम से हुई। यह ऐसा काल था जब राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में उथल पुथल मची थी। समाज का निम्न वर्ग स्वयं को निराश्रित एवं भ्रमित अनुभव कर रहा था। ऐसे काल में युगद्रष्टा कवि कबीरदास का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने भक्ति को आन्दोलन का रूप दिया, सामान्य जन जीवन की नीरसता में रस घोलकर कुंद होती हुई संवेदनाओं को नया जीवन दिया।

कबीर की आध्यात्मिक भावना का स्वरूप :

कबीर भक्तिकाव्य धारा के आदि कवि है क्योंकि वीरगाथा काल के बाद कबीर से पूर्व अन्य किसी भक्त कवि का वर्णन नहीं मिलता। संस्कृत साहित्य के आदिकवि महर्षि वाल्मीकि का प्रारंभिक जीवन अज्ञान से भरा था और संत कबीर भी पढ़े लिखे नहीं थे।

कबीर का जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ और पालन पोषण मुसलमान परिवार में दोनों कुलों का प्रभाव कबीर की वाणी में परिलक्षित होता है। कबीर ने स्वयं को जुलाहा कई बार बताया लेकिन हिन्दू या मुसलमान बताने का प्रयास नहीं किया।

जाति जुलाहा क्या करे हिरदैँ वसै गोपाल।²

कबीर ऐसे युग में उत्पन्न हुए जब समाज में विविध धर्म साधनाओं मत-मतान्तरों के संस्कार मौजूद थे। उन्होंने सभी से कुछ न कुछ ग्रहण कर एक नये मार्ग की स्थापना की। कबीर "मुसलमान होकर भी असल में मुसलमान नहीं थे। वे हिंदू होकर भी हिंदू नहीं थे। वे साधु होकर भी साधु नहीं थे। वे वैष्णव होकर भी वैष्णव नहीं थे। वे योगी होकर भी योगी नहीं थे। वे भगवान के नृसिंहावतार की मानो प्रतिमूर्ति थे।³ वस्तुतः कबीर का अध्यात्म भाव बहुत उच्च स्तर का था। उन्होंने समाज में विभिन्न परिस्थितियों में समन्वय स्थापित किया और परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली मान्यताओं के बीच सामंजस्य स्थापित कर साधारण जनमानस में जीवन की नए संवेदनायें विकसित की।

कबीर की वाणी में सांसारिकता एवं आध्यात्मिकता का संगम है। उनके अनुसार, धर्म कोई वाह्याडम्बर की वस्तु नहीं है। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन ही धर्म है। यह समस्त संसार ही धर्म के भीतर प्रतिष्ठित है। इस प्रकार संकीर्ण होती हुई मान्यताओं के बीच उन्होंने धर्म की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है।

कबीर निर्गुण भक्ति प्रवाह के प्रवर्तक है। वे ऐसे निराकार ब्रह्म के उपासक है जो सर्वव्यापी है। वे सांसारिक जीवों को निर्गुण राम का नाम जपने का उपदेश देते हैं—

निरंगुन राम जपहु रे भाई,
अतिगति की गति लखी न जाई।

कबीर, निश्चित रूप से, निर्गुण ब्रह्म के उपासक है परन्तु उनकी निर्गुण भक्ति पर सगुण रूप का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वे सूर और तुलसी की सगुण भक्ति धारा का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इन्होंने अपने पदों में अनेक स्थानों पर प्रभु की अवतार रूप में की गई लीलाओं का उल्लेख मिलता है जैसे—

अजामेल गज गनिका, पतित करम कीन्हा
तेऊ उत्तरि परि गये राम नाम लीन्हा।⁴

संभवतः उन्होंने राम नाम की अपरम्पार महिमा का वर्णन के लिए इन प्रसंगों का उपयोग किया है।

कबीर ने कई स्थानों पर हरि, गोविन्द, केशव, माधव आदि पौराणिक नामों का उपयोग किया है। परन्तु सगुण अवतार के अर्थ में नहीं वरन् निर्गुण ब्रह्म के रूप में। इसी प्रकार उन्होंने अनेक स्थानों पर अल्लाह, रब खुदा संबोधनों का प्रयोग कर अपने परम उपास्य का आह्वान किया। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि, मुसलमान होने के नाते इन नामों का प्रयोग करते हैं। वस्तुतः उनकी भक्ति नाम निरपेक्ष है। सम्भवतः उन्होंने जन का ध्यान आकर्षित करने के लिए इन प्रचलित संबोधनों का प्रयोग किया है। उन्होंने राम का प्रयोग सबसे अधिक किया है जिसे भारतीय वैष्णव मत के प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है। कई विद्वान् कबीर को वैष्णव भी मानते हैं। वास्तव में कबीर का अल्लाह अलख निरंजन देव है जो सेवा से परे है, उनका 'विष्णु' वह है जो संसार रूप में विस्तृत है, उनका कृष्ण वह है जिसने संसार का निर्माण किया है; उनका 'गोविंद' वह है जिसने ब्रह्मांड को धारण किया है; उनका 'राम' वह है जो सनातन तत्व है, उनका 'खुदा' वह है जो दस दरवाजों को खोल देता है, 'रब' वह है जो चौरासी लाख योनियों का परवरदिगार है, 'करीम' वह है जो इतना सब कर रहा है, 'गोरख' वह है जो ज्ञान से गम्य है; महादेव वह है जो मन को जानता है; सिद्ध वह है जो इस चराचर दृश्यमान जगत् का साधक है, नाथ वह है जो त्रिभुवन का एकमात्र यति या योगी है—जगत् के जितने साधक हैं, सिद्ध हैं, पैगम्बर हैं वे इस एक की ही पूजा करते हैं, अनंत है इसके नाम अपरम्पार उसका स्वरूप वहीं कबीरदास का भगवान है।

कबीर कहते हैं—

अलह अलख निरंजन देव, किहि विधि करौं तुम्हारी सेव ।
विश्व सोई जाको विस्तार, सोई कृष्ण जिनि कीयौ संसार ।
गोव्यंद ते ब्रह्महि नहै, सोई राम जे जुगि जुगि रहे ।।
अलह सोई जिनि उमति उपाई, दस दर खोलै सोई खुदाई ।
लख चौरासी रब परवरै, सोई करीम जे रती करै ।
गोरख सोई ग्यानं गमि गहे, महादेव सोई मन को लहै ।।
सिथ सोई जो साधै इति, नाथ सोई जो त्रिभवन जती ।
सिध साधू पैकवर हुवा, जपै सू एक भेष है जूबा ।
अपरम्पार की नांउ अनंत, कहै कबीर सोई भगवंत ।⁶

कबीर गैर समझौतावादी व्यक्तित्व वाले हैं। डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार, “कबीर पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने विभिन्न धर्मों, संप्रदायों, जातियों, वर्णों को नकारकर ऐसे समाज की स्थापना का प्रयास किया जिसमें धर्म, संप्रदाय, ऊँच नीच के भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं है।”¹³ उन्होंने कबीर को हिन्दी भक्तिकाव्य का प्रथम क्रान्तिकारी पुरस्कर्ता बताया। वस्तुतः कबीर की आध्यात्मिक चेतना को अलग करके नहीं देखा जा सकता। जब वे अध्यात्म की बात करते हैं वहाँ समाज के प्रति उनकी चिन्ता स्पष्ट झलकती है। कबीर के पद सबद और रमैनी उनके आध्यात्मिक दर्शन को स्पष्ट करते हैं और उनकी साखियों में सामाजिक चेतना के साथ-साथ आध्यात्मिक के दर्शन भी होते हैं। उनकी मनमोजी और फक्कड़ वृत्ति सामाजिक आक्रोश बनकर काव्य के रूप में प्रकट है। वे मूलतः भक्त हैं काव्य रचना उनका उद्देश्य नहीं है। वे मूलतः व्यक्तिगत साधना के ही प्रचारक हैं। अपनी व्यक्तिगत साधनात्मक मान्यताओं के आधार पर उन्होंने समाजोपयोगी मान्यताओं का अपने उपदेशों के माध्यम से प्रचार किया। इस कारण उन्हें समाज सुधारक नहीं कहा जा सकता। कबीर समाज सुधारक नहीं वरन् पथ प्रदर्शक हैं।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में कबीर का स्थान अद्वितीय है। उनके मस्तमौला एवं फक्कड़पन उन्हें अनूठा बना दिया। उन्होंने तत्कालीन समाज में लोगों की टूटी हुई आस्थाओं को सम्बल प्रदान किया। उनके उपदेश का उपदेश धूमिल होती हुई संवेदनाओं के लिए संजीवनी सिद्ध हुए। निराशा में आशा का संसार करती हुई उनकी वाणी ने सामाजिक समरसता का पाठ पढ़ाया। वे कवि नहीं, संत कवि हैं जिन्होंने मनुष्य मात्र से प्रेम का उपदेश दिया। वे एक ऐसे रचनाकार हैं जिनके कृतित्व को समाज से और व्यक्तित्व को रचना से भिन्न नहीं किया जा सकता है। वे सच्चे अर्थों में सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक रचनाकार हैं जिनके ऊपर सांसारिक जन्म मरण के नियम लागू नहीं होते।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास लेखक—रामस्वरूप चतुर्वेदी पृ०—33, लोक भारती प्रकाशन।
2. कबीर ग्रन्थावली सं. श्याम सुन्दर दास पृ०—240 (लोकभारती भारम्)
3. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास लेखक—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ०—75,
4. कबीर ग्रन्थावली सं. श्याम सुन्दर दास—पद—320, पृ०—195
5. कबीर—लेखक—हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ०—97.(राजकमल प्रकाशन)
6. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पद—327, पृ०—197
7. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पद—12, पृ०—252
8. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पद—79, पृ०—268
9. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पद—186, पृ०—161
10. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पृ०—80
11. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पृ०—83
12. कबीर ग्रन्थावली, सं. श्यामसुन्दर दास पृ०—78
13. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास—लेखक—डा० बच्चन सिंह (राधाकृष्ण प्रकाशन) पृ०—91



सुशीला टाकभौरे के साहित्य में दलित स्त्री की चेतना

अल्पना गौतम

शोधार्थी,

प्रोफेसर (डॉ०) सुषमा गौड़ियाल

शोध निर्देशिका,

हिन्दी विभाग बरेली कालेज, बरेली,

महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली।

शोध सार

सुशीला टाकभौरे हिन्दी दलित साहित्य की सफल कवयित्री हैं। एक दलित परिवार में जन्मी सुशीला टाकभौरे ने वर्ण व्यवस्था व जाति व्यवस्था पर आधारित भारतीय समाज व्यवस्था की कुरीतियों विषमतावादी को देखा ही नहीं बल्कि उसे झेला भी है। सुशीला टाकभौरे जी ने दलित विमर्श वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था की दयनीय स्थिति का चित्रण करते हुए उसकी मुक्ति के स्वर से मुखरित करते हुए आत्मकथा काव्य कहानी व उपन्यास भी लिखे हैं। उनकी ये रचनाएं विद्रोह, संघर्ष एवं अधिकार का दस्तावेज हैं।

मुख्य शब्द— दलित, अस्पृश्यता, दरिद्रता छुआ छूत, हीन भावना नीच जाति वर्ण व्यवस्था सर्वगुण, उन्नयन जीर्ण—शीर्ण, अत्याचार शोषण, अस्मिता, भूख, गरीबी अमानवीय व्यवहार।

भूमिका— सुशीला टाकभौरे का जन्म भारत के हृदय—स्थल मध्य प्रदेश के जिला होशंगाबाद की तहसील सिवनी मालवा के एक छोटे से गांव (बानापुरा) में हुआ था। उन्होंने होशंगाबाद जिले के साथ-साथ पूरे भारत वर्ष का नाम गौरवन्वित किया है। सुशीला टाकभौरे दलित कवयित्रियों में अन्यतम हैं। दलित सामाजिक—चेतना शील कवयित्री सुशीला टाकभौरे के साहित्य में दलित स्त्री उद्धार के स्वर उजागर होते दिखाई देते हैं। आधुनिक दलित साहित्य में सुशीला टाकभौरे अमूल्य निधि हैं। वे पहली हिन्दी भाषी दलित कवयित्री हैं। दलित समाज तथा दलित स्त्री जीवन सम्बन्धी अनेक वास्तविक चित्रण सुशीला टाकभौरे जी के साहित्य में देखने को मिलता है। भारतीय समाज में स्त्री होना अभिशाप स्वरूप है लेकिन दलित स्त्री होना दोहरा अभिशाप है। सुशीला जी ने भंगी जाति में जन्म लेने के कारण अनेक संघर्षों का समाना करते हुए अध्यापिका जैसे सम्मानीय और गौरवपूर्ण पद पर कार्यरत हैं। एक समय था जब अछूतों के पास अपनी कोई ताकत नहीं थी। वे अंधे—बहरे मूक प्राणी की तरह जी रहे थे, सदियों पुरानी परिपाटी के कारण अन्याय—अत्याचार सह रहे थे। तब विरोध—विद्रोह के परिणाम भी उनके लिए बहुत घातक थे। फिर वह समय आया, भारतीय इतिहास के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक, आर्थिक, नैतिक सभी क्षेत्रों में परिवर्तन की लहर चलने लगी। समय—चक्र के साथ परिवर्तन का चक्र घूमता रहा। बाबा साहब डा० भीमराव अम्बेडकर ने अपने शोषित, पीड़ित दलित वर्ग को जगाया, उन्हें देखना, सुनना, बोलना सिखाया। स्वतन्त्र भारत के संविधान में समता स्वतन्त्रता और सम्मान का अधिकार देकर, उन्हें अधिकारों के लिए लड़ना सिखाया। सदियों के मूल मानव अब बोलने लगे हैं, अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने लगे हैं। प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ते हुए अपनी व्यथा—कथा लिखने लगे हैं फिर भी क्या प्रत्येक दलित पीड़ित को उसके मानवाधिकार मिल सकें? अभी भी दलित शोषण की

घटनाएं घटती हैं। विषमतावादी भारतीय समाज में जातिभेद ऊँच नीच की भावनाएँ अब भी पाई जाती हैं। इन वर्गों को सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय दिलाना है। अनेक विद्वानों ने अपने अपने मत के अनुसार अस्मिता मूलक विमर्श को परिभाषित किया है। महात्मा ज्योतिबा फुले—उन्होंने जाति प्रथा और बाह्यणवाद के खिलाफ आवाज उठाकर दलितों के संघर्ष को एक बौद्धिक रूप दिया।

डा० श्यौराज सिंह बैचेन—“दलित वह है संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।” दलित साहित्य में डा० बाबा साहब अम्बेडकर के विचारों का बीजारोपण होता दिखाई पड़ता है। इसी से उनकी वैज्ञानिक दृष्टि भी दिखाई पड़ती है। वैसे तो दलित साहित्य का इतिहास बहुत पुराना है। दलित साहित्य के कुछ अंश सिद्धों की रचनाओं में दिखाई पड़ते हैं। परन्तु अनेक विद्वान सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हीरा डोम की ‘अछूत की शिकायत’ को प्रथम दलित कविता मानते हैं और यही से दलित साहित्य की परम्परा को गतिशीलता मिली। सुशीला टाकभौरे, ओम प्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, मोहनदास नौमिशराय, रजत रानी मीनू, अनीता भारती जैसे दलित साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जातिगत उत्पीड़न, भेदभाव, छुआछूत के अनुभवों के यथार्थ को उजागर कर दलितों के लिए सामाजिक समानता और न्याय के मार्ग प्रशस्त किए। दलित साहित्य दलितों पर होने वाले अन्याय, शोषण, उत्पीड़न और अत्याचारों की अभिव्यक्ति का साहित्य है। जहाँ उनका दर्द, पीड़ा उनके साथ होने वाले सामाजिक अवहेलना और तिरस्कार को उन्होंने अपनी भाषा के माध्यम से व्यक्त किया इसी कारण उनकी भाषा में आक्रोश एवं विद्रोह के स्वर गूँजते हुये प्रतीत होते हैं। सुशीला टाकभौरे जी ने ‘टूटता वहम’, ‘अनुभूति के घेरे’, ‘संघर्ष’ आदि कहानी संग्रह तथा ‘स्वाति बूंद और खारे मोती’, ‘यह तुम भी जानों’ ‘तुमने उसे कब पहचाना’, ‘हमारे हिस्से का सूरज’ आदि काव्य संग्रहों का सृजन किया है। वे किसी आंदोलन एवं वाद से नहीं जुड़ी हैं परन्तु उनका साहित्य, दलितों को ही नहीं, सम्पूर्ण समाज को आंदोलित कर रहा है। उनका साहित्य दलित एवं शोषित वर्ग की व्यथा का जीवंत दस्तावेज है तथा उच्च वर्ग द्वारा दलितों पर होते अन्याय का खुला चिट्ठा है। उनके काव्य में दलितों की अस्मिता को ठेस पहुंचाने में मनुवादी कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं। दूसरी ओर सुशीला जी की कलम दलितों में विद्रोह एवं क्रान्ति के लिए मैदान तैयार करती है। उन्हें अत्याचार के विरोध में खड़े रहने के लिए आत्मबल देती है।

सुशीला जी की लेखनी मशाल बनकर निश्चित ही सदियों में ठंडे पड़े बारूदों के ढेर को आग लगा देने में समर्थ है। कवयित्री का विश्वास है कि अब केवल महात्मा बुद्ध, फुले, अम्बेडकर, दलित मित्र शाहू महाराज को महामानव मानकर उनकी पूजा करने का समय नहीं है बल्कि उनके विचारों एवं कार्यों को दलित—मानस की अतल गहराई में उतारकर उन्हें दासत्व के विरोध में, अमानवीय शक्तियों के विरुद्ध तैयार करना है, तिनके—तिनके में आग लगानी है और यह कार्य साहित्यकार की कलम कर सकती है। ‘शिकंजे का दर्द’ में संताप है दलित होने का, स्त्री होने का इसमें शोषित, पीड़ित, अपमानित, अभावग्रस्त दलित जीवन की व्यथा है। स्त्री होना ही जैसे व्यथा की बात है। चाहे हमारा देश हो या विश्व के अन्य देश हर जगह शोषण उत्पीड़न का शिकार स्त्री हो रही है। जिस देश में वर्णभेद जातिभेद की कलुषित परम्पराएं हैं वह दलित स्त्री शोषण की व्यथा और भी गहरी हो जाती है। सदियों से तिरस्कृत और अभावग्रस्त परिस्थितियों में रहने के लिए मजबूर किये गये दलित जीवन की व्यथा—कथा का दर्द ‘शिकंजे का दर्द’ में समाहित है। ‘शिकंजे का दर्द’ लिखने का उद्देश्य दर्द देने वाले शिकंजे को तोड़ने का प्रयास है। दलित महिला उत्पीड़न चाहे घर में अपनों के द्वारा हो या बाहर सवर्ण गैर पुरुषों द्वारा, महिला उत्पीड़न की बातों को पुरुष भी छिपाते हैं, महिलाएं भी छिपाती हैं। परिवार समाज में सभी छिपाते हैं। ये बातें अधिकतर उजागर नहीं हो पाने के कारण महिलाएं अधिक कष्ट और उत्पीड़न का जीवन जीती हैं दलित उत्पीड़न के रूप में भी दलित पुरुषों की अपेक्षा दलित नारी वर्णभेद जातिभेद के अपमान तिरस्कार के साथ अन्याय, शोषण और हिंसा अधिक सहती है। दलित उत्पीड़न से मुक्ति की लड़ाई खुली है, जो सबको दिखाई दे रही है। इसी तरह नारी मुक्ति की भी लड़ाई हो जिसे सब देखें जानें और समझें। समाज में नारी के प्रति अबला की मानसिकता को बदलकर नारी को सबल रूप में स्थापित करना नारी मुक्ति का उद्देश्य है। नारी शोषण की स्थितियों को बदलकर उसे सभी अधिकारों से सम्पन्न बनाना सामाजिक प्रगति और परिवर्तन का लक्ष्य है। ‘संघर्ष’ कहानी के नायक शंकर का बाल—जीवन जातीय उत्पीड़न के कारण अराजक हो गया है। जो उसको जाति के कारण चिढ़ाते हैं, ‘संघर्ष’ कहानी संग्रह में कुल ग्यारह कहानियां हैं, सभी कहानियां मनुवादी

संकुचित मनोवृत्ति एवं परिवर्तनशील समता की मनोवृत्ति के द्वन्द्व को इंगित करती हुई अम्बेडकर एवं गौतम बुद्ध के समानता एवं विश्वप्रेम के संदेश को मुखर करती हैं। 'संघर्ष' कहानी सामाजिक यथार्थ का वह आईना है, जो विसंगतियों एवं असमानता को समाप्त कर अपना दीपक स्वयं बनाते हुए, समता सम्मान का जीवन अपनाने को प्रेरित करती हैं।

'सिलिया', 'छौआ मां', 'बदला', 'धूप से बड़ा', 'दमदार', आदि कहानियां स्त्री प्रधान कहानियां हैं, जिन्हें लेखिका ने बड़े मनोयोग से पूर्ण अम्बेडकरवादी विचारधारा के साथ गढ़ा है। 'सिलिया' कहानी की सिलिया पढ़ लिखकर 'दलित मुक्ति आन्दोलन' की सक्रिय कार्यकर्ता, विदुषी, प्रसिद्ध लेखिका बनती है। वह सवर्ण समाज द्वारा दिए जा रहे छद्म प्रलोभनों और झूठे समाज सुधार के दंभ को नकारते हुए प्रण करती है— "मैं बहुत आगे तक पढ़ूंगी, पढ़ती रहूंगी। उन सभी परम्पराओं के मूल कारणों का पता लगाऊंगी, जिन्होंने हमें समाज में अछूत बना दिया है। विद्या, बुद्धि और विवेक से अपने आपको ऊंचा साबित करके रहूंगी। किसी के सामने झुकूंगी नहीं, न ही कभी अपना अपमान सहन करूंगी। "छौआ माँ" कहानी में छौआ माँ दलित जाति से सम्बन्धित एक ऐसी बूढ़ी स्त्री है जो गांव में दाई का काम करती है। बच्चा पैदा कराने जैसे कठिन और महत्वपूर्ण काम करने के बावजूद, 'छौआ माँ' को सम्मान के बदले अपमान ही मिलता है। छौआ मां को लगता है, वह सारे गांव की मां है, क्योंकि सभी किसी न किसी रूप में उसके कर्जदार हैं। छौआ मां को गांव के लोगों से बहुत स्नेह है और उसे लगता है कि सब उसका बहुत आदर करते हैं। परन्तु छौआ मां का यह भ्रम टूट जाता है वह केवल एक दाई है, वह भी नीच जाति की। इस कड़वी सच्चाई को गले से जहरीले घूट के समान निगलते हुई वह दाईगीरी छोड़ देती है। देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद, स्त्रियों में जागरूकता आयी और उसने शिक्षा के क्षेत्र में कदम रख अपनी अस्मिता और अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास किया। वर्तमान में नारी मन की अभिलाषाओं तथा उसके जीवन के यथार्थ को मनोवैज्ञानिक दृष्टि में प्रस्तुत किया जा रहा है। इस नारी मुक्ति आन्दोलन की सशक्त हस्ताक्षर डा० सुशीला टाकभौरे जी का कविता संग्रह 'तुमने उसे कब पहचाना' नारी अस्मिता और नारी अस्तित्व को तलाशता दस्तावेज है, जो पारम्परिक आदर्श एवं सड़ी गली मान्यताओं से भिन्न, सामाजिक बदलाव को अभिव्यक्त करता है। उनकी कविताओं में व्यवस्था के प्रति तीखा आक्रोश है, वहीं प्रतिरोध के लिए दृढ़ संकल्प की आवाज भी है। सदियों से पीड़ित शोषित, दमित एवं कुंठित नारी के अस्तित्व एवं अस्मिता के लिए चली सुशीला जी की कलम नारी जीवन की विविध पहलुओं को उद्घाटित करती है। उनकी कविताओं में मानवीय दृष्टि तथा स्त्री पुरुष समानता का विचार है। पुरुषों की मानसिकता में परिवर्तन लाना नारी को स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास वो करती है। अपनी कविताओं में वो नारी जीवन की पीड़ा, वेदना, घुटन, दमन, उपेक्षा आदि को प्रस्तुत कर, नारी में जिजीविषा का निर्माण करती है। सुशीला जी की कविताओं में पीड़ित, शोषित, दमित नारियों की स्थितियों के साथ-साथ, इन परिस्थितियों से विद्रोह और संघर्ष भी अभिव्यक्त है। कुदरत सभी के प्रति समानता का व्यवहार करती है सूरज की किरणें बिना भेदभाव किए सभी को समान प्रकाश देती है। विडंबना यह है कि अतीत में वर्चस्ववादियों ने एकाधिकारी मनोवृत्ति का परिचय देते हुए, सामाजिक प्रगति के सूर्य के प्रकाश को भी बांट लिया है। इसी शोषण की प्रतिक्रिया स्वरूप आज वंचित जन, चैतन्य होकर 'अपने हिस्से का सूरज' की तलाश कर रहा है। कवयित्री डॉ० सुशीला टाकभौरे का काव्य संग्रह हमारे हिस्से का सूरज सिर्फ दिखावटी संवेदना एवं सहानुभूति से न भ्रमित होते हुए, सामाजिक, आर्थिक एवं सार्वभौमिक चेतना को अनवरत विकसित कर उत्थान के शिखर की ओर अग्रसर होने का परामर्श देता है।

**"हमारे हिस्से का सूरज
क्रांतिसूर्य चमक रहा है।
प्रगति, समाज-परिवर्तन का प्रकाश
फैला है, सब तरफ।
फिर भी ये, अंधेरे में भटक रहे हैं।"**

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विडंबना, धर्म एवं पाप पुण्य का सहारा लेकर, वर्चस्वता की प्रवृत्ति को बढ़ाने की रही है। इस भ्रम में शोषित पीड़ित जन अपने शोषण को कर्मों का फल मानकर विकास नहीं कर पा रहे हैं। कवयित्री 'यातना के स्वर' शीर्षक कविता में इस बात का भी उल्लेख करती है।

"कर्मों का फल, ईश्वर का श्राप"

**पाप पुण्य से भ्रमित वे नहीं—
जान पाई, जीवन में प्रगति का मार्ग।”**

दलित और स्त्रियों का शोषण हजार वर्षों से होता आ रहा है। किन्तु जब एक दलित स्त्री के शोषण की बात आती है तो शोषण तिहरे स्तर का हो जाता है। वर्ग के स्तर पर लिंग के स्तर पर और जाति के स्तर पर। सुशीला टाकभौरे की कविता में दलित स्त्री को इस तिहरे शोषण के प्रति संवेदना और आत्म सजग अभिव्यक्ति दिखाई देती है। वे मनु द्वारा लादी गई पुरुष वर्चस्व की सत्ता के विरोध में सवाल उठाती है। इस काव्य संवेदना में जाति लिंग और वर्ग पर आधारित तिहरे शोषण को झेलती दलित स्त्री उन विषमताओं और नैतिक मूल्यों को नकारती है, जो पुरुष के लिए अलग मापदण्ड और स्त्री के लिए अलग मापदण्ड प्रस्तुत करते हैं। कवयित्री ने अपने जीवन में दलित, गरीब और स्त्री होने का संताप उठाया है। किन्तु अब वह एक सम्पूर्ण जीवन जीना चाहती है। सफलता प्राप्ति के लिए संगठित होना अत्यन्त आवश्यक है। कवयित्री यहां आओ बहनों का प्रयोग करती है, उसका संकेत गैर दलित और दलित स्त्रियों दोनों की तरफ है। सुशीला टाकभौरे का कहना है कि स्त्री दलित ही है, चाहे वह सवर्ण हो या दलित। लेकिन यह बात भी सत्य है कि सवर्णों की स्त्रियां स्वयं को दलित नहीं कहलाना चाहतीं। अपनी पीड़ा को चुपचाप भोगती हुई वे हर जुल्म को सहन करती हैं। सुशीला जी कहती हैं कि जब तक सभी स्त्रियां मिलकर एक नहीं होंगी, तब तक पूरे स्त्री समाज की समस्याओं का निदान नहीं हो पाएगा। टुकड़ों में बंटकर सफलता नहीं हासिल की जा सकती है। इसलिए सभी लोग मिलकर एक साथ अपने अधिकारों के लिए आवाज उठानी होगी और आगे आना होगा।

निष्कर्ष— यहां स्पष्ट है, डॉ० सुशीला टाकभौरे का साहित्य रंजक नहीं, बल्कि चिंतन का प्रतीक है। यहां सजग साहित्यकार के दर्शन होते हैं। अपनी जमीन, जमीर पर विश्वास रखने वाली सुशीला जी दलितों, वाल्मीकियों का जीवन, समाज व्यवस्था, सवर्णों दलित स्त्री शोषित, मनोवृत्ति मनुवादी प्रवृत्ति, सत्ता से पीड़ित दलित की जीवन कहानी पर प्रकाश डालती है। बाबा साहब व बुद्ध के वचन को ग्रहण कर क्रांति का आवाहन कर रचनाएं में सामाजिक परिवर्तन चाहती हैं, शिक्षा के प्रसार पर बल देती हैं। कलम को हथियार बनाने का संकल्प करने वाली कवयित्री नया इतिहास, नई संस्कृति का निर्माण करना चाहती हैं।

संदर्भ—

1. डॉ० सुशीला टाकभौरे (2023) शिंकजे का दर्द और आगे की कहानी प्रलेक प्रकाशन 702, जे-50, ग्लोबल सिटी, विरार (वेस्ट), मुम्बई-401303 (महाराष्ट्र)
दिल्ली-एनसीआर कार्यालय: 03/सी, ज्ञान खण्ड-4, इंदिरापुरम, गाजियादबाद-201014 (उ०प्र०)
प्र०सं०-8
2. प्रियंका प्रफुल दखाड़े-सुशीला टाकभौरे के कथाओं की भाषागत प्रवृत्तियों की समीक्षा
3. प्रियंका प्रफुल दखाड़े-सुशीला टाकभौरे के कथाओं की भाषागत प्रवृत्तियों की समीक्षा
4. सिंह डॉ० मीना-डॉ० सुशीला टाकभौरे के काव्य में सामाजिक क्रांति के स्वर
5. सिंह डॉ० मीना-डॉ० सुशीला टाकभौरे के काव्य में सामाजिक क्रांति के स्वर
6. सुशीला टाकभौरे-शिंकजे का दर्द और आगे की कहानी प्र०सं०-9 वही प्र०सं०-10
7. सुशीला टाकभौरे- (2023) दलित लेखन में स्त्री चेतना की दस्तक प्रलेक पब्लिकेशंस प्रा०लि० 702, जे-50, एवेन्यू-जे ग्लोब सिटी विरार (वेस्ट), ठाणे, महाराष्ट्र-401303 प्र०सं०-59
8. वही प्र०सं०-62-63
9. वही प्र०सं०-63
10. वही प्र०सं०-287
11. वही प्र०सं०-288
12. वही प्र०सं०-297
13. वही प्र०सं०-298
14. वही प्र०सं०-314
15. वही प्र०सं०-316



थार रेगिस्तान के असिंचित क्षेत्र में कृषि के नवाचार

लक्ष्मण राम मेहरा

सहायक आचार्य भूगोल विभाग ,

श्री भगवानदास तोदी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थान

❖ सारांश :-

मरुस्थलीय क्षेत्र विषम जलवायु, वर्षा की कमी और असंगठित मृदा के कारण पारंपरिक रूप से कृषि के उपयुक्त नहीं माने जा रहे हैं परंतु विगत कुछ दशकों में सरकारी नीतियां और वैज्ञानिक तकनीक एवं किसानों द्वारा किए गए विभिन्न नवाचारों ने इस धारणा को पूर्ण रूप से बदल दिया है।

आज राजस्थान, गुजरात, अफ्रीका का मिश्र, सऊदी अरब और इसराइल जैसे देश विश्व के सामने मरुस्थलीय कृषि के विशिष्ट उदाहरण बन चुके हैं इस शोध पत्र में मरुस्थलीय कृषि के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, चुनौतियां, आधुनिक प्रयोग, सरकारी योजनाओं और भावी संभावनाओं का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

❖ परिचय:-

मानव सभ्यता का विकास जल की उपलब्धता एवं उपजाऊ भूमि के अत्यंत गहराई से जुड़ा हुआ रहा है परंतु बढ़ती जनसंख्या के दबाव एवं जलवायु परिवर्तन ने उन क्षेत्रों में भी कृषि करने हेतु प्रेरित किया जो क्षेत्र पहले अनुपजाऊ माने जाते थे रेगिस्तान ऐसे ही क्षेत्र का उदाहरण है जहां ताप की अधिकता शुष्क दशाएं एवं जल की कमी जैसी बाधाएं मानव के सामने रही है इसके बाद भी यह क्षेत्र तकनीक वैज्ञानिक अनुसंधान कृषि शिक्षा और मानवीय प्रयासों से "कृषि नवाचार के केंद्र" बन रहे हैं।

थार का मरुस्थल विश्व का सबसे आबादी मरुस्थल है जो लगभग 2 लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है भारत में इसका विस्तार 85% पाकिस्तान में 15% भाग फैला हुआ है भारत में गुजरात राजस्थान पंजाब हरियाणा में पाया जाता है परंतु मुख्य रूप से यह है राजस्थान में ही विस्तारित है इस क्षेत्र में औसतन वार्षिक वर्षा 10 से 25 सेमी के मध्य होती है अतः कृषि कार्य कठिन होता था परंतु वर्तमान में बूंद बूंद सिंचाई पोली हाउस सौर ऊर्जा आधारित पंप सेट तथा फसल विविधीकरण के माध्यम से कृषि का स्वरूप ही बदल गया है वर्तमान में सिंचित क्षेत्र में उपरोक्त प्रणालियों के द्वारा आज फसलों का व्यापारिक उत्पादन किया जा रहा है।

❖ अनुसंधान का उद्देश्य:-

- थार मरुस्थल में कृषि की वर्तमान स्थिति का समग्र अध्ययन करना
- आधुनिक कृषि प्रयोग एवं नवीन तकनीको की पहचान कर उनका विश्लेषण करना
- जल संरक्षण एवं मृदा सुधार तकनीक की समीक्षा करना
- कृषि में सतत विकास की संभावनाओं का मूल्यांकन करना
- भविष्य के लिए इन प्रयोगों के विस्तार हेतु उपाय सुझाना

❖ अध्ययन क्षेत्र:-

- इस शोध पत्र का मुख्य अध्ययन क्षेत्र थार रेगिस्तान का असिंचित क्षेत्र है ।
- मुख्य जिलों में जैसलमेर बीकानेर नागौर बाड़मेर चूरू और जोधपुर जिलों के असिंचित भाग सम्मिलित है ।
- यहां रेतीली मिट्टी में (असंगठित) हल्की और जैविक पदार्थ की कमी पाई जाती है।
- यहां वर्षा का वितरण असमान है तथा भूमिगत जल संसाधन भी सीमित मात्रा में उपलब्ध है

❖ अनुसंधान पद्धति (research methodology)

- यह शोध पत्र वर्णनात्मक विश्लेषणात्मक एवं व्यवहारिक पद्धति पर आधारित है
- प्राथमिक आंकड़े /स्रोत :-क्षेत्रीय अवलोकन, कृषको के विचार और कृषि वैज्ञानिकों के साक्षात्कार पर आधारित है ।
- द्वितीय स्रोत :-विभिन्न सरकारी रिपोर्ट, कृषि विभाग द्वारा प्रकाशित सामग्री, ICAR - CAZRI जोधपुर द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट और विभिन्न शोध पत्र से प्राप्त किए गए हैं

❖ रेगिस्तानी कृषि की मुख्य समस्याएं

- मरुस्थली भूमि में वर्षा अत्यंत कम होती है जिसके कारण सदैव जल की कमी बनी रहती है
- सिंचाई प्रणाली के लिए जल के स्थाई स्रोतों का अभाव पाया जाता है
- यहां भूमिगत जल अत्यंत गहराई में एवं पूर्णता है खारा पाया जाता है
- यहां की मिट्टी संगठित है जिसमें जल धारण क्षमता बहुत कम तापमान की अधिकता के कारण पानी जल्द ही भाव बनकर उड़ जाता है तथा मृदा के पोषक तत्व वह जैविक पदार्थ की कमी पाई जाती है
- मृदा अपरदन की गंभीर समस्या है तापमान अधिक होने से कई बार कड़ी फैसले झुलस जाती है
- दैनिक तापांतर अधिक पाया जाता है दिन का तापमान 40 से 50 डिग्री सेल्सियस तथा रात में तापमान हिमांक बिंदु के पास चला जाता है अतः यहां की फसले तापीय तनाव से प्रभावित होती है
- अपर्याप्त सिंचाई के साधन, जैव विविधता की कमी, कृषि की वर्षा जल पर पूर्ण निर्भरता लवणीय जल से फसलें सूख जाती हैं, भूमि भी अनुपजाऊ हो जाती है

➤ यहां उबड़ खाबड़ भू भाग होने ,आय के कम स्रोत होने के कारण किसान यंत्रीकरण में कम विश्वास रखते हैं अधिकांश कृषि कार्य आज भी परंपरागत तरीके से होता है

➤ यहां के लोग कृषि एवं पशुपालन पर पूर्णतः निर्भर है

❖ सामाजिक आर्थिक समस्याएं

इस क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार अपेक्षाकृत कम ही हुआ है जो सीधे तौर पर बालिकाओं की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करता है

➤ यहां उच्च शिक्षा के अवसर सीमित पाए जाते हैं

➤ स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव पाया जाता है जैसे अस्पताल में चिकित्सकों की कमी, महिला एवं बच्चों की स्वास्थ्य समस्याएं अत्यधिक तापमान एवं धूल भरी हवाओं से श्वास रोग अधिक होते हैं

➤ यहां सामाजिक संरचना में असमानता व्याप्त है जैसे जाति , लिंग आधारित असमानता, महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति का कमजोर होना, संसाधनों पर कम अधिकार आदि

➤ इस क्षेत्र में कई गांव आज भी सड़क मार्ग रेल मार्ग एवं इंटरनेट जैसी सुविधाओं से वंचित है

❖ कृषि के नए प्रयोग

➤ **ड्रिप सिंचाई प्रणाली :-** इस विधि से पानी सीधा पौधे की जड़ में पहुंचता है 60 से 70% जल की बचत होती है इजराइल से ली गई है तकनीक बीकानेर व जोधपुर जिलों में सफलतापूर्वक अपनाई गई है (टमाटर मिर्च खजूर की खेती में उपयोगी)

➤ **फव्वारा प्रणाली :-** यह प्रणाली वर्षा जल के समान जल वितरण करती है नमी को बनाए रखने के लिए यह है सहायक सिद्ध होती है

➤ वैज्ञानिकों ने ऐसी फसलों के संकर बीज विकसित किए हैं जो कम जल एवं कम समय में अधिक उत्पादन देने में सक्षम है ।

➤ गोबर की खाद , वर्मी कंपोस्ट से उपजाऊपन सुधारा जा सकता है

➤ रासायनिक खादों और कीटनाशकों की जगह जैविक खाद का उपयोग बढ़ा है ।

➤ सौर ऊर्जा चालित पंपसेट से जल की निकासी व सिंचाई प्रणाली में एक नई क्रांति आई है इससे ऊर्जा की बचत के साथ-साथ किसानों की आय में भी वृद्धि हुई है ।

➤ पॉलीहाउस और शेड नेट तकनीक की सहायता से तापमान को नियंत्रित कर केवल नमी में कृषि की जाती है यह तकनीक टमाटर, खीरा, फूलगोभी, फूलों एवं फलों की खेती में कारगर साबित हुई है ।

❖ सफलता के कुछ कहानियां

➤ थार के रेगिस्तान में अलग-अलग स्तर पर कृषि क्षेत्र में किए गए नवाचार भविष्य के लिए उत्साहजनक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं

- बाड़मेर के किस माधव सिंह राजपुरोहित ने ड्रिप सिंचाई है तथा सौर ऊर्जा आधारित सिंचाई प्रणाली को अपनाकर अपने खेत में चीकू, अनार, नींबू, अंजीर जैसी फसलें सफलतापूर्वक लगाई है जिसे किसान की आय में बढ़ोतरी हुई है
- जैसलमेर में बीकानेर में बेर, ग्वार, मूंगफली, कपूर कचरी की व्यावसायिक खेती से किसान आर्थिक आत्मनिर्भरता के दिशा में बढ़ रहे हैं।
- केसर जैसी ठंडे क्षेत्र में होने वाली फसलें अब थार मरुस्थल में उगाई जा रही हैं।
- **निष्कर्ष (Conclusion)**
- थार रेगिस्तान के असिंचित क्षेत्रों में कृषि एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, किंतु नए शोध ने इसे संभव और लाभकारी बनाया है। सूखा-रोधी फसलें, पारंपरिक जल संरक्षण प्रणालियाँ, जैविक खेती और कृषि-पशुपालन एकीकरण ने यह सिद्ध कर दिया है कि सीमित संसाधनों में भी सतत कृषि संभव है।
- यदि इन नवाचारों को वैज्ञानिक अनुसंधान, सरकारी सहयोग और किसान प्रशिक्षण से और मजबूत किया जाए, तो थार रेगिस्तान का असिंचित क्षेत्र भी हरित विकास की दिशा में अग्रसर हो सकता है।

संदर्भ सूची (References)

1. ICAR–CAZRI, Jodhpur – Annual Report on Arid Zone Agriculture
2. राजस्थान कृषि विभाग – Rainfed Agriculture in Rajasthan
3. शर्मा, एस.पी. – भारत के शुष्क क्षेत्र की कृषि
4. FAO Report – Rainfed Farming Systems
5. सिंह, आर. – Desert Agriculture in Western Rajasthan



द्विरुक्ति के आधार पर 'गोदान' उपन्यास का विश्लेषण

अर्चना

शोधार्थी,

हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़-160014

भूमिका – मनुष्य अपने भावों एवं विचारों को सम्पूर्ण रूप से अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए भाषा का प्रयोग करता है। “भाषा सामाजिक वस्तु है।”¹ समाज में रहते हुए अपने विविध सामाजिक प्रयोजनों की सिद्धि हेतु मनुष्य भाषा को व्यवहार में लाता है। वह ध्वनि से लेकर प्रोक्ति को प्रयोजन के अनुकूल बनाने का प्रयास करता है। प्रयोजन सिद्धि के उन्हीं भाषिक प्रयोगों में एक द्विरुक्ति है। द्विरुक्ति को पुनरुक्ति भी कहा जाता है। इस भाषिक उपकरण के माध्यम से भी मनुष्य अपने कथ्य को सम्पूर्ण रूप से संप्रेषित कर सकता है।

द्विरुक्ति से अभिप्राय– जब किसी शब्द का निरंतर दो बार प्रयोग किया जाता है तब यह प्रक्रिया द्विरुक्ति कहलाती है। जैसे-देश-देश, घर-घर, पानी-पानी, अंग-अंग, इत्यादि। द्विरुक्ति के माध्यम से संप्रेषण पूर्ण एवं प्रभावी होता है। डॉ० वासुदेवनन्दन प्रसाद के अनुसार “द्विरुक्ति का अर्थ है-दुहराना; एक ही उक्ति को दो बार उच्चरित करना। हिंदी भाषा में द्विरुक्ति से शब्दों का निर्माण बड़ी संख्या में हुआ है।”² भाषा के अंतर्गत विविध भाषिक उपकरण उपलब्ध होते हैं कोई रचनाकार या वक्ता सन्दर्भ विशेष के अनुरूप अपने कथ्य को सम्पूर्ण एवं सटीक रूप से प्रस्तुत करने के उद्देश्य से भाषिक उपकरण का प्रयोग करता है। इन्हीं भाषिक उपकरणों में से एक महत्वपूर्ण उपकरण द्विरुक्ति है। पण्डित रामदहिन मिश्र के अनुसार “शब्दों की पुनरावृत्ति को अर्थात् उनके दुहरे प्रयोग को पुनरुक्ति या द्विरुक्ति कहते हैं।”³ द्विरुक्ति प्रयोग कथ्य को बल प्रदान करता है। द्विरुक्ति द्वारा व्यंजित अर्थ विशेष होता है। “पुनरुक्ति के आधार पर भी समस्त शब्द की रचना होती है। इसके लिए ध्वनि की दृष्टि से समान (घर-घर), लगभग समान (दाल-वाल) अथवा अर्थ की दृष्टि से समान (लाज-शर्म) समवर्गीय (भूख-प्यास), या विलोम (अच्छा-बुरा) शब्दों से सहायता ली जाती है। ऐसे शब्दों को द्विरुक्त या पुनरुक्त शब्द कहते हैं, तथा इस प्रक्रिया को द्विरुक्ति अथवा पुनरुक्ति कहते हैं।”⁴ द्विरुक्ति प्रयोग के माध्यम से निरंतरता, निंदा, अतिशयता, बारंबारता, घृणा, आदर, भिन्नता, सजातीयता, क्रिया की आसन्नता एवं श्रद्धा इत्यादि भावों का प्रकटीकरण होता है। सामान्य भाषा-प्रयोग की तुलना में द्विरुक्ति प्रयोग अधिक सशक्त एवं प्रभावोत्पादक होता है।

रचनाकार और रचना का परिचय – हिंदी साहित्य के अंतर्गत मुंशी प्रेमचंद कथा सम्राट के रूप में जाने जाते हैं। ‘गोदान’ उनके द्वारा रचित एक कालजयी रचना है। ‘गोदान’ उपन्यास के अंतर्गत प्रेमचंद ने होरी, धनिया, गोबार, दातादीन, भोला इत्यादि पात्रों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र के जनजीवन उनकी परिस्थितियों तथा मान्यताओं को चित्रित

किया है तो वहीं दूसरी ओर मेहता,मिस मालती,मिस्टर खन्ना, गोविन्दी, ओंकारनाथ आदि पात्रों के द्वारा शहरी व्यक्तियों व उनकी प्रवृत्तियों का रूप उकेरा है। उपन्यास के अंतर्गत रचनाकार ने विशेष रूप से ग्रामीण जीवन से जुड़े कृषक वर्ग की समस्याओं का अंकन सशक्त शैली में किया है।

‘गोदान’ रचना में द्विरुक्ति –

वक्ता- होरी श्रोता- भोला पृष्ठ संख्या-8

सन्दर्भ - भोला एवं होरी का संवाद।

उद्धरण- “घरवाली बार-बार कहती है, भोला भैया से क्यों नहीं कहते?”⁵

विश्लेषण- यहाँ ‘बार-बार’ शब्द की द्विरुक्ति ‘बारंबारता’ के अर्थ को सूचित करने के साथ-साथ ‘अतिशयता’ के अर्थ को भी संप्रेषित कर रही है। होरी के द्वारा कहे इस वाक्य से होरी की गाय प्राप्त करने की लालसा प्रकट हो रही है। होरी भोला की प्रशंसा करके गाय प्राप्त करना चाहता है। यहाँ द्विरुक्ति मानवीय प्रवृत्तियों को चित्रित करने का कार्य कर रही है। कुछ पाने की लालसा से भी मनुष्य व्यक्ति विशेष की प्रशंसा करता है।

वक्ता- होरी श्रोता- स्वगत पृष्ठ संख्या- 14

सन्दर्भ- रायसाहब के द्वारा अपने व्यवहार के विरुद्ध बातें करने पर

उद्धरण- “होरी ने मन में सोचा;अभी यह कैसी-कैसी नीति और धर्म की बातें कर रहे थे और एकाएक इतने गरम हो गए !”⁶

विश्लेषण- होरी के इस कथन के माध्यम से रायसाहब के वैचारिक एवं व्यावहारिक पक्ष की भिन्नता प्रकट हो रही है। ‘कैसी-कैसी’ द्विरुक्ति ‘भिन्नता’ के अर्थ को व्यंजित कर रही है। यहाँ द्विरुक्ति उनकी पहले की कही हुई बातों से पूर्णतः उनके विपरीत व्यवहार को इंगित कर रही है। यहाँ रायसाहब की कहनी और करनी का अंतर स्पष्ट रूप से चित्रित होता है। द्विरुक्ति उनके व्यक्तित्व का चित्रण करने में सहायक सिद्ध हो रही है।

वक्ता- गोबर श्रोता- होरी पृष्ठ संख्या- 15

सन्दर्भ- गोबर और होरी का संवाद।

उद्धरण- “कुछ देर अपने विद्रोह को दबाए रहने के बाद गोबर बोला- यह तुम रोज-रोज मालिकों की खुशामद करने क्यों जाते हो?”⁷

विश्लेषण- यहाँ पर ‘रोज-रोज’ शब्द की द्विरुक्ति ‘बारंबारता’ की द्विरुक्ति है। द्विरुक्ति यहाँ गोबर के साहस और शोषण के विरुद्ध विचारों को व्यंजित कर रही है। द्विरुक्ति के माध्यम से यहाँ होरी की विवशता एवं रायसाहब जैसे उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के शोषण को भी व्यक्त किया गया है।

वक्ता- लेखक श्रोता- पाठक पृष्ठ संख्या- 35

सन्दर्भ- होरी के गाय लेने के पश्चात् उसके भाईयों में द्वेष की भावना जागने पर

उद्धरण- “द्वेष का माया जाल बड़ी-बड़ी मछलियों को ही फँसाता है। छोटी मछलियाँ या तो उसमें फँसती ही नहीं या तुरन्त निकल जाती हैं।”⁸

विश्लेषण- ‘बड़ी-बड़ी’ द्विरुक्ति यहाँ ‘सजातीयता’ के अर्थ को संप्रेषित करने का कार्य कर रही है। आशय है की द्वेष प्रवृत्ति विशेषकर बड़ों में होती है यदि छोटों में द्वेष भावना जागृत भी होती है तो वह मात्र क्षणिक होती है। कुछ ही क्षणों में वह द्वेष जैसी भावना को अपने मन से निकाल देते हैं। बाल मन द्वेष जैसी नकारात्मक प्रवृत्तियों से परे होता है। यदि ऐसी भावनाएँ उनमें जागृत भी होती हैं तो वह केवल थोड़े समय में ही नष्ट हो जाती हैं।

वक्ता- धनिया श्रोता- गाँववाले पृष्ठ संख्या- 38

सन्दर्भ- हीरा से लड़ाई के समय गाँव के उच्च वर्ग से बात करते हुए

उद्धरण- “ एक-एक की नस पहचानती हूँ, मैं गाली दे रही हूँ, वह फूल बरसा रहा है, क्यों ?”⁹

विश्लेषण- यहाँ 'एक- एक' द्विरुक्ति 'प्रत्येकता' के भाव को प्रकट कर रही है। अत्यंत क्रोध के भाव में धनिया यह कथन कहती है। इसका आशय है कि वह गाँव के प्रत्येक व्यक्ति अर्थात् हर एक को भली-भाँति पहचानती है। द्विरुक्ति यहाँ धनिया के द्वारा गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं व्यवहार को संकेतित कर रही है। क्रोधातुर धनिया भयरहित होकर गाँव के लोगों के समक्ष अपने विचार रखती है।

वक्ता- रायसाहब श्रोता- मेहता पृष्ठ संख्या- 47

सन्दर्भ- रायसाहब के अपने व्यवहार के विपरीत बात करने पर

उद्धरण- “जिन्हें पेट की रोटी मयस्सर नहीं, उनके अफसर और नियोजक दस-दस पाँच-पाँच हजार फटकारें, यह हास्यास्पद है और लज्जास्पद भी।”¹⁰

विश्लेषण- 'दस-दस', 'पाँच-पाँच' संख्यावाचक द्विरुक्ति है। सामान्यतः यह 'विभाजन' के भाव को प्रकट करती है। यहाँ पर द्विरुक्ति पैसों की अतिशयता को सूचित कर रही है। समाज में वर्ग भेद की परिस्थितियों को चित्रित किया गया है। समाज का एक वर्ग अपने दैनिक जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए भी संघर्षरत है इसके विपरीत उच्च वर्ग सुविधाओं से संपन्न जीवन व्यतीत करता है। यहाँ द्विरुक्ति रायसाहब के व्यवहार एवं विचार की विपरीतता को अभिव्यजित करने का कार्य कर रही है।

वक्ता- ओंकारनाथ श्रोता- मालती पृष्ठ संख्या- 51

सन्दर्भ- ओंकारनाथ के सिद्धांतवादी होने के सन्दर्भ में।

उद्धरण- “यही तो मैं नहीं कर सकता देवीजी! मैंने अपने सिद्धान्तों को सदैव ऊँचा और पवित्र रखा है और जीते जी उनकी रक्षा करूँगा। दौलत के पुजारी तो गली-गली मिलेंगे, मैं सिद्धान्त के पुजारियों में हूँ।”¹¹

विश्लेषण- यहाँ 'गली-गली' शब्द की द्विरुक्ति 'सम्पूर्णता' के अर्थ को संप्रेषित कर रही है। ओंकारनाथ यहाँ स्वयं को उच्च आदर्शों वाला एवं स्वार्थ भावना से हीन साबित करना चाहते हैं इसीलिए वह स्वयं को अन्य लोगों से भिन्न बताते हुए ईमानदार कहते हैं। इस भाषा प्रयोग के माध्यम से ओंकारनाथ अपने सिद्धांतवादी होने के साथ ही अपनी ईमानदारी को भी प्रकट कर रहे हैं।

वक्ता- लेखक श्रोता- पाठक पृष्ठ संख्या- 100

सन्दर्भ- पुनिया के खेतों में होरी द्वारा परिश्रम करने के सन्दर्भ में

उद्धरण- “होरी ने पहर रात-रात तक काम करके उसके धान रोपे।”¹²

विश्लेषण- 'रात-रात' शब्द की द्विरुक्ति 'निरंतरता' की द्विरुक्ति है। द्विरुक्ति यहाँ समयगत निरंतरता को चित्रित कर रही है। इस द्विरुक्ति में होरी द्वारा किए गए अथक परिश्रम का चित्रण हुआ है। होरी निस्वार्थ भावना से पुनिया के खेतों में काम करता है। रात विश्राम के लिए होती है, किन्तु इसके विपरीत रचनाकार का 'रात-रात' शब्द का प्रयोग होरी के द्वारा किए गए अत्यधिक परिश्रम को दर्शाता है।

वक्ता- लेखक श्रोता- पाठक पृष्ठ संख्या- 101

सन्दर्भ- होरी की विपन्नता की स्थिति की ओर चित्रण करते हुए।

उद्धरण- “चाहता था, शीत को भूल जाय और सो रहे; लेकिन तार-तार कम्बल और फटी हुई मिर्जई और शीत के झोंकों से गीली पुआल इतने शत्रुओं के सम्मुख आने की नींद में साहस न था।”¹³

विश्लेषण- यहाँ 'तार-तार' शब्द की द्विरुक्ति 'अतिशयता' की द्विरुक्ति है। 'अतिशयता' की द्विरुक्ति के माध्यम से यहाँ होरी के जीवन की विषमता का चित्रण किया गया है। द्विरुक्ति यहाँ होरी के जीवन की आर्थिक समस्याओं को चित्रित कर रही है। द्विरुक्ति के माध्यम से यहाँ होरी की गरीबी पूर्ण रूप से व्यक्त हो रही है।

वक्ता- धनिया श्रोता- होरी पृष्ठ संख्या- 111

सन्दर्भ- होरी द्वारा सारा अनाज पंच को डाँड देने पर।

उद्धरण- “मर-मरकर हमने कमाया, पहर रात-रात को सींचा, अगोरा, इसलिए की पंच लोग मूँछों पर ताव देकर भोग लगाएँ और हमारे बच्चे दाने-दाने को तरसें!”¹⁴

विश्लेषण- ‘मर-मरकर’ शब्द की द्विरुक्ति ‘बारंबारता’ की द्विरुक्ति है। ‘रात-रात’ एवं ‘दाने-दाने’ शब्द की द्विरुक्ति ‘अतिशयता’ की द्विरुक्ति है। ‘बारंबारता’ की द्विरुक्ति यहाँ धनिया एवं उसके परिवार द्वारा खेतों में किए गए अथक परिश्रम को दर्शाती है। ‘अतिशयता’ की द्विरुक्ति होरी एवं धनिया के परिवार की विपन्नता को चित्रित कर रही है। दाना मनुष्य के भूख मिटाने के लिए पर्याप्त नहीं है, किन्तु ‘दाने-दाने’ शब्द का प्रयोग विपन्नता की अतिशयता को चित्रित कर रहा है। यहाँ धनिया के मन में व्याप्त क्रोध मिश्रित पीड़ा की अभिव्यक्ति हो रही है।

वक्ता- लेखक श्रोता- पाठक पृष्ठ संख्या- 166

सन्दर्भ- मिस्टर खन्ना के साथ हुए मतभेद के पश्चात् गोविन्दी का उदास होना।

उद्धरण- “उदासी में मौत की याद तुरन्त आ जाती है। कहीं वह बैठे-बैठे मर जाए तो क्या हो।”¹⁵

विश्लेषण- इस वाक्य में ‘बैठे-बैठे’ शब्द की द्विरुक्ति ‘क्रिया की आसन्नता’ को प्रकट कर रही है। द्विरुक्ति यहाँ क्रिया की आसन्नता को चित्रित करने के साथ ही साथ क्रिया की शीघ्रता को भी व्यंजित कर रही है। द्विरुक्ति यहाँ गोविन्दी के मन में व्याप्त उदासी एवं निराशा को अभिव्यक्त कर रही है। यहाँ गोविन्दी की मनोवृत्तियों का चित्रण द्विरुक्ति के माध्यम से पूर्ण रूप से किया गया है।

वक्ता- धनिया श्रोता- गोबर पृष्ठ संख्या- 177

सन्दर्भ- गोबर के शहर से आने के पश्चात् धनिया की स्थिति।

उद्धरण- “तुम्हारी राह देखते-देखते आँखें फूट गईं।”¹⁶

विश्लेषण- यहाँ ‘देखते-देखते’ शब्द की द्विरुक्ति ‘अतिशयता’ की द्विरुक्ति है। ‘अतिशयता’ की द्विरुक्ति यहाँ धनिया द्वारा की गयी प्रतीक्षा की अवधि को सूचित कर रही है। माँ के हृदय में व्याप्त अगाध प्रेम की अभिव्यक्ति द्विरुक्ति के माध्यम से हो रही है। यहाँ धनिया का आशय है कि पुत्र के आश्रय की उसे जरूरत थी तथा उसकी विवशता थी कि वह प्रतीक्षा मात्र ही कर सकती थी।

वक्ता- गोबर श्रोता- होरी पृष्ठ संख्या- 189

सन्दर्भ- होरी और गोबर का संवाद।

उद्धरण- “तीस रुपये दिए अब दो सौ रूपए लेगा, और डाँट ऊपर से बताएगा और तुमसे मजूरी कराएगा और काम कराते-कराते मार डालेगा।”¹⁷

विश्लेषण- यहाँ ‘कराते-कराते’ शब्द की द्विरुक्ति ‘अतिशयता’ की द्विरुक्ति है। यहाँ कार्य की अतिशयता को सूचित किया जा रहा है। गोबर का आशय दातादीन की क्रूरता एवं शोषण प्रवृत्ति को प्रकट करना है। इस प्रकार से द्विरुक्ति का प्रयोग यहाँ होरी की विवशता एवं दातादीन की निर्दयता को संप्रेषित कर रहा है।

वक्ता- लेखक श्रोता- पाठक पृष्ठ संख्या- 299

सन्दर्भ- रूपा का विवाह अर्धेड उम्र के व्यक्ति के साथ होने पर

उद्धरण- “जीवन में होरी ने बड़ी-बड़ी चोट सही थी, मगर यह चोट सबसे गहरी थी।”¹⁸

विश्लेषण- ‘बड़ी-बड़ी’ शब्द की द्विरुक्ति ‘सजातीयता’ की द्विरुक्ति है। यहाँ द्विरुक्ति होरी के जीवन की विविध जटिल से जटिल समस्याओं की ओर संकेत कर रही है। द्विरुक्ति के माध्यम से यहाँ एक पिता का अपनी पुत्री के प्रति प्रेम भाव प्रकट हो रहा है। अपनी पुत्री के पति अटूट स्नेह के कारण उसका विवाह अर्धेड उम्र के व्यक्ति के साथ कराना होरी को अत्यंत पीड़ादायी प्रतीत हो रहा था।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है की गोदान में द्विरुक्ति के माध्यम से विविध अर्थों एवं भावों का निरूपण बहुत ही प्रभावशाली रूप में हुआ है। द्विरुक्ति के माध्यम से रचनाकार की संकल्पना सम्पूर्ण रूप से विवक्षित हुई है।

सन्दर्भ सूची-

1. शर्मा, देवेन्द्रनाथ, दीप्ति शर्मा, भाषाविज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, नौवाँ संस्करण- 2015 पृष्ठ संख्या- 38
2. प्रसाद, डॉ० वासुदेवनन्दन, आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना, भारती भवन(पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स) पटना-ठाकुरबाड़ी रोड, पटना-800 003, 23 वाँ संस्करण 1993, पुनः मुद्रण 2023, पृष्ठ संख्या- 193
3. मिश्र, पण्डित रामदहिन, हिन्दी-व्याकरण-कौमुदी, ग्रंथमाला-कार्यालय, पटना-4, पुनः परिष्कृत और परिवर्द्धित संस्करण 1975 ई०, पृष्ठ संख्या-129
4. तिवारी, भोलानाथ, हिंदी भाषा की संरचना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली- 110002, प्रथम संस्करण- 1999 द्वितीय संस्करण, 2004 पृष्ठ संख्या- 103
5. प्रेमचंद, गोदान, सुमित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या-8
6. वही, पृष्ठ संख्या-14
7. वही, पृष्ठ संख्या-15
8. वही, पृष्ठ संख्या-35
9. वही, पृष्ठ संख्या-38
10. वही, पृष्ठ संख्या-47
11. वही, पृष्ठ संख्या-51
12. वही, पृष्ठ संख्या-100
13. वही, पृष्ठ संख्या-101
14. वही, पृष्ठ संख्या-111
15. वही, पृष्ठ संख्या-166
16. वही, पृष्ठ संख्या-177
17. वही, पृष्ठ संख्या-189
18. वही, पृष्ठ संख्या-299

मोबाइल न०- 7986813840



“अरुणाचल प्रदेश की न्यीशी समुदाय की बोली में देवनागरी लिपि का प्रयोग”

सुश्री ब्याबंग याना

सहायक प्रोफेसर(हिन्दी विभाग),

शासकीय महाविद्यालय दोईमुख जिला- पापुम-पारे(अरुणाचल प्रदेश) पिन कोड:- ७९१११२(791112)

शोध सार

अरुण की भूमि अरुणाचल यही वह राज्य है जहां उत्तर पूर्व में सूर्य देव ने अपनी स्वर्णिम किरणों को पहली बार फैलाया। इस मनोरम भूमि में 26 जनजातियों का वास है एवं 100 के लगभग उप- जनजातियां हैं। इस प्रदेश की प्रमुख जनजातियां हैं- न्यीशी, आदी, गालो, तागिन, आपातानी, मोन्पा, खाम्ती, ईदू-मिशमी आदि।

इन सभी जनजातियों की अपनी-अपनी लोक भाषाएं एवं बोलियां हैं। इन जनजातियों में से मोन्पा (भूटी लिपि) एवं खाम्ती (थाई खाम्ती लिपि) की अपनी लिपियां हैं। अन्य सभी जनजातियों की अपनी कोई स्वतंत्र लिपियां नहीं हैं। इनकी भाषा एवं बोलियां मौखिक रूप से बोली जाती हैं। लिपि अभाव के कारण अपनी साहित्य एवं संस्कृति को संरक्षित करने के लिए उन्हें लिपि की आवश्यकता रहेगी और पड़ी। अपनी इसी मौखिक रूप को लिपिबद्ध करने के लिए देवनागरी लिपि की सहायता से इन जनजातियों ने अपनी धरोहर को संरक्षित करने की पहल की और कर रही है।

न्यीशी समुदाय सात जिलों में विभाजित है। जो इस प्रकार है- कामले, कयी पान्योर, करा दादी, कुरुना-कुमे, पाक्के- केसना, ईस्ट-कामेंग, पापुम-पारे। भौगोलिक वातावरण के कारण इन सभी जिलों में शब्दों की बोलियों के उच्चारण में असमानताएं देखने को मिलती हैं। जिलाओं में भी अपनी-अपनी गांव एवं उप-जनजातियों की बोलियों में भिन्नताएं देखने एवं सुनने को मिलती हैं। इन की अपनी कोई स्वतंत्र लिपि नहीं है। उनकी संस्कृति, धर्म, रीति-रिवाज, पर्व- त्यौहार आदि सभी मौखिक रूप में स्थित हैं। इसे लिखित रूप देने के लिए हिंदी प्रेमी शोधकर्ताओं ने एवं साहित्यकारों ने देवनागरी लिपि को सक्षम एवं संपूर्ण रूप देने में समर्थ रहेगी। इसलिए भाषा एवं बोली को देवनागरी लिपि में प्रस्तुत अथवा लिखने का प्रयास किया गया है और कर रही है।

बीज शब्द :-

1. अरुणाचल प्रदेश की भूमिका
2. मुख्य जनजातियां
3. जिलों के नाम

4. भौगोलिक स्थिति
5. न्यीशी समुदाय
6. मौखिक साहित्य
7. लिखित रूप पर जोर
8. न्यीशी बोली
9. देवनागरी लिपि का प्रयोग।

प्रस्तावना:-

अरुणाचल प्रदेश प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध एक सुंदर एवं मनोरम प्रदेश है। यहां कई नदियां और झड़ने अपना राग सुनाते हुए पहाड़ों और घाटियों को गूंजायमान करती रहती है।

अरुणाचल की पर्वतमालाओं में बहुजनजातीय लोग निवास करते हैं जो बहुभाषी है। इस बहुरंगी संस्कृति के प्रदेश में कुल 26 जनजातियों और उनकी लगभग १००(सौ) उप-जनजातियां है। लगभग सभी भाषाओं के नाम उनकी जनजाति के नाम के आधार पर रखे गए हैं जैसे आपातानी जनजाति की बोली आपातानी कहलाती है, गालो जनजाति की बोली गालो कहलाती है। उसी प्रकार न्यीशी जनजाति की बोली न्यीशी बोली कहलाती है। या यूँ कह सकते हैं अरुणाचल प्रदेश को लघु भारत के रूप में भी देखा जा सकता है जिसमें विविधता में एकता की भावना झलकती है। अरुणाचल प्रदेश के लोगों का जीवन उस बगीचे की तरह है जिसमें विभिन्न प्रकार के फूलों का निवास है।

इस प्रदेश की प्रमुख जनजातियां हैं- न्यीशी, आदी, गालो, तागिन, आपातानी, मोन्पा, खाम्ती, ईदू-मिशमी आदि। इन सभी जनजातियों की अपनी-अपनी लोक भाषाएं एवं बोलियां हैं। इन जनजातियों में से मोन्पा (भूटी लिपि) एवं खाम्ती (थाई खाम्ती लिपि) की अपनी लिपियां हैं। अन्य सभी जनजातियों की अपनी कोई स्वतंत्र लिपियां नहीं हैं। इनकी भाषा एवं बोलियां मौखिक रूप से बोली जाती है। लिपि अभाव के कारण अपनी साहित्य एवं संस्कृति को संरक्षित करने के लिए उन्हें लिपि की आवश्यकता रहेगी और पड़ी। अपनी इसी मौखिक रूप को लिपिबद्ध करने के लिए देवनागरी लिपि की सहायता से इन जनजातियों ने अपनी धरोहर को संरक्षित करने की पहल की और कर रही है।

अरुणाचल प्रदेश कई जिलों में बंटा हुआ है। इन जिलों का विभाजन भौगोलिक स्थिति के आधार पर किया गया है। भौगोलिक पृष्ठभूमि के आधार पर देखा जाए तो अरुणाचल प्रदेश मुख्यतः दो हिस्सों में विभाजित है। पूर्वी अरुणाचल एवं पश्चिमी अरुणाचल। पूर्वी अरुणाचल में लोहित, तिराप, चांगलांग, नामसाई, अंजाओ इत्यादि जिले शामिल है और पश्चिमी अरुणाचल में पापुम-पारे, ईस्ट-कामेंग, वेस्ट-कामेंग, ईस्ट-सियांग, अपर सुबनसिरी, पाक्के-केसंग आदि जिले शामिल है। अरुणाचल प्रदेश चीन, तिब्बत, बर्मा, भूटान देश से घिरा हुआ है। राज्य के दक्षिण में असम तथा पूर्व में नागालैंड राज्य स्थित है। अरुणाचल प्रदेश पूर्वी हिमालय प्रांत में स्थित है। अरुणाचल प्रदेश पहाड़ी इलाकों से भरा- पूरा राज्य है। जिसमें कई सारे प्रमुख नदियां बहती है जैसे कि कुरुंग नदी, कुमे, लोहित, सियांग, सुबनसिरी, पान्योर, कामेंग आदि नदियां जो आगे बहकर ब्रह्मपुत्र नदी में मिल जाती हैं।

सामान्यतः जनजातीय लोगों के पूर्वज होते हैं। यह लोग पूर्वजों की आत्माओं को पूजते हैं। आबू तान्यी (आबू-पिता) के वंशज और आतु न्या (आतु-पूर्वज) के पुत्र न्यीशी समुदाय अरुणाचल प्रदेश के बहु संख्य जनजातियों में से एक है। न्यीशी बोली चीनी- तिब्बती है जो तान्यी वंश परंपरा के अंतर्गत आती है। यह अरुणाचल के ७(सात) जिलों में बंटे हुए हैं। ईस्ट-कामेंग, कयी पान्योर, करा- दादी, पापुम-पारे, पाक्के-केसंग, कुरुना-कुमे, कामले एवं असम के उत्तरी लखीमपुर के कुछ हिस्सों में बोली जाती है। न्यीशी बोली मौखिक रूप में है।

न्यीशी जनजाति समृद्ध संस्कृति, भव्य परंपरा तथा आकर्षक पर्वों को अपनी सभ्यता में समेटे हुए हैं। जो अनंत काल से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से चलती आ रही है। इसका एकमात्र कारण है लिपि का अभाव होना। कहते हैं लिपि का विकास मानव की भाषागत एवं बोलियों की सामाजिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए हुआ है। लिपि समाज के सांस्कृतिक और धार्मिक लक्षणों की वाहिनी बन गई है। लिपि का लेखन समाज की सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुरूप हुआ है।

लिपि द्वारा हम किसी भी प्रदेश के भाषा और बोलियां को सीख सकते हैं। भाषा किसी भी समाज के संस्कृति को दूसरों के सामने आकर्षक रूप प्रस्तुत करने का माध्यम है जो उसे भाषा और बोली को आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित रखती है।

न्यीशी जनजाति की बोली जिन ध्वनि संकेत में बनी है वह देवनागरी लिपि के सर्वदा अनुकूल है।

भौगोलिक वातावरण एवं परिवेश में अंतर होने के कारण और पड़ोसी जनजातियों के प्रभाव के कारण न्यीशी बोली उच्चारण एवं शब्द के अर्थों में बदलाव आ गई है। उदाहरण के तौर पर कामले जिला में रहने वाले न्यीशी लोगों के शब्द एवं उच्चारण अन्य जिलों में रहने वाले न्यीशी लोगों से भिन्न है। यहां आप देख सकते हैं " क्या है " को "योगअ" कहते हैं। यही बात कुरुना-कुमे और करा-दादी जिला में " हुगुअ " शब्द से उच्चरित करते हैं तथा जोराम, तालो जिलों में शब्द को " हो नकम " कहते हैं तो याजाली में इसी बात को " हो गअ " कहा जाता है, ईस्ट-कामेंग सेप्पा में " होगो का " यहां आप देख सकते हैं कि कुछ ही किलो मीटर के दूरी के अन्तराल में भी समान अर्थ वाले शब्द उच्चारण में परिवर्तन आ जाती है परंतु अर्थ वही रहता है।

न्यीशी बोलियां में अधिकतर दीर्घ स्वरों का प्रयोग किया जाता है उदाहरण के लिए कुरुना-कुमे और ईस्ट-कामेंग के जिलों में, शब्दों में आ, ए,औ अधिकांश रूप में इस्तेमाल करते हैं कुछ शब्द इस प्रकार से- आपिंग(खाना), दसा (खाओ), बीसा(दो ना),नवा (गांव) आदि।

न्यीशी जनजाति में ह्रस्व स्वरों का भी अधिक चलन देखा जा सकता है जैसे कामले, पापुम-पारे,पाक्के-केसंग और कयी पान्योर में रहने वाले न्यीशि भाई " ड ,आ "जैसे दीर्घ स्वरों के स्थान पर "अ" स्वर का प्रयोग करते हैं। जैसे अचिन,अदिन,अलअ आदि।

न्यीशी बोली में प्रयुक्त होने वाले ध्वनि संकेतों को स्वर -व्यंजन के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। ऐसा करने में देवनागरी लिपि पूरी तरह से सक्षम एवं समर्थ हैं। इस लिपि में विशेष बात यह है कि यह वैज्ञानिक रूप से व्यवस्थित लिपि है। इसमें प्रत्येक अक्षरों के लिए अपनी स्वतंत्र ध्वनि एवं स्वतंत्र चिन्ह मौजूद है।

उदाहरण के तौर पर आ:- आन(मां), आने (मां), आन्यी(दीदी)

ऊ:- कुलू (भविष्य), कुलू (भूतकाल के अर्थ में)

ई:- काची(कुरूप), कोजी (चूरा,चूरी-कनान के अर्थ में),अच्च/आची(भैया),
पाई (मझला भैया)

औ:- दतौ(खाओ), रितौ (करो), कौ(बच्चा), रियौ(मत करो), युपतौ (सो)

ड :-अचड (खाना), अडतो (चलो), बिडतो(बोलो), आबड(भैया)

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि देवनागरी लिपि में प्रयुक्त अमूमन स्वर वर्णों का न्यीशी जनजाति की बोली में सरलता के साथ व्यवहार में लाया जाता है।

इसलिए निशि बोली के मौखिक रूप को लिपिबद्ध कर संरक्षित करने में यदि कोई सक्षम है तो वह देवनागरी लिपि है, यही वह लिपि है जो न्यीशी बोली को उसके मूलभूत स्वरूप के साथ सुरक्षित रख सकती है क्योंकि देवनागरी लिपि के लेखन और उच्चारण में कोई वैषम्य नहीं है।

यदि आज हमें अपनी न्यीशी जनजाति के वैभव सुरक्षित रखना है तो देवनागरी लिपि में अपनी सांस्कृतिक,

सामाजिक और धार्मिक समृद्धि को लिपिबद्ध करना होगा। जब तक कि अपनी लिपि लिखित लिपि न बन जाए। वरना लिपि के अभाव में मौखिक परंपरा में व्याप्त नयी-नयी जनजाति की बोली के साथ-साथ उसका अस्तित्व भी मिट जाएगा। अतः अपनी लोकभाषा, बोली, संस्कृति, सभ्यता, धार्मिक-अनुष्ठान, रीति-रिवाज, पर्व-त्यौहार को लिपिबद्ध के माध्यम से हम उसे संरक्षित कर सकते हैं अन्यथा उसे खो देंगे, इसलिये उसे संचित करना अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ :

- 1) एच. बूबू ताबा (साक्षात्कार)
- 2) लोद मेबिन (साक्षात्कार)
- 3) दोन्यी रीमो (साक्षात्कार)
- 4) डा. डूरी शान्ती (साक्षात्कार)

ईमेल :-yanabyabang@gmail.com

मोबाइल नंबर:-9436201428



“Higher Education: Knowledge Economy”

Ms. Lod Mebin

Assistant Professor (Education),

Govt. College Doimukh District - Papum Pare Arunachal Pradesh Pin : 791112

Abstract:-

The Higher education knowledge economy theme reflects the vision of innovation building, ready for future and transforming economy by its higher education ecosystem. This transform India into a ‘global knowledge superpower’, by shifting from a rigid rote-learning system to critical thinking, learning, competency based education. While, shifting to a knowledge economy faces critical challenges includes lack of digital infrastructure, man power who are skilled, shortage of qualified educators, regulatory and policy problems, funding and implementation issues, low interest of invest in research and development and weak collaboration between universities, industry and government limited commercialization of research outcomes, it is some how mismatch between industry needs and skills taught in institutions.

Rural and urban universities face, different problems due to unequal development researches, weak internet connecting and digital facilities in colleges and universities in rural areas and overcrowding and high lost of education in urban areas. However, strategies solutions for building knowledge economy are financial stability, digital inclusion, institution modernization, financial supports and fostering innovation through research development to compete the demand of the globally market in education system.

Key words:

1. Knowledge
2. Economy
3. Innovation
4. Research
5. Education

Introduction:

The term knowledge economy, describe the commercialization of intellectual pursuits. This type of economy capitalizes on research and scientific and discoveries. It is a significant component of highly develop economies of country’s economy becomes more productive as the properties of educated workers increases. Educated workers can more efficiently carry out tasks that require critical thinking. The Information and Communication Technology (ICT) industry, which is focused on the integration of communication services and information economy. Knowledge economy is a postindustrial era development characterized by automation, digitization, open innovations and increased investments in research, science and

education. It is also about creating institutional structures that provide incentives for entrepreneurship and the use of knowledge. It also aims of ensuring availability of skilled labour.

India's transition to a knowledge based economy is characterized by a growing emphasis on intellectual capital, innovation and technology, particularly in sectors like IT and Pharmaceuticals. This shift is fueled by a skilled workforce, strong educational institutional and supportive policies. IT sector has been a major driver of Indian's knowledge economy. Institutions like IITs and IIMs play a crucial role in fostering innovation and producing a workforce capable of navigating a knowledge-driven world, data science, AI sustainability, and critical thinking, moving India from a services-based economy to an innovation-driven, self reliant, knowledge power house, leveraging both traditional wisdom and modern Technology. Cities like Bangalore and Hyderabad are now known global tech hubs, contributing boosting to India's economic growth.

Policy challenges: Indian faces several significant challenges in its transition to a knowledge economy. These include shortage of skilled workers in emerging technologies, inadequate digital infrastructure, regulatory and policy barriers, funding and investment issues and inequalities in access to technology and knowledge. Additionally issues like corruption, poverty and unemployment hinder progress. Complex and lengthy procedures for starting and operating business hinder the growth of the knowledge economy. Corruption and red tape create uncertainty and discourage in knowledge-based industries. Insufficient funding is also a hindrance in India for the creation of new knowledge.

Potential solutions: India's potential solution for a thriving knowledge economy include enhancing education quality, fostering innovation through research and development, promoting digital literacy etc. this involves improving primary and secondary education, supporting higher education institutions, encouraging private sector investment.

Research and development and integrating market demands into the education system. Additionally India should strengthen intellectual property right and promote a culture of innovation. Education system should align with the needs of the economy and the global market. Focus should be on university-industry partnership programs should be developed that facilitate continuous learning and skill development for all within and outside the formal education system.

Best practices: India is currently making a significant shift from an agriculture based economy to a knowledge based economy. India must quickly implement a comprehensive strategy for smooth transition. Encouragingly, India has already launched several initiatives to move towards knowledge economy. Some of these initiatives include:

- Skill development programs under the guidance of the government of India and the corporate sector.
- Fast-track development of public infrastructure in the PPP (Public Private Partnership) model is already underway.

In addition the following best practices may be adopted.

- Convert every home into a knowledge centre. Households in all regions should have access to computers, the internet and educational resources in regional language.
- Identifying the communities that need the most assistance like colleges and university of rural areas.
- Low cost modern technology should be designed and developed indigenously in various part of India.
- Build a robust network to connect all the homes in the villages and small towns.
- Developing a plan to build a network to connect those villages and small towns to the internet.

- Use AI to implement cyber security measures and safeguard knowledge based economy data and systems.
- Continue to invest in education and training to create a skilled workforce.

Transitioning India to a knowledge based economy is a multifaceted challenge crucial for sustained prosperity. India must overcome various hurdles to achieve this objective.

Conclusion:- The rise of knowledge economy has profoundly reshaped higher education, positioning universities as central drivers of innovation, economic growth, and social development. Higher education institutions are no longer viewed solely as centers for teaching and learning, but as key producers of knowledge, research, and highly skilled human capital. Through research technological advancement, and collaboration with industry and government, universities contribute directly to competitiveness in a globalized economy. The knowledge economy has also transformed curricula, pedagogy, and institutional priorities, emphasizing critical thinking, creativity, digital literacy, and life -long learning. As labor markets evolve rapidly, higher education must remain responsive by aligning academic programs with emerging skills while preserving its broader mission of fostering ethical values, civic responsibility, and intellectual inquiry.

Although facing some difficulties, India possesses various advantages that can aid in surpassing obstacles and accomplishing its objective of becoming a knowledge based economy. These advantages include a vast and youthful population, a strong middle class, a robust IT industry and a strong government prioritizing economic expansion.

Ultimately, higher education's success in the knowledge economy depends on its ability to integrate teaching, research, and societal engagement. By doing, so universities can sustain their relevance, empower individuals, and contribute meaningfully to inclusive and sustainable development in the modern world.

References:-

1. Kumar Amit: knowledge Economy: An Indian perspective, Journal of positive school psychology, 2022, Vol-6, No.7
2. Kahir, M.N.: Knowledge Based Social Entrepreneurship, 2019, New York, Macmillan.
3. Simon Marginson: Higher Education in the Global Knowledge Economy, 2010, social and behavioural sciences Vol-2, issue-5
4. Alam Sarwar and Biswas N.: Knowledge Economy and Higher Education Institutions : A Review, March 2024, economicaffairs.co.in, vol-69, issue-I
5. Kenneth Roberts: Higher Education and Work in the Knowledge Economy, 2025, Macmillan press.

WhatsApp No: 8732895295

Email: lodmebin@gmail.com



अलका सरावगी के उपन्यास एक सच्ची झूठी गाथा उपन्यास में पात्रों का अनुशीलन कविता कोठारी

शोधार्थी

संस्थान . सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा

सारांश

‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास में पात्रों के व्यवहार कृति को जीवंतता और प्रभावशीलता प्रदान करते हैं। इसमें रचना की सार्थकता के अनुरूप पात्रों का उचित चित्रण हुआ है। इसके मुख्य नायक प्रमित और मुख्य नायिका गाथा हैं, जबकि उनके माता-पिता, सास-ससुर, प्रमित साह, दीपशिखा, विदेशिनी प्रेमिका, जैनी सहेली आदि गौण पात्र कहानी को आगे बढ़ाने में योगदान देते हैं। सभी पात्र रोचक और जीवंत हैं तथा अपने गुणों और व्यवहार के माध्यम से उस समय की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थितियों को उजागर करते हैं। उपन्यास में लेखिका ने पात्रों के पक्ष को स्पष्ट रखा है, लेकिन उपन्यास के मुख्य नायक का चरित्र पूरी तरह से उभरकर सामने नहीं आया है जिससे उसका चरित्र अधूरा प्रतीत होता है।

प्रस्तावना

पात्र किसी भी रचना का अभिन्न हिस्सा होते हैं, जिनसे लेखक रचना को आगे बढ़ाकर अपने उद्देश्य और लक्ष्य को व्यक्त करता है। जैसे वास्तविक जीवन में अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के लोग पाए जाते हैं वैसे ही उपन्यासों में भी पात्रों के सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार के व्यक्तित्व होते हैं। साहित्यकार इन पात्रों का सृजनकर्ता होता है, इसलिए उसका अपने पात्रों से गहरा आत्मीय संबंध बन जाता है। उनके क्रियाकलाप लेखक के इच्छानुसार आकार लेते हैं जिससे रचना में प्रसन्नता, दुख, भय, मधुरता, रोचकता जैसे विविध भावों का प्रकटीकरण होता है। अलका सरावगी हिंदी साहित्य जगत की यशस्वी, मौलिक कथाकार हैं। उनकी रचनाएँ साहित्य को दिशा देने के साथ समाज के लिए एक महानतम प्रेरणा स्रोत भी हैं।

‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास का प्रमुख पुरुष पात्र प्रमित

मुख्य नायक प्रमित सान्याल— प्रमित ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास का प्रमुख पुरुष पात्र है। ये उपन्यास शुरू से अंत तक प्रमित सान्याल के चारों तरफ घूमता है। प्रमुख पात्र होने के कारण वह समस्त पात्रों की समायोजना स्पष्ट करता है। वह एक पढ़ा-लिखा नवयुवक है जो नायक के रूप में यथोचित सिद्ध होता है। प्रमित का व्यक्तित्व रहस्यमय और संघर्षों से भरा हुआ है। वह सात साल की अल्पायु में अनाथ हो जाता है। माँ के अभाव में उसे पिता और कई सौतेली माताओं के साथ रहना पड़ा, जहाँ उसका पालन-पोषण भी विचित्र और अस्थिर वातावरण में होता है।

बौद्धिक विचारों का व्यक्ति— प्रस्तुत उपन्यास का नायक प्रमित बौद्धिक विचारों वाला व्यक्ति है। उसके बौद्धिक विचार समाज की सच्चाई उजागर करते हैं। वह परिस्थितियों के अनुसार तर्कपूर्ण भाषा का प्रयोग करने में दक्ष है।

“इस शख्स में क्या हुनर है भाषा को अपने मन मुताबिक अपने फायदे के लिए इस्तेमाल का।”¹

“प्रमित, मुझे समझ में नहीं आता कि तुम क्यों मुझसे बात करते रहना चाहते हो? तुम तो सर्वज्ञ हो। बांग्ला भाषा का यह शब्द जानते हो शौब—जानता ? यानी सब कुछ जानने वाला। तुम्हें न किसी सीख जरूरत है न सलाह की।”²

स्नेह से वंचित — ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास का नायक प्रमित बचपन में ही स्नेह से वंचित हो गया है। बचपन में प्रमित की जन्मदात्री माँ की मृत्यु होने के बाद प्रमित के पिता अनगिनत महिलाओं से शादियाँ करते हैं। उपन्यास में प्रमित अपने जीवन की इस विषमता का वर्णन करता है।

“मुझे मेरी सभी माँएँ बहुत प्यार करती थीं। जर्मन माँ, बंगाली माँ, ट्राइबल यानि आदिवासी माँ। तुम्हें कौन सी माँ के बारे में बताऊँ? हाँ, सात साल की उम्र में मुझे अनाथ कर जाने के पहले मेरे पिता ने मुझे हर तरह की माँ ला दी थी। वैसे ही जैसे छोटी लड़कियों के पास रशियन, जर्मन, इंडियन, ट्राइबल — तरह-तरह की गुड़ियाँ होती हैं न?”³

सच्चा प्रेमी— उपन्यास का नायक प्रमित सच्चा प्रेमी है। वह एक विदेशिनी युवती से प्रेम करता है, लेकिन उससे विवाह नहीं करता है, उसका मानना है कि यदि वह उसे सुख नहीं दे सकता, तो उसे दुख देने का भी उसे कोई अधिकार नहीं है। प्रमित के मन की उदासी और उसके दर्द भरे शब्द उसकी प्रेमिका को उदास कर देते हैं, जिससे उसे केवल तकलीफ ही मिलती है। इसी कारण वह अपने प्रेम को त्याग देता है। वह अपने सुख से पहले अपनी प्रेमिका के सुख को अधिक महत्व देता है।

“प्रमित, तुम्हारे जीवन में प्रेम आया था। तुम्हें उसे पकड़कर रखना चाहिए था। तुमने उसे क्यों जाने दिया? वही तुम्हें तुम्हारे अतीत से, सारी ऊहापोह से, अपने-आप को लताड़ते रहने से बचा सकता था। हाँ, लेकिन मैं इतना स्वार्थी नहीं हूँ। वह मेरी बातों से बहुत गहरे समन्दर में चली जाती थी। पर कोई भी इंसान गहरे समन्दर में हमेशा नहीं रह सकता। उसे मेरी आँखों में एक खोए हुए बच्चे की उदासी दिखती थी। पर वह उदासी उसे पाने से मिट जाती। तब उसे वहाँ की आकाश जैसी शून्यता क्या उतनी ही अच्छी लगती ?”⁴

संगीत प्रेमी — उपन्यास का नायक प्रमित संगीत प्रेमी भी है। उसे उसकी विदेशिनी प्रेमिका ने पुराना गीत सिखाया था।

“मैं न जाने कितनी दूर से

चलकर आया हूँ

पर देखता हूँ

सिर्फ अपनी कब्र

जहाँ तुम जार-जार रो रही हो। कैसा लगा यह गीत गाथा ?”⁵

शिक्षित व्यक्ति— प्रमित शिक्षित व्यक्ति है। उपन्यास में उसकी बुनियादी शिक्षा के साथ उच्च शिक्षा प्राप्त करने का भी वर्णन किया गया है।

“मुझे कुछ खास याद नहीं। बस इतना पता है कि मैंने किसी तरह स्कूल पूरा कर लिया। किसी ने मेरी मदद की और मुझे बेंगलुरु में कॉलेज में पढ़ने भेज दिया।”⁶

एक सच्ची झूठी गाथा उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र

गाथा — ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र गाथा एक अनुभवी लेखिका और अत्यंत दयालु महिला है। उनकी उम्र पचास वर्ष से अधिक हो चुकी है और वह एक विवाहित महिला है। उपन्यास में गाथा का प्रमित के प्रति व्यवहार आत्मीयता को स्पर्श करने लगता है। उसका स्नेह निस्वार्थ भाव से परिपूर्ण है। वह नायक के जीवन के संघर्षों को समझकर उससे जुड़ती है और उसके जीवन को सुधारने और खुशहाल बनाने के लिए हर संभव प्रयास करती है

मातृ स्नेह से वंचित— गाथा की माँ मर जाती है जिसके कारण गाथा माँ के स्नेह से वंचित हो जाती है। वह अपनी माँ के लिए तड़पती रहती है। उसे जीवन के प्रत्येक क्षण में माँ की जरूरत महसूस होती है। “मुझे खुद हमेशा माँ की जरूरत महसूस होती है, इसलिए मैं कभी अपनी बेटी, कभी अपनी बहन, तो कभी अपनी भाभी, कभी अपनी सास में माँ खोजती रहती हूँ।”⁷

पढ़ने में रुचि — गाथा की पढ़ने में विशेष रुचि है। वह हमेशा पढ़ती रहती है। एक बार जब उसकी माँ उसे ज्यादा पढ़ने से रोकती है तो वह नाराज हो जाती है और गलत घर में जन्म लेने का दुख प्रकट करती है।

“माँ मुझे हमेशा कहती रहती, इतना मत पढ़ो। मैं माँ से नाराज होकर कहती— मैं गलत घर में पैदा हो गई। किसी बंगाली घर में पैदा होती, तो ठीक रहता। खाना बनते ही मैं कोई-न-कोई किताब लेकर डाइनिंग टेबुल पर सबसे पहले खाने पहुँच जाती। पढ़ते-पढ़ते बिना देखे खाती।”⁸

शिक्षित नारी— गाथा एक पढ़ी-लिखी शिक्षित महिला है। उसने पी-एचडी डिग्री भी प्राप्त की है।

“थीसिस बिल्कुल बेकार बोगस होती है क्योंकि उनमें इस तरह की खोज नहीं लिखी जाती है। तुम ही बताओ तुमने भी तो पीएचडी कर रखी है किसी कवि पर।”⁹

लिखने में रुचि — गाथा लिखने में अत्यधिक रुचि रखती है। गाथा ने अपने पापा के कहने पर उनके ऑफिस में रहकर कई पन्ने कुछ ही दिनों में लिख लिए थे।

“मेरे पापा ने कहा कि घर की निचली मंजिल पर बनी अपनी ऑफिस का कमरा मेरे लिखने के लिए खाली कर देंगे वहाँ रहकर लिख लूँ। सचमुच जैसे विक्रमादित्य के टिले में गड़ी कुर्सी पर बैठकर गड़ेरिया सच्चा न्याय करने लगा था, पापा की कर्मठ कुर्सी पर बैठकर पाँच दिन में मैंने चालीस पन्ने लिख डाले”¹⁰

गाथा के पिता — ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास में गाथा के पिता का नाम नहीं दिया गया है। वे एक जागरूक नागरिक और जिम्मेदार पिता हैं। वे बेटी को हमेशा जिंदगी में आगे बढ़ने में सहयोग करते हैं।

“मुझे समझ में नहीं आता है कि मेरी माँ मुझे किताबों में जीवन जीते देख क्यों डरती थी। मेरे पापा जो अपनी तरह से एक आधुनिक व्यक्ति थे, मुझे मिशनरी कॉलेज भेजते वक्त क्यों घबराए थे। जाने किन बंगाली, पंजाबी, एंग्लो-इंडियन लड़कियों की तरह मैं सपने देखना सीख जाऊँ और किसी मारवाड़ी परिवार में एडजस्ट करना मेरे लिए मुश्किल हो जाए। या उन लोगों के लिए मुझे रखना मुश्किल हो जाय।”¹¹

गाथा के पति — प्रस्तुत उपन्यास में गाथा के पति का नाम नहीं दिया गया है। गाथा के पति को एक आदर्श पति के रूप में चित्रित किया गया है। वह अपने पति धर्म का निर्वाह करने में कुशल व्यक्तित्व का धनी है।

“गाथा के हाथ में फोन बज उठा। गाथा ने हड़बड़ाकर बिल्ली से नजर उठाकर फोन की तरफ देखा। नहीं, प्रमित नहीं है। उसके पति हैं। तुम ज्यादा कॉफी मत पी लेना। बाहर जाती हो तो अंट-शंट खा लेती हो। गेस्ट-हाउस में अच्छा न लगे, तो बंबई वाले मेरे दोस्त का ससुराल वहीं है।”¹²

प्रमित शाह— उपन्यास का एक अन्य पात्र प्रमित शाह दार्जिलिंग में रहता है। उसकी उम्र 40-42 वर्ष है। वह एक कवि है और अंग्रेजी साहित्य का अध्यापक भी है। वह गाथा को दार्जिलिंग एयरपोर्ट में मिलता है, जो कवि सम्मेलन में शामिल होने के लिए दिल्ली जा रहा था।

“आप दार्जिलिंग में रहते हैं?— वह बात को बदलने के लिए पूछती है। जवाब में वह अपना कार्ड निकाल उसे देने के लिए हाथ बढ़ाता है। जी हाँ। मैं एक कॉलेज में अंग्रेजी साहित्य पढ़ाता हूँ पर दरअसल कवि हूँ। लिखता हूँ।”¹³

अमित कुमार— अमित कुमार एक पढ़ा-लिखा व्यक्ति है। वह दिखने में सुंदर है। उसका छोटा और सुखी परिवार है, जिसमें पत्नी और दो छोटे-छोटे बच्चे हैं।

“एक पढ़ा-लिखा, देखने में सुदर्शन, अच्छे परिवार का और कायदे की नौकरी में लगा हुआ शख्स है। उसकी पत्नी का भी लगभग इन्हीं शब्दों या जुमलों में वर्णन किया जा सकता है। उनके दो छोटे-छोटे बच्चे भी हैं, यानी एक सुखी परिवार का कथानक मौजूद है।”¹⁴

कबीरू— कबीरू प्रमित का दोस्त था जो छोटी उम्र में ही गोली लगने से मर जाता है। उसने जीवन का वास्तविक अर्थ जाना ही नहीं था और न ही सांसारिक सुख भोगा था। वह कर्म में विष्वास रखता था। “कबीरू एक ऐसा दोस्त था, जो कुछ करना चाहता था। यानी सिर्फ कविता लिखना नहीं, कुछ करना। शरीर से। असल में कुछ करना।”¹⁵

गाथा के ससुर— गाथा के ससुर का नाम उपन्यास में नहीं दिया गया है। गाथा उन्हें बाबूजी कहकर संबोधित करती है। वह बीस साल से कमरे के ही अंदर बैठे रहते हैं। घर से बाहर भी नहीं निकलते, सुबह शहर भी जाना छोड़ दिया है। “तुम्हें पता है प्रमित, बाबूजी यानी मेरे ससुर अपने कमरे, हॉल में एक कुर्सी और एक रसोई के बीच त्रिकोण में घूमते रहते हैं।”¹⁶

गौण स्त्री पात्र

गाथा की माँ — नायिका की माँ का नाम ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास में नहीं दिया गया है। वह पुरानी परम्पराओं की सोच से जुड़ी महिला है। पुराने जमाने में लड़कियों को घरेलू कामकाज में निपुण बनाना ही महत्वपूर्ण कार्य माना जाता था। उस समय लड़कियों को शिक्षित करने के प्रति दृष्टिकोण विकसित नहीं हुआ था। महिलाओं की जिंदगी रसोई और जिम्मेदार बनने तक ही सीमित थी। इसलिए गाथा की माँ शिक्षा को अनावश्यक मानती हैं और वह गाथा पर पाक कला सीखने के लिए दबाव बनाती रहती है। “मैं कॉलेज में थी, तो आए दिन कहती, खाना बनाना सीख लो। इन किताबों से ज्यादा वही काम आएगा।”¹⁷

गाथा की दादी— ‘एक सच्ची झूठी गाथा’ उपन्यास में गाथा की दादी का नाम नहीं दिया गया है। उनकी सोच बहुआयामी है। दादी शिक्षा के प्रति जागरूक है और शिक्षा को प्राथमिकता देती है। वे खाना बनाने के काम को कठिन नहीं मानती हैं। वे गाथा को उसकी असीमित बौद्धिक क्षमता के अनुसार कार्य करने का मनोबल देकर उसका उचित मार्गदर्शन करती हैं। “दादी ने कहा था, खाना बनाने में क्या है, वह तो हर औरत बना लेती है। तुम्हें ईश्वर ने कुछ और करने के लिए बनाया है।”¹⁸

सीता माँ— उपन्यास में गाथा की सास का नाम सीता है। वह एक आदर्श महिला है और उनमें सज्जनता कूट-कूट कर भरी है। वे पन्द्रह साल की उम्र से ही सास के कठोर शासन में रही हैं। वह एक सर्वगुण संपन्न बहू और सास है। वे अपनी बहू गाथा के पढ़े-लिखे होने से प्रसन्न होती है। गाथा उनके स्वभाव को पसंद करती है।

“गाथा सीता माँ के चेहरे को देखती है। यह भोलापन उसे जैसा निरस्त्र करता है, वैसे दुनिया की सारी ताकते मिलकर भी नहीं कर सकती थी।”¹⁹

जैनी महिला— सीता माँ की सहेली जैनी महिला है। वह जैन धर्म के नियमों का पालन करती है। जैनी लोग सूक्ष्म जीवों की हत्या करना महापाप समझते हैं इसलिए सूक्ष्मजीवों की हत्या के डर से जैनी महिला जमीन के नीचे उगने वाली चीजें नहीं खाती है और अपने इस फैसले पर उसे गर्व है।

“हमारी सीता माँ की एक जैनी सहेली थी। वे बड़े गर्व से कहती थीं कि मैंने जिंदगी में कभी भी जमीनकंद—यानी जमीन के अंदर होने वाली सब्जियाँ आलू, गाजर, अदरक—नहीं खाईं।”²⁰

विदेशिनी महिला — इस महिला का नाम नहीं दिया गया है उसे विदेशिनी के नाम से संबोधित किया गया है। ये प्रमित की प्रेमिका है और उसका स्वभाव मर्मस्पर्शी और संवेदनशील है। प्रमित के जीवन के दुखों का प्रभाव प्रेमिका पर पड़ता है तो वह दुखी हो जाती थी। प्रमित जीवन भर उसे एक दुखमय जीवन से बचाने के लिए उससे शादी नहीं करता है। वे दोनों ही अलग हो जाते हैं। वह उसे जाते वक्त अपना एक आर्मेनियम गीत देकर जाती है।

“मैं न जाने कितनी दूर से

चलकर आया हूँ

पर देखता हूँ

सिर्फ अपनी कब्र

जहाँ तुम जार-जार हो रही हो”²¹

अहिल्या— अहिल्या को जब अपने पति और अपने घर में काम करने वाली लड़की के प्रेम प्रसंग के बारे में पता चलता है तो वह उस लड़की को नया मोबाइल देकर बड़ी मुश्किल से घर से निकालती है और

स्थितियों को संभालती है। “ऐसा नहीं था कि उसने बेफिक्र होकर कुछ अनचाहा घटने दिया हो। पर उसे पुबहा तक नहीं हुआ था, जब तक उसने संयोग से लड़की के मोबाइल पर पति के नम्बर से मिसड कॉल नहीं देख लिया।”²²

दीपशिखा— दीपशिखा से प्रमित की शादी तय होती है लेकिन उससे भी उसकी शादी नहीं हो पाती है। दीपशिखा शिक्षित महिला है जो पीएच.डी. कर रही है। वह शाकाहारी है और शराब का सेवन करना बहुत बुरा मानती है। उपन्यास में प्रमित दीपशिखा के खान-पान के बारे में बताता है। “वह मांस, अंडा कुछ नहीं खाती। बीयर पीना तो उसकी नजरों में महापाप है। मेरी रसोई ही मेरी नहीं रहेगी।”²³²²

उद्देश्य

इस बोध पत्र का उद्देश्य अलका सरावगी के उपन्यास में पात्र चयन में उनकी सूक्ष्म दृष्टि और गहरी सामाजिक सोच को प्रकट करना है। वे ऐसे पात्र का निर्माण करती हैं, जो कहानी को जीवन्त, ज्ञानवर्धक और प्रभावशाली बनाते हैं। वे इन पात्रों के माध्यम से तत्कालीन सोशल मीडिया की धोखाधड़ी, आतंकवाद, नक्सलवाद, शिक्षा, खान-पान, राजनीति जैसी समस्याओं को सामने लाती हैं और उनके समाधान के प्रति अपनी सोच व्यक्त करती हैं।

निष्कर्ष

अलका सरावगी हिन्दी साहित्य जगत की प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। उनके उपन्यास पात्र योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल माने जाते हैं। वे अपने उपन्यासों में सभी वर्गों और सभी प्रकार के पात्रों को समुचित स्थान देती हैं। उनके द्वारा रचित पात्र वास्तविक जीवन से जुड़े हुए प्रतीत होते हैं, जिसके कारण पाठक उनसे गहरे स्तर पर आत्मीय संबंध स्थापित कर लेता है।

पाठक अपने दैनिक जीवन में घटित होने वाली सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार की घटनाओं को कथा में प्रतिबिंबित पाकर भाव विभोर हो जाता है। उपन्यासों में पात्रों का चयन अत्यंत स्वाभाविक है तथा उनका व्यक्तित्व सरल, ओजपूर्ण और प्रभावशाली है। कथानक के अनूकूल ये पात्र सजीव रोचक एवं प्रभाव डालने वाले हैं। उनका चरित्रांकन विशिष्ट और स्मरणीय है। गाथा और प्रमित जैसे पात्र मर्मस्पर्शी होने के साथ-साथ मौलिकता के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ सूची

1. सरावगी अलका, एक सच्ची झूठी गाथा, पृ.सं. 129
2. वहीं पृ. सं. 146—147
3. वहीं पृ. सं. 14—15
4. वहीं पृ. सं. 59
5. वहीं पृ. सं. 66
6. वहीं पृ. सं. 41
7. वहीं पृ. सं. 20
8. वहीं पृ. सं. 21
9. वहीं
10. वहीं पृ. सं. 31—32
11. वहीं पृ. सं. 24
12. वहीं पृ. सं. 25
13. वहीं पृ. सं. 49
14. वहीं पृ. सं. 28
15. वहीं पृ. सं. 89
16. वहीं पृ. सं. 16
17. वहीं 21
18. वहीं पृ. सं. 21
19. वहीं पृ. सं. 31

- 20. वही पृ. सं. 37
- 21. वही पृ. सं. 66
- 22. वही पृ. सं. 12
- 23. वही पृ. सं. 137

पता— उदय कॉलोनी फेज 1, कंजाबाग, खटीमा, ऊधम सिंह नगर, उत्तराखंड 262308
9410169188
kavitakothari56@gmail.com



Agricultural Productivity and Its Regional Imbalance of North America

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

Abstract

Agricultural productivity in North America exhibits significant regional disparities shaped by geography, climate, and economic integration. From 1960 to 2015, U.S. states such as Ohio, Indiana, and Minnesota experienced robust annual productivity growth rates nearing 2%, driven by technological innovation, research and development, and efficient input use. In contrast, Southwestern states like New Mexico, Arizona, and Nevada showed much slower growth, often below 0.5%, reflecting challenges such as arid climates and drought stress. The Midwest remains the agricultural powerhouse, producing over 60% of key commodities like corn and soybeans, but faces emerging risks from climate change including heat waves and flooding that threaten future productivity. Meanwhile, North America's integrated agricultural market—spanning the United States, Canada, and Mexico—leverages complementary regional strengths, enabling the continent to be a global export leader. However, recent trends reveal a troubling slowdown in total factor productivity growth, with U.S. productivity contracting slightly in the last decade, raising concerns about meeting future food demand sustainably. Bridging the innovation adoption gap, especially in vulnerable regions, and advancing tailored solutions such as precision agriculture and climate-resilient practices are critical to reversing this trend. Understanding and addressing these regional imbalances is essential for ensuring food security, economic stability, and environmental sustainability across North America.

Keywords: Agricultural productivity, regional imbalance, North America, total factor productivity, U.S. Midwest, Southwest agriculture, climate change impact, agricultural innovation, NAFTA, USMCA, sustainable agriculture, food security, precision agriculture, drought resilience.

Introduction

North America stands as a global agricultural powerhouse, producing far more food than it consumes, with the United States, Canada, and Mexico deeply integrated through trade agreements like NAFTA and USMCA that have boosted cross-border agricultural flows and economic interdependence. Despite overall growth, agricultural productivity across North America is unevenly distributed, shaped by geography, climate, and resource availability. For example, the U.S. Central Valley in California is one of the most productive agricultural regions worldwide,

supplying over half of the nation's fruits, vegetables, and nuts, while the Great Plains dominate grain and soybean production. From 1960 to 2015, U.S. agricultural productivity growth rates varied widely by state, with Ohio achieving nearly 2% annual growth, contrasting sharply with New Mexico's 0.23%, illustrating stark regional disparities in output efficiency and technological adoption. The Midwest's Corn Belt and Soybean Belt are critical to U.S. and global food supply, contributing over 60% of national corn and soybean production, yet face increasing risks from climate change, including heat waves, droughts, and flooding, which threaten future productivity and economic stability. Canada's agricultural strength lies in its vast grain-producing prairies and critical inputs like potash fertilizer, which the U.S. imports heavily, underscoring the complementary nature of North American agriculture. Mexico specializes in fruits, vegetables, and labor-intensive products such as avocados and tomatoes, supplying a large share of U.S. imports and benefiting from favorable climates that extend growing seasons beyond northern limits. Regional imbalances also reflect differences in investment and innovation: while some U.S. states and Canadian provinces have seen robust productivity gains driven by advanced crop breeding, precision agriculture, and mechanization, others, particularly in the Southwest U.S., face challenges from drought and resource constraints, prompting innovative rangeland management and heat-tolerant livestock breeds.

Statement of the Problem

Agricultural productivity in North America exhibits significant regional disparities that challenge the sustainability and equitable development of the sector. From 1960 to 2015, productivity growth rates varied widely across U.S. states, with Ohio achieving an average annual growth of 1.95%, while New Mexico lagged at just 0.23% (USDA ERS, 2025). This uneven growth reflects differences in climate, soil quality, technological adoption, and economic infrastructure. The United States, Canada, and Mexico form an integrated agricultural powerhouse, with each country leveraging distinct geographic and climatic advantages. For example, the U.S. Midwest (the Corn Belt) dominates grain and soybean production, contributing over 60% of national output for these crops, while California's Central Valley supplies more than half of the nation's fruits, vegetables, and nuts. Mexico specializes in vegetables and fruits like avocados and tomatoes, which are critical to cross-border trade (CSIS, 2025). Despite this integration, regional imbalances persist due to varying environmental conditions and resource availability. The Southwest U.S. faces severe drought and arid conditions that limit crop productivity, relying more on rangeland livestock systems that require innovative management to sustain output. Meanwhile, the Midwest confronts risks from climate change, including heat waves, droughts, and flooding, which threaten its role as a global food supplier (Virginia Tech CALS, 2025; Chicago Fed, 2023). These disparities are compounded by economic and social factors. Regions like California's Central Valley, despite high productivity, struggle with poverty and environmental challenges such as air pollution. In contrast, the Midwest's agricultural economy is vital to rural communities but vulnerable to climate variability and market fluctuations. The problem is further intensified by a recent slowdown in U.S. agricultural productivity growth, which contracted by 0.21% annually from 2013 to 2022, contrasting with global growth trends. This slowdown underscores the urgency of addressing regional imbalances through tailored technological innovations, sustainable resource management, and policy support to ensure food security and economic resilience across North America (GAP Report, 2025).

Objectives

- Understand Regional Productivity Variations: Examine how agricultural productivity growth rates differ significantly across North American regions and U.S. states, such as

Ohio's high growth rate of 1.95% annually (1960–2015) versus New Mexico's low 0.23%, reflecting diverse climatic, technological, and resource conditions.

- Identify Drivers of Productivity Growth: Analyze the roles of technological innovation, research and development (R&D), mechanization, and input use shifts (e.g., labor decline, increased machinery and intermediate inputs) in driving productivity, with a focus on how these factors vary regionally across the U.S., Canada, and Mexico.
- Assess Economic Integration and Trade Impacts: Explore how North American agricultural integration under NAFTA and USMCA has leveraged regional comparative advantages, boosting cross-border trade in fruits, vegetables, grains, and livestock products, while also revealing imbalances in production specialization and export dependencies.
- Evaluate Challenges from Climate and Market Dynamics: Investigate how climate change risks—such as heat waves, droughts, and flooding—disproportionately affect key agricultural regions like the U.S. Midwest, impacting crop yields and regional economic stability. Additionally, consider trade disputes and rising global competition that influence regional productivity incentives and export performance.

Literature of review

- Agricultural productivity in North America has grown substantially over the past six decades, with the United States, Canada, and Mexico forming a major agricultural powerhouse.
- From 1960 to 2015, U.S. agricultural productivity growth rates varied widely by state, ranging from as low as 0.23% annually in New Mexico to 1.95% in Ohio, with a median growth rate of 1.34% per year (USDA ERS, 2025).
- The region's agricultural sector benefits from technological advances, integrated markets under NAFTA/USMCA, and strong export orientation, making it a global leader in food production and trade (CSIS, 2025).
- Productivity growth is uneven across North America, with the U.S. Midwest and Northern Plains showing higher growth rates compared to the Mountain and Southwest regions, reflecting differences in land quality, climate, and infrastructure (Pardey & Alston, 2025).
- Mexico faces significant challenges with nearly 47% of its land area degraded, impacting agricultural output and productivity, while Canada and the U.S. maintain higher land and water quality standards (Corteva Agriscience, 2020).
- U.S. agricultural productivity growth over the last century was driven by R&D investments, mechanization, and structural changes such as farm consolidation and specialization (Pardey & Alston, 2025).
- The integration of North American agricultural markets under NAFTA and USMCA has enhanced efficiency by leveraging each country's comparative advantages, boosting intra-regional trade in crops, livestock, and inputs (CSIS, 2025).
- Despite high productivity, North America faces challenges including water quality degradation, climate change impacts, and rising inequality, particularly in Mexico where political instability and resource degradation threaten agricultural sustainability (Corteva Agriscience, 2020; IPCC AR6, 2023).

Methodology

- Agricultural productivity measurement in North America primarily relies on Total Factor Productivity (TFP), which integrates all inputs—land, labor, capital, and materials—against total agricultural output, providing a comprehensive efficiency metric beyond simple yield or labor productivity.

- The U.S. Department of Agriculture’s Economic Research Service (ERS) employs a gross output production model that includes disaggregated data on physical quantities and market prices of crops, livestock, and aquaculture products, accounting also for inseparable secondary farm activities such as machine services and custom feeding.
- Inputs are quality-adjusted, especially agricultural land, which is classified into cropland, permanent pasture, and irrigated areas, each weighted by coefficients reflecting their relative productivity; this adjustment corrects for heterogeneity in land quality across regions, crucial for accurate regional productivity comparisons.
- Data sources for North American agricultural productivity analysis include FAOSTAT, ILOSTAT, USDA National Agricultural Statistics Service, and regional statistical agencies, ensuring internationally consistent and comparable productivity growth rates.
- Spatial accounting frameworks and high-resolution geospatial data enable the assessment of geographic and environmental factors—soil quality, climate, topography—that influence productivity disparities within North America, such as between California’s Central Valley and other regions.

Conclusion

North America stands as a global agricultural powerhouse, with the United States, Canada, and Mexico collectively producing a vast surplus of food that supports both regional consumption and significant exports worldwide. The U.S. leads in farm output, nearly tripling its 1948 production level by 2021, driven primarily by sustained total factor productivity growth averaging 1.49% annually, despite a slight overall decline in input use. However, productivity growth is unevenly distributed across the continent: the U.S. Midwest, Northeast, and parts of the West Coast show strong gains, while the Southwest experiences slower growth due to climatic challenges and reliance on rangeland systems. Regional imbalances reflect differences in land quality, farm size, labor availability, and climate impacts—Midwestern states dominate in acreage and output, while the Northeast and Delta regions have smaller farm sizes and lower production volumes. Mexico faces particular challenges with land and water quality, political risks, and infrastructure gaps that constrain agricultural productivity and food security, despite its vital role as a major supplier of fruits and vegetables to the U.S. market. The integration of North American agricultural markets under trade agreements like USMCA has enhanced interdependence, allowing each country to leverage its comparative advantages, but also underscores the need for coordinated policies to address shared risks such as climate change and resource degradation. Looking forward, sustainable productivity growth will require region-specific innovations—from precision agriculture and heat-tolerant livestock breeds in the arid Southwest to regenerative practices and improved infrastructure in Mexico—ensuring resilience and equitable development across North America’s diverse agricultural landscapes. Addressing these regional disparities is critical not only for maintaining North America’s food security and export leadership but also for supporting rural economies and adapting to evolving environmental and economic pressures in the decades ahead.

References

- The North American agricultural sector, encompassing the United States, Canada, and Mexico, is a global powerhouse with highly productive systems but marked by significant regional disparities in productivity growth and resource challenges (The Economist Intelligence Unit, 2020; CSIS, 2025).
- According to the 2024 Global Agricultural Productivity (GAP) Report by Virginia Tech, global agricultural productivity growth has slowed dramatically from 1.9% annually (2001-2010) to 0.7% annually (2013-2022), with the U.S. experiencing a contraction of

0.21% per year during the same period, highlighting urgent concerns for future food security and sustainability (Virginia Tech CALS, 2024).

- Regional productivity growth within the U.S. varies widely: the Midwest, Northeast, and parts of the West Coast show the highest annual growth rates (1.52% to 1.95%), while Southwestern states such as Nevada, New Mexico, Arizona, and Wyoming lag significantly (0.23% to 0.53%) due to climatic and ecological constraints (Virginia Tech CALS Global, 2025).
- Innovative approaches to address these imbalances include precision ranching and heat-tolerant cattle breeds in the Southwest, aiming to sustain rangeland productivity amid increasing drought and climate stress (Virginia Tech CALS Global, 2025).
- Water availability remains a critical limiting factor globally and regionally; studies indicate that approximately 11% of croplands and 10% of grasslands worldwide are vulnerable to reduced water availability, with North America facing risks related to water quality degradation and eutrophication, especially in agricultural zones of Mexico and the U.S. (ScienceDirect, 2018; Economist Intelligence Unit, 2020).
- The integration of North American agricultural markets under NAFTA and USMCA has boosted productivity and trade, with the U.S. exporting \$174.9 billion in agricultural products globally in 2023, including \$32 billion to Canada and \$28.6 billion to Mexico, reflecting complementary regional strengths in crop and livestock production (CSIS, 2025).
- Climate change impacts, including heat stress on labor productivity and seasonal variability, disproportionately affect agricultural workers and production in vulnerable regions, underscoring the need for adaptive strategies tailored to local environmental conditions (PMC, 2021).



“हिन्दी उपन्यासों में कथानक की विशिष्टता”

डॉ. प्रकाश नारायण सिंह चौहान

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
कमला स्मृति महाविद्यालय सीधी (म.प्र.)

शोधसार:

कथानक किसी भी कथा साहित्य का वह तत्व होता है जिसके इर्द-गिर्द पूरे कथा साहित्य का घटनाक्रम रचा जाता है। सरल अर्थ में कहे तो किसी भी कथा साहित्य के पूरे घटनाक्रम का आधार ही कथानक है और कथानक से ही ज्ञात होता है कि कथा का विषय क्या है वह किस घटनाक्रम पर रखी गयी है। कथानक अंग्रेजी के प्लॉट शब्द का रूपांतर है जिसके आधार पर किसी भी कथा साहित्य को रचा जाता है। जिस तरह से इंजीनियर प्लॉट को देखकर भवन का वर्तमान और भविष्य निर्मित करता है ठीक वैसे ही कथाकार कथानक के अनुरूप कथा को रचता और सवारता है।

कथानक के विषय में अधिकांश विद्वान एकमत हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में परिभाषाओं को उद्घृत करने की चेष्टा नहीं की गयी है। परिणाम स्वरूप यही कहना उचित है कि कथानक उपन्यास का मूल तत्व है, जिसका महत्व अन्य तत्वों से अधिक है। कथानक ही वह वस्तु होती है जिस पर कथा साहित्य का भवन निर्मित हो सकता है इसलिये इसे उपन्यास का ढाँचा मान सकते हैं। कथानक को घटनाओं का लेखा-जोखा भी कहा जा सकता है। इसीलिए इसके निर्माण में घटना-विन्यास संबंधी अन्य बातें महत्वपूर्ण हैं जिन पर भी विचार करना उचित होगा। सर्वप्रथम अगर रोचकता, सत्यता, मौलिकता, निर्माण कौशल, सम्बद्धता की बात करे तो किसी भी कथानक की पूर्णता उसके कथाकृति में उपस्थित किये गए रूप पर निर्भर होती है, जिसके निर्माण के लिए उसका सुगठित होना पहली सीढ़ी (बाजी) है। यदि उसमें पारम्परिक सम्बद्धता नहीं है तो कथा-ऋंखला टूटी हुई जान पड़ती है। जिससे प्रभावात्मकता की संभावनाएँ समाप्त सी लगने लगती हैं। इस सन्दर्भ में गणपति चन्द्र गुप्त का कहना है कि “उपन्यास के कथानक के तीन आवश्यक गुण हैं रोचकता, स्वाभाविकता एवं प्रवाह या गतिशीलता। उपन्यास के प्रथम पृष्ठ में ऐसी शक्ति होनी चाहिये कि, पाठक हृदय में ऐसा कौतुहल जागृत कर दे, की वह पूरी रचना को पढ़ने के लिये विवश हो जाये यदि कोई पाठक किसी उपन्यास को जान-बूझकर अधूरा छोड़ देता है तो यह दोष पाठक का नहीं अपितु लेखक का है, जो अपने उपन्यास के कथानक में प्राण नहीं फूँक सका।”¹

अतः कथाकार कथानक के चुनाव के साथ-साथ उसमें सम्बद्धता तथा घटनाक्रम के निर्माण में कितने विवेक के साथ उतर रहा है यह ध्यान रखने योग्य है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं कि “कथानक विविध घटनाओं या कार्य-कलापों के संकलन या संचयन मात्र को कहते हैं।”²

कथाकार के दृष्टिकोण में मौलिकता की कितनी संभावनाएँ हैं, इसका परिचय इस बात से मिलता है कि वह जीवन की गहनता से किस सीमा तक परिचित है तथा उसकी मूलभूत समस्याओं और उनसे संबंधित तथ्यों का उसने साक्षात्कार किया है अथवा नहीं अगर कोई कथाकार किसी एक अनुभूति की अभिव्यक्ति अधिक विस्तार और सूक्ष्मता से कर सकता है, तो यह उसकी मौलिक दृष्टि का परिचय देने में योग्य है। इसी तरह से कथानक में निर्माण कौशल का आशय यह समझना चाहिए कि कथाकार अनेकानेक घटनाओं का नियोजन किस ढंग से करता है। क्योंकि यह क्रम कथानक के विकास का क्रम होता है। इसी के दिग्दर्शन के लिए वह कल्पना शक्ति का तानाबाना बुनने की कोशिश करता है जो कथा की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाती है और वास्तविकता की छाया के रूप में उभरती है। एक कथाकार के अन्दर भले ही अत्यन्त गूढ़ दर्शन और नैतिकता हो लेकिन रोचकता का अभाव है तो उसकी कथा पाठक के हृदय में अपना स्थान बना पाने में असमर्थ ही सिद्ध होती है अतः ऐसी स्थिति में कथाकार को रोचकता की सृष्टि के लिए नवीन पात्रों और घटनाओं का संचयन करना अनिवार्य हो जाता है।

कथानक के महत्व हेतु कुछ अन्य सामान्य विषेशताओं की ओर भी ध्यान देना होगा। जैसे मानव जीवन की समस्याओं की व्याख्या, प्रतिनिधित्व का संकेत, जीवन के विविध अवस्थाओं का चित्रण और जीवन पक्ष के महत्व का मूल्यांकन। कथानक की जो अनुभूतियाँ मुख्यतः कथा से जुड़ी हैं उनकी अभिव्यक्ति की पूर्णता ही कथा को प्रभावी बनाने में सहायक होती है। फलतः कथानक को ही उपन्यास मानना पड़ता है। “धर्मवार भारती ने अपने उपन्यास ‘सूरज का सातवाँ घोड़ा’ में नवीन शिल्पगत प्रयोग किया है। इस उपन्यास में लेखक ने भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की अलग-अलग कहानियों को एक सूत्रात्मकता का रूप देने का प्रयास किया है। रुद्र जी ने ‘बहती गंगा’ उपन्यास में सत्रह कहानियों के द्वारा काशी नगरी के पिछले दो सौ वर्षों के इतिहास की झाँकी प्रस्तुत की है। ‘चाँदनी के खण्डहर’ में गिरिधर गोपाल ने चौबीस घण्टों की कथा के आधार पर उपन्यास के कथानक की कल्पना-नियोजित की है। ‘ग्यारह सपनों का देश’ उपन्यास एकदम नवीन प्रयोग है क्योंकि वह कई लेखकों के द्वारा लिखा गया है इस प्रकार उपन्यासों में भी विभिन्न नवीन प्रयोग हो रहे हैं।”³

यही कारण है कि कथानक को कई तरीकों से गुजरना होता है। जैसे की वर्णनात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, डायरी शैली आदि शैलियों से कथानक गुम्फित हुआ करता है।

वर्णनात्मक शैली के संदर्भ में यह कहा जाता है कि यह शैली सर्वाधिक प्रचलित शैली है। क्योंकि इस शैली में कथाकार इतिहासकार के समान वर्ण्य विषय का उसकी सीमाओं के अनुसार उद्घाटन करता चलता है। अन्त में वह कोई निर्णय या किसी मान्यता की स्थापना करता है। आत्मकथात्मक शैली में कथाकार नायक, नायिका या किसी अन्य पात्र का रोल स्वयं अदा करता है। डॉ. श्री कृष्णलाल ने इस शैली के संदर्भ में लिखते हैं कि “नायक के चरित्र-चित्रण की दृष्टि से यह शैली सर्वोत्तम है स्वयं कथा कहने के कारण नायक अपने अन्तःस्थल तक की बातों का अत्यन्त प्रभावपूर्ण वर्णन कर सकता है, परन्तु इस शैली में एक दोष है कि नायक के अतिरिक्त अन्य चरित्रों का सुन्दर चित्रण नहीं हो पाता है। इसके अतिरिक्त कथा के सौन्दर्य की भी इस शैली से पर्याप्त क्षति होती है। इसमें वर्णनात्मक शैली के उपन्यासों की भाँति मनोवैज्ञानिक चित्रण तथा प्रकृति के सुन्दर चित्र नहीं मिल सकते। साधारणतः यह शैली केवल उन्ही उपन्यासों के लिए उपयुक्त है जहाँ केवल एक ही प्रधान चरित्र हो और अन्य सभी चरित्र बहुत साधारण हो और वे संख्या में कम भी हों।”⁴

अगली पत्रात्मक शैली है जिसमें सम्पूर्ण कथा पत्रों के रूप में कही जाती है जैसे कि बेचन शर्मा ‘उग्र’ ने ‘चन्द हसीनों के खतूत’ में कही है। इसके बाद डायरी शैली के संदर्भ में डॉ. श्यामसुन्दर दास ने ‘साहित्यालोचन’ में लिखा है कि “उपन्यासों की कथा कहने के तीन ढंग हैं पहले ने तो उपन्यासकार इतिहासकार का स्थान ग्रहण करके और वर्णनीय कथा से अपने को अलग रख कर अपने वस्तु विधान का क्रमशः उद्घाटन करता हुआ पढ़ने वालों को अपने साथ लिये हुये अन्तिम परिणाम तक पहुँचा कर अपना अभिप्रेत बहाव उत्पन्न करता है। दूसरे ढंग में उपन्यासकार नायक का आत्म चरित्र उसके मुँह से अथवा

कभी-कभी किसी उप पात्र या गौण पात्र के मुँह से कहलाता है। तीसरा ढंग वह है जिसमें प्रायः चिट्ठियों आदि के द्वारा कथा का उद्घाटन किया जाता है। तीसरा ढंग बहुत कम और पहला ढंग बहुत अधिक काम में लाया जाता है। पहले ढंग का अनुसरण करने में ग्रंथकार को अपना कौशल दिखाने को पूरा-पूरा अवसर मिलता है। दूसरे और तीसरे ढंग का अनुसरण करने में उसे कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इनमें से सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वह अपनी समस्त सामग्री का यथोचित उपयोग नहीं कर सकता है।⁵

कथानक के आधार पर दो तरह के उपन्यास देखने को मिलते हैं। प्रथम शिथिल वस्तु उपन्यास और द्वितीय संगठित वस्तु उपन्यास।

प्रथम के अन्तर्गत वे उपन्यास आते हैं जिनके कथानक में संबद्धता का अभाव होता है और वे सूत्रों में बिखरे हुये होते हैं। द्वितीय कोटि के उपन्यास वे हैं जिनका कथानक सुगठित तथा एकसूत्रात्मक होता है। उनकी सभी घटनाएँ परस्पर संबद्ध होती हैं। तथा उनकी क्रमबद्धता कहीं भंग नहीं होने पाती।

उपसंहार

हिन्दी उपन्यासों की विभिन्न धाराओं में कथानक में बदलाव होता रहा है कथाकार अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार सृजन करता है। इस संदर्भ में भारतेन्दु की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार से हैं—

“जमीनें चमन गुल खिलाती है क्या-क्या?

बदलता है रंग आसमों कैसे-कैसे?

हिन्दी उपन्यास ने अल्प समय में काफी विकास किया है इस जमाने को उपन्यास की हवा तेजी से लगी है। आज उपन्यास में बौद्धिकता का बढ़ा हुआ रूप झलक रहा है। अब उपन्यास जीवन को समझने और समझाने की व्याख्या और विश्लेषण का विषय बन गया है। मौलिकता और फैशन के आग्रह से उपन्यास के कथानक शिल्प में नये-नये प्रयोग देखे जा सकते हैं। वास्तव में साहित्य का उद्देश्य मानव मूल्य की स्थापना करना है जिसमें उपन्यासों के कथानक की महती भूमिका होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धांत, डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.सं. 248
2. साहित्य का साथी (डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी) पृष्ठ 10
3. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ. जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, पृ. सं. 585
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास (डॉ. श्री कृष्णलाल) पृष्ठ संख्या 287।
5. सहित्यालोचन, डॉ. श्यामसुन्दर दास, पृ. सं. 162।

ईमेल— chauhan7106@gmail.com



ज्योतिबा फुले के चिन्तन में सामाजिक न्याय की अवधारणा : एक समीक्षात्मक अध्ययन

विनोद कुमार

सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान)

स्वामी विवेकानन्द राजकीय महाविद्यालय, खेतड़ी, झुन्झुनूं (राजस्थान)

सारांश

सामाजिक न्याय एक अनवरत चलने वाली अवधारणा है जिसका लक्ष्य अपने समय की सामाजिक व्यवस्था को हर तरह से समाज में निवास करने वाले लोगों के लिए न्यायोचित बनाना है। ज्योतिबा फुले भी उन्नीसवीं शताब्दी के एक महान् दार्शनिक, प्रबुद्ध चिन्तक व दूरदर्शी समाज सुधारक थे जिन्होंने न केवल अपने चिन्तन में अपितु व्यवहारिक जीवन में भी शूद्र, अतिशूद्र, स्त्री, किसान तथा समाज की मुख्यधारा से कटे हुए तबकों को जाग्रत कर सामाजिक न्याय की आधारशिला रखने का प्रयास किया। समाज में निचले पायदान पर स्थित वर्गों के उत्थान के लिए उन्होंने न केवल उनका पथ-प्रदर्शन किया बल्कि स्वयं भी निस्वार्थ भाव से इसके लिए प्रयत्नशील रहे। वे तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक बुराईयों की भर्त्सना करते हुए जातीय बंधनो, पितृसत्तात्मक व्यवस्था तथा सामाजिक विषमता के निर्मूलन पर बल देते थे। मानव मुक्ति की लगन रखने वाले फुले असमानता व अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के स्थान पर ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जहाँ सामाजिक स्तर पर सभी बराबरी का अनुभव करें तथा व्यक्तिगत स्तर पर सभी आत्मसम्मान के साथ जीवन का निर्वाह कर सकें।

मुख्य शब्द : सामाजिक न्याय, समाज सुधारक, जातिगत भेदभाव, लैंगिक समानता, मुख्यधारा इत्यादि।

परिचय :

ज्योतिबा फुले उन्नीसवीं शताब्दी के प्रगतिशील समाज सुधारक व विचारक थे जो तत्कालीन सामाजिक स्थितियों व परिवेश से खुश नहीं थे। वे समावेशी व न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए समाज में आमूलचूल सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते थे, अतः उन्होंने उस समय के ज्वलंत मुद्दों को न केवल उठाने का काम किया बल्कि उनके समाधान का प्रयास भी किया। सामाजिक न्याय तथा सद्भावना पर आधारित शोषण मुक्त समाज का स्वप्न देखने वाले ज्योतिबा फुले ने सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देते हुए शूद्रों, अतिशूद्रों, दलितों इत्यादि को जातिगत भेदभाव, आर्थिक विषमता तथा धार्मिक कट्टरता से मुक्ति दिलवाने के लिए जीवनभर प्रयत्न किए थे।

ज्योतिबा फुले के चिन्तन में सामाजिक न्याय :

ज्योतिबा फुले का समस्त चिन्तन तथा साहित्य मानव समाज को एक नई दिशा देने वाला तथा स्वतन्त्रता, समता एवं न्याय के बोध से आप्लावित था। सामाजिक सुधारों के पक्षधर ज्योतिबा फुले शूद्र, अतिशूद्र, स्त्री, शोषित, किसान, मजदूर सहित हर वर्ग की दयनीय स्थिति से परिचित थे। वे भारतीय समाज के निम्न जाति समूहों के उत्पीड़ितों का सर्वांगीण विकास चाहते थे। उनका मानना था

कि तत्कालीन भारतीय समाज में ऐसी सामाजिक रूढ़ियाँ व दुर्गुण हावी हो गए हैं जिसने समाज के विकास को अवरुद्ध करने का कार्य किया है। वे न केवल सैद्धांतिक तौर पर अपमानजनक कुरीतियों तथा कुप्रथाओं का विरोध करते थे बल्कि व्यवहारिक तौर पर उनको जड़ से उखाड़ना चाहते थे।

ज्योतिबा फुले तत्कालीन समाज में विद्यमान वर्ण व्यवस्था व जातिप्रथा को न्यायसंगत नहीं मानते थे। उनका मानना था कि इन्होंने भारतीय समाज की एकता को ध्वस्त करने का कार्य किया है। वे असमानता व भेदभाव पर टिकी हुई इन व्यवस्थाओं पर कड़ा प्रहार करते हुए इसके उन्मूलन पर बल देते थे। उन्होंने स्वयं अपने जीवन में जाति आधारित भेदभाव का सामना किया था, इसलिए उन्होंने अपनी रचनाओं में भी जातिगत अन्यायों को उजागर करने का कार्य किया है। वे समाज में विद्यमान उन सभी मान्यताओं का विरोध करते थे जो मानवता के बीच भेद उत्पन्न करने का काम करती हैं। उनका मानना था कि वर्ण एवं जाति आधारित असमानता के कारण समाज में निम्न जाति समूहों के साथ दोगम दर्जे का व्यवहार किया जाता है। उन्होंने जातिप्रथा तथा छुआछूत का न केवल वैचारिक विरोध किया अपितु व्यवहारिक धरातल पर भी इनके उन्मूलन के लिए जीवनभर संघर्ष किया।

ज्योतिबा फुले ने निम्न जाति समूहों पर समाज में हो रहे अत्याचारों का विरोध करते हुए उनके लिए अधिकारों की मांग उठाई। उन्होंने मनुस्मृति की उन सभी मान्यताओं का खण्डन किया जो मानव-मानव के मध्य भेद उत्पन्न करती हैं। उनके समय में अछूतों की ऐसी स्थिति थी कि उन्हें आसानी से पीने का पानी भी उपलब्ध नहीं होता था ऐसे समय में उन्होंने अपने घर का पानी का हौज सभी के लिए खोल कर मानव धर्म का निर्वहन किया। पूना नगरपालिका के सदस्य रहते हुए उन्होंने गरीब व अछूत समझे जाने वाले लोगों के हितार्थ अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए। सामाजिक समरसता के समर्थक फुले समता आधारित समाज व्यवस्था की स्थापना के लिए श्रेणीबद्ध असमानता का विरोध करते हुए शूद्र, अतिशूद्र के उत्थान पर बल देते थे।

ज्योतिबा फुले ने अपना समस्त जीवन बहुजनों, दलितों, वंचितों व महिलाओं के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया। स्त्री-पुरुष समानता के पक्षधर फुले कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, बहु विवाह, बेमेल विवाह, सती प्रथा तथा देवदासी जैसी घृणित प्रथाओं की निंदा करते हुए महिलाओं को समाज में सम्मानजनक स्थान प्रदान करने की पैरवी करते थे। वे उन सब अधिकारों की वकालत महिलाओं के लिए करते थे जो पुरुषों को प्राप्त थे। सदियों से विद्यार्जन से वंचित नारी शक्ति को शिक्षित करने के लिए वर्ष 1848 में उन्होंने कन्या पाठशाला की स्थापना कर महिला शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया। इस पाठशाला में उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले प्रथम शिक्षिका बनीं। वे शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन व सुधारों का वाहक मानते हुए सभी को शिक्षा प्रदान करने पर बल देते थे। उन्होंने शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु रात्रि प्रौढ़शाला व पुस्तकालय भी स्थापित करवाए। 1882 ई. में हंटर कमीशन के समक्ष भी उन्होंने शिक्षा के संबंध में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था। विधवा महिलाओं की समाज में दयनीय स्थिति से वे भली-भांति परिचित थे अतः उन्होंने उनकी दशा में सुधार लाने के लिए भी भरसक प्रयत्न किए। उस समय समाज में विधवा के मुंडन की अमानवीय व अशोभनीय प्रथा का प्रचलन था जिसका ज्योतिबा फुले ने घोर विरोध किया।

ज्योतिबा फुले अपने समय के अशिक्षित शूद्र-अतिशूद्र किसानों व मजदूरों पर साहूकारों तथा जमींदारों द्वारा किये जा रहे अत्याचारों से भी अच्छी तरह से अवगत थे। कुछ किसानों व मजदूरों की तो ऐसी दशा थी कि उन्हें तन ढकने के लिए भी पर्याप्त मात्रा में कपड़ा नसीब नहीं होता था। फुले ने न केवल अपनी रचनाओं में उनकी समस्याओं को उजागर किया अपितु उनके हक की आवाज़ को भी उठाने का कार्य किया। वे सदा से उपेक्षित समझें जाने वाले इन लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के पक्षधर थे।

धार्मिक सहिष्णुता के पक्षधर फुले समाज में धर्म के नाम पर किये जाने वाले भेदभावों का विरोध करते हुए धर्मनिरपेक्ष व लोकतांत्रिक समाज की पैरवी करते थे। उन्होंने मूर्ति पूजा, अवतारवाद, पुरोहितवाद, भाग्यवाद का विरोध करने के साथ-साथ स्वार्थी व पाखंडी लोगों द्वारा फैलाई जा रही कुरीतियों व अंधविश्वासों पर असहमति व्यक्त करते हुए उनके उन्मूलन पर बल दिया। धार्मिक कट्टरता व रूढ़िवादिता का उन्होंने घोर विरोध किया था जिसके प्रतिक्रियास्वरूप कुछ कट्टरवादियों ने उनकी हत्या करवाने का प्रयास किया लेकिन वे सफल नहीं हो सके।

उन्होंने समाज में सुधार लाने के साथ-साथ समाज में हाशिए पर पड़े वर्गों तथा नीची जाति के लोगों को सामाजिक व सांस्कृतिक दासता से मुक्ति दिलवाने हेतु वर्ष 1873 में सत्यशोधक समाज की स्थापना की। उन्होंने सत्यशोधक समाज के माध्यम से समाज में जागृति लाने के लिए सामाजिक बुराइयों के खिलाफ आवाज़ उठाते हुए समाज में हो रहे अन्याय व दमन पर कड़े प्रहार किए।

इस प्रकार ज्योतिबा फुले सामाजिक विषमता, गैरबराबरी तथा धार्मिक आडम्बरों का निर्मूलन करते हुए सामाजिक समता व न्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था की स्थापना का स्वप्न देखते थे। उनके द्वारा लैंगिक समानता, महिला सशक्तीकरण, शिक्षा तथा निम्न जाति समूहों के उत्थान की दिशा में जो अद्वितीय कार्य किए गए वो वर्तमान में भी युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन कर रहे हैं। उनके सामाजिक न्याय संबंधी चिंतन से दलितों के मसीहा के रूप में विख्यात डॉ. भीमराव अम्बेडकर भी अत्यधिक प्रभावित थे। भारतीय संविधान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने वाले डॉ. अम्बेडकर ने बीसवीं शताब्दी में सामाजिक न्याय से संबंधित विभिन्न प्रावधानों को संविधान में स्थान दिलवाकर ज्योतिबा फुले के विचारों को आगे बढ़ाने का कार्य किया।

निष्कर्ष :

सामाजिक न्याय की संकल्पना ज्योतिबा फुले के चिन्तन की आधारशिला है। वे न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए जीवनभर प्रयत्नशील रहे। उन्होंने नारी, शूद्र, अतिशूद्र, किसान तथा मजदूर वर्गों को दयनीय स्थिति से उबारकर समाज की मुख्यधारा में लाने तथा समरसता व न्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए परम्परागत भारतीय समाज की पुनर्रचना पर बल दिया। उनके संघर्षशील व्यक्तित्व और आत्मविश्वास से लबरेज आवाज़ ने निम्न जाति समूहों को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। उनका सामाजिक न्याय संबंधी चिंतन आज भी उनके अनुयायियों के साथ-साथ अन्य समाज सुधारकों के लिए प्रासंगिक बना हुआ है।

सन्दर्भ सूची :

1. पूरणमल (2010), मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर
2. सिंह, रामगोपाल (2010), सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
3. जाटव, डी.आर. (2015), सामाजिक न्याय का सिद्धान्त, समता साहित्य सदन, जयपुर
4. गाबा, ओम प्रकाश (2012), राजनीति-चिंतन की रूपरेखा, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा
5. पुरोहित, बी.आर. (2004), आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
6. नामदेव (2024), जोतिबा फुले आधुनिक सामाजिक क्रांति के अग्रदूत, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली
7. योगमाया (2004), महात्मा जोतीराव फुले : दर्शन एवं चिन्तन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
8. आचार्य, हेमलता (2021), भारत की सामाजिक क्रांति के पथ-प्रदर्शक जोतिबा फुले, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली
9. सामोता, के.सी. (2024), भारतीय राजनीतिक चिंतन, आर बी एस ए पब्लिशर्स, जयपुर
10. फुले, जोतिबा (2021), गुलामगिरी(अनुवादक-डॉ. विमलकीर्ति), सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली
11. पाखरे, सुषमा (2022), युगस्त्री सावित्रीबाई फुले जीवन दर्शन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली
12. शहा, मु. ब. (2022), भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा जोतिबा फुले, राधाकृष्ण पेपरबैक्स, दिल्ली
13. सप्रे, सदानन्द दामोदर (2018), सामाजिक समरसता के पुजारी : महात्मा फुले और डाक्टर अम्बेडकर, अर्चना प्रकाशन, भोपाल



“भारतीय संगीत में महिलाओं का योगदान”

नेहा

पी०एच०डी० शोधार्थी (संगीत),

आगरा कॉलेज, आगरा

प्रोफेसर आन्शवना सक्सेना

शोध -निर्देशिका

डॉ० भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

शोध सारांश :

सभ्यता से वर्तमान तक की जीवन यात्रा में नारी की उपयोगिता उसका महत्त्व और उसके दर्जे में भी उतार-चढ़ाव आते रहे हैं। लेकिन इन सभी विभिन्नताओं के बावजूद भी भारतीय संस्कृति में नारी का माँ और देवी शक्ति के रूप में दर्जा हमेशा ऊँचा रहा है। हमारे आचार्यगण भी व्यवहारिक जीवन की शिक्षा में "मातृदेवी भवः, पितृदेवो भवः, आचार्य देवो भवः" कहते थे। इनमें माता का स्थान गुरु और पिता से पहले है। ऐसा कोई भी पहलू नहीं है जो महिला से अनछुआ रहा हो अर्थात् ऐसा कोई भी क्षेत्र या कार्य नहीं है जो स्त्री नहीं कर पाई। उसने प्रत्येक क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इसलिए कला के क्षेत्र में भी अपनी भूमिका निभाई है, जिसमें हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, पार्श्व गायन में भी अपनी जगह निश्चित की है। स्त्री को शुरु से ही पुरुष के साथ यज्ञों और अनुष्ठानों में एक साथ भाग लेने का अधिकार है। कहा भी कहा गया है – 'जहां नारी की पूजा की जाती है वहाँ देवता वास करते हैं'। नारी और संगीत प्रकृति और स्वभाव से एक दूसरे के निकट है। अनादि काल से संगीत और नारी एक दुसरे के पूरक रहें हैं। नारी कंठ की बनावट प्रकृति ने ही कुछ इस प्रकार से की है कि उससे निकले स्वर स्वतः मधुर और मनमोहक हो जाते हैं। कला मानव-संस्कृति का प्राण है, जिसमें मन तथा शरीर की अनुभूति निहित है। संगीत के गायन, वादन और नृत्य तीनों क्षेत्रों में महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नारी स्वयं एक शक्ति स्वरूपा हैं। शक्ति स्वरूपा होते हुए भी इसकी सौम्यता का उदाहरण है कि विभिन्न कालों में इसकी स्थिति परिस्थिति परिवर्तित होती रही है। जहां वैदिक काल में इसे सभी अधिकार और सम्मान प्राप्त थे। वहीं मध्यकाल में इसने पर्दे में रहना स्वीकार किया किंतु कुछ स्त्रियों ने इस काल में भी संगीत की साधना की। उसके बाद के कालों में इसकी स्थिति अत्यंत दयनीय होती गई। इनका संगीत के क्षेत्र में कहीं वर्णन प्राप्त नहीं होता है किंतु आधुनिक काल में नारी में एक नई चेतना, नई ऊर्जा का संचार हुआ है। संगीत साध्वी को

संगीतज्ञा का स्थान प्राप्त हुआ जिसका साक्षात् उदाहरण है एम. एस. सुब्बालक्ष्मी जी, परवीन सुलताना जी, प्रभा अत्रे जी, किशोरी अमोनकर जी, गंगूबाई हंगल जी इत्यादि जिन्होंने आज देश ही नहीं वरन विदेशों में भी अपने गायन से हमारे देश का परचम लहराया है।

मुख्य बिन्दु : शास्त्रीय संगीत, महिलायें , गायिका, संगीतज्ञ, नारी

प्रस्तावना :

भारतीय संगीत परम्परा की भाँति महिला सभ्यता भी अति प्राचीन है। वैदिक काल में ऐसा माना जाता रहा है कि लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने का भी अधिकार प्राप्त था। कन्या को विदुषी बनाना माता-पिता का कर्तव्य था। कुंवारी कन्याओं को शिक्षा प्राप्त करने तथा ज्ञान की विविध शाखाओं के अध्ययन के लिये समान अवसर प्रदान किये जाते थे। उन्हें घरेलू कार्यों के अतिरिक्त ललित कलाओं आदि में भी निपुण किया जाता था। वैदिक काल में धार्मिक सभाएं हुआ करती थी। धर्मशास्त्रों पर वाद-विवाद हुआ करते थे। ऐसे वाद-विवादों में उस समय प्रसिद्ध दार्शनिक भाग लिया करते थे। उस समय के आठ प्रसिद्ध दार्शनिकों में से एक महिला दार्शनिक थी ब्रह्मवादिनी गार्गी। अथर्ववेद में लिखा है कि एक महिला अपने वैवाहिक जीवन को सफल बना सकती है, यदि उसे उसके विद्या अध्ययनकाल में उचित प्रशिक्षण दिया गया हो। कन्याओं को विद्याध्ययन के लिये आठ से दस वर्ष मिला करते थे। जिनमें वे वेदों के मंत्रों को कंठस्थ किया करती थी। उन मंत्रों में ऐसे मंत्र भी हुआ करते थे जो नित्य की प्रार्थना के लिये उपयोग में लाए जाते थे। उन्हें उन मंत्रों को भी कंठस्थ करा दिया जाता था, जो उनके विवाह के पश्चात् पति के साथ किये जाने वाले संस्कारों में सक्रिय भाग लेते समय उनके उपयोग में काम आते थे। महिला विद्यार्थियों को दो भागों में विभक्त किया जाता था ब्रह्मवादिनी और सहयोद्धा। ब्रह्मवादिनी जीवन पर्यन्त धर्मशास्त्रों व दर्शनशास्त्र की विद्यार्थी हुआ करती थी। सहयोद्धा अपने विवाह के समय तक यानि पंद्रह से सोलह वर्षों की आयु तक। ब्रह्मवादिनी बहुत ही उच्च शिक्षित व विद्वान हुआ करती थी। ये कई विद्याओं में निपुण होती थी। धार्मिक वाद-विवादों में भाग लेती थी। इन्हे विदुषी, आचार्या, पंडिता आदि नामों से पुकारा जाता था। वैदिक काल में महिलाएं कृषि कार्य, तीर कमान बनाने, युद्ध सामग्री के निर्माण में सक्रिय भाग लेती थी। रंगाई, एम्ब्रायडरी, टोकरी निर्माण के साथ-साथ शिक्षण के महत्वपूर्ण कार्यों में भी संलग्न हुआ करती थी। महिलाएं चिकित्सा का कार्य भी किया करती थी। रूसा नामक एक महिला ने दाई की कला पर एक पुस्तक भी लिखी थी। महिलाओं को संगीत व नृत्य की शिक्षा भी दी जाती थी। जो महिलाएं गा सकती थी एवं नृत्य कर सकती थी, उन्हें अधिक सम्मान एवं प्रशंसा मिलती थी। वैदिक काल में यह धारणा थी कि पत्नी को इतना शिक्षित होना चाहिये कि वह वैदिक संस्कारों एवं धार्मिक महत्व के अनुष्ठानों में भाग ले सके। अशिक्षित पत्नी पति के लिए उपयुक्त नहीं होती थी। शिक्षित कुमारियों को विदुषी कहा जाता था। ऐसी विदुषियों का विवाह भी उन्हीं के समान योग्य पुरुषों से, जिन्हें "मनीषी" कहा जाता था, से होता था। कई विदुषी महिलाओं के श्लोक वेदों में पाए जाते थे। ऐसी महिलाएं वैदिक काल में भी अपाला, लोपामुद्रा, घोषा आदि संगीत की अच्छी ज्ञाता थीं। महाकाव्य काल में राज्य सभाओं में भी संगीतकला में निपुण महिलाओं को राजकलाकार के रूप में नियुक्त किया जाता था।

रामायण काल मे महिलायें

महर्षि वाल्मीकि वैदिक व लौकिक दोनों ही संगीत के सुपंडित थे। उन्होंने लव कुश के माध्यम से सम्पूर्ण सांगीतिक प्रतिमा का परिचय दिया है। रामायणकालीन संगीत का विवेचन न केवल तत्कालीन सांस्कृतिक उन्नति का बोधक है। अपितु संगीत संबंधी तत्वों के उद्घाटन के लिये भी परम उपादेय है।

रामायण में उल्लिखित सांगीतिक सामग्री से यह विदित होता है कि तत्कालीन सामाजिक एवं साहित्यिक जीवन संगीतमय हो चुका था। इस समय संगीत का सौन्दर्य पौराणिक काल से भी अधिक निखर कर आया।

संगीत प्रत्येक के जीवन का अभिन्न अंग था। चाहे वह राजा हो या प्रजा, नारी हो या नर, राक्षस एवं देवता सभी संगीत प्रेमी थे। रामचन्द्र के जन्म तथा विवाह पर देवदुन्दुभियां बजने लगी तथा गन्धर्व एवं अप्सराओं का क्रमशः गान तथा नृत्य होने लगा ऐसा उल्लेख रामायण में है। महिलाये संगीत में पूर्ण रूचि रखती थी। रामचन्द्र जी के विवाहोत्सव पर संगीत का आयोजन हुआ था तथा इन अवसरों पर महिलाओं ने मंगलमय गीत गाये तथा नारिया आनन्द विभोर होकर नृत्य करने लगी।

इस काल में स्वयंवर की प्रथा थी, इसके अन्तर्गत वर वधु का चुनाव किया जाता था। इस अवसर पर संगीत का आयोजन किया जाता था। सार्वजनिक रूप से भी समाज में संगीत के आयोजन हुआ करते थे। इन आयोजनों में सर्वसाधारण भी रूचि रखता था। नृत्य कला का भी इस युग में समाज में प्रचार- प्रसार था। नृत्य विशेषकर स्त्रियों के द्वारा ही किया जाता था स्त्रियों की नृत्य में रूचि थी। इस युग में लास्य नृत्य भी प्रचलन में था। इस नृत्य का प्रदर्शन गीत प्रायः स्त्रियों के द्वारा किया जाता था। इस प्रकार स्त्रियों का नृत्य पर विशेष अधिकार था। अयोध्यापुरी का वर्णन करते समय कहा गया है कि अयोध्या पुरी में बहुत सी नाटक मण्डलियाँ थी जिसमें केवल स्त्रियों ही नृत्य एवम् अभिनय करती थी।

महाभारत में राजा विराट की पुत्री उत्तरा और उसकी सहेलियों के संगीत सीखने का वर्णन है। बौद्ध-साहित्य तथा जैन ग्रन्थों में भी नारियों द्वारा मधुर गायन का उल्लेख मिलता है। गुप्तकाल भारतीय इतिहास में कला साहित्य और संगीत की दृष्टि से स्वर्ण युग कहलाता था। इस युग में स्त्री को शिक्षा के अधिकार से पूर्णतः वंचित किया गया। गुप्तकाल से मुगल साम्राज्य के पतन तक का इतिहास एक और भारतीय नारी के आत्म बलिदान की कहानी है तो दूसरी ओर घर की चार दीवारी की अंध कोठरी में कैद होने की मर्म भेदी दास्तान। बीसवीं शताब्दी का आरम्भ केवल भारत के स्वतंत्र युग का ही क्रान्तिकाल नहीं है अपितु संगीत कला की दृष्टि से भी अनोखी क्रान्ति का युग माना जा सकता है। बौद्ध काल में आम्रपाली को श्रेष्ठ वीणा वादक के रूप में जाना जाता है।

मुगलकाल के मोहम्मद शाह रंगीले के दरबार में गायिकाएं और नर्तकियां गायन, वादन, नृत्य और शास्त्र की विधिवत शिक्षा ग्रहण करती थीं, रामपुर की सदारंग परम्परा के प्रतिनधि आचार्य बृहस्पति के अनुसार मुगलकाल में अकबर के राज्य के समय में संगीत का उत्कर्ष चरम पर था, उनके दरबार में कई संगीतज्ञ थे, जिनमें तानसेन का नाम विशेष उल्लेखनीय है। तानसेन की पुत्री सरस्वती बड़ी कलाकार हुई, जिसका विवाह मिश्री सिंह (नौबत खां) के साथ हुआ। इसी काल में ग्वालियर घराना अपनी अष्टांग गायकी के लिये प्रसिद्ध रहा है। इस घराने की शिष्य परम्परा बहुत बड़ी है। अन्य सभी संगीत घरानों का उद्गम भी इसी घराने से माना जाता है। इस घराने के काशीनाथ बुवा की शिष्या सुशीला मराठे, बलदेव जी बुवा की शिष्या डॉ. सुमति मुटाटकर, गजानन बुवा जोशी की शिष्या मांजरेकर, पंडित ओंकारनाथ ठाकुर की शिष्या बिजनवाल, विनायक राव पटवर्धन की शिष्या कमल केलकर, कालिंदी केलकर एवं सुनंदा पटनायक, बलवंत राय भट्ट की शिष्या सुभद्रा चौधरी, पंडित गोविन्द राव राजुरकर की शिष्या मालिनी राजुरकर, पंडित कुमार गंधर्व की पत्नी वसुंधरा कोमकाली एवं शिष्या मीरा राव, पंडितशंकर राव की पुत्री एवं शिष्या वीणा सहस्रबुद्धे, लक्ष्मण पंडित की शिष्या चित्रा चक्रवर्ती तथा आशालता करलगीकर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन गायिकाओं ने हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायन में अच्छी ख्याति आर्जित की। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के इतिहास के बारे में चर्चा की जाये तो इस क्षेत्र में अनेक महान विदुषी गायिकाएं हुई हैं। जिन्होंने शास्त्रीय संगीत को विकसित किया। इतिहास का कोई कालखंड ऐसा नहीं है जब महिलाओं ने अपनी कलाप्रियता एवं सृजन कौशल का परिचय न दिया हो। स्त्री और कला एक दूसरे की पर्यावाची हैं। स्त्री सृष्टि की वह सुंदर रचना है जिसका संबंध ललित कलाओं से होना स्वाभाविक है। अर्थात् गायन-वादन और नृत्य के गुण उसमें स्वभावतः पाये जाते हैं। गायन के क्षेत्र में महिला कलाकारों ने क्रियात्मक

संगीत के साथ-साथ नित्य-नवीन रागों का निर्माण एवं गायन शैलियों में नये जोड़ का हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के इतिहास के बारे में चर्चा की जाये तो इस क्षेत्र में अनेक महान विदुषी गायिकाएं हुई हैं। जिन्होंने शास्त्रीय संगीत को विकसित किया। इतिहास का कोई कालखंड ऐसा नहीं है जब महिलाओं ने अपनी कलाप्रियता एवं सृजन कौशल का परिचय न दिया हो। स्त्री और कला एक दूसरे की पर्यावाची हैं। स्त्री सृष्टि की वह सुंदर रचना है जिसका संबंध ललित कलाओं से होना स्वाभाविक है। अर्थात् गायन-वादन और नृत्य के गुण उसमें स्वभावतः पाये जाते हैं। गायन के क्षेत्र में महिला कलाकारों ने क्रियात्मक संगीत के साथ-साथ नित्य नवीन रागों का निर्माण एवं गायन शैलियों में नये जोड़ का समावेश कर अपनी सृजनात्मक प्रतिभा को अनन्त विस्तार दिया है।

संगीत के आकाश में दो नक्षत्रों- पं० विष्णु नारायण भातखंडे एवं पं० विष्णु दिगम्बर पुलस्कर का उदय हुआ। जिन्होंने नारी वर्ग को संगीत साधना के सुअवसर प्रदान कराए। वर्तमान में कुछ महिलाओं ने अनेक संघर्षों के बाद संगीत जगत में ऐसे मानदंड स्थापित किए हैं जो अविस्मरणीय रहेंगे। ऐसी महान महिला कलाकारों में स्वर साम्राज्ञी भारत रत्न प्राप्त लता मंगेशकर को उत्कृष्ट पार्श्व गायिका एवं भारत रत्न प्राप्त हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में एम०एस०सुब्बलक्ष्मी एवं क्वीन ऑफ़ ठुमरी के रूप में प्रसिद्ध गिरिजा देवी, तथा गंगू बाई हंगल जैसी महिलाओं को भारतीय शास्त्रीय गायिका के रूप में सारा संसार जानता है। आज के परिप्रेक्ष्य में आकाशवाणी, दूरदर्शन के साथ-साथ छोटे व बड़े पर्दे पर पर भी महिला कलाकार आकर्षण का केन्द्र रहीं हैं। यह नारी शक्ति है, यह केवल अतीत का विषय नहीं, आज भी वह शक्ति है। केवल इस शक्ति को पहचानने की जरूरत है नये और पुराने विचारों की दुविधा से निकल उसकी अच्छाइयों को चुनने और उसमें तालमेल बैठाने की जरूरत है।

इन महान गायिकाओं की निरंतर कठोर साधना, रियाज, शिक्षा तथा जिस लगन के साथ इस कला को उन्होंने अपनाया है उसे देखकर हम उनके सामने नतमस्तक हो जाते हैं। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की अनमोल गायन परम्परा को आधुनिक काल में भी अनेक संगीत साधिकाओं ने अपनी योग्यता और सृजन क्षमता से भारतीय संगीत को अति उच्च स्थान पर पहुँचाया है। इनमें प्रमुख नाम हैं-सुश्री केसरबाई केरकर, किराना घराने की गान कोकिला हिराबाई बडोदेकर, जयपुर घराने की गायिका मोगुबाई कुर्डीकर, कौशिकी चक्रवर्ती, मल्लिका-ए- ग़ज़ल बेगम अख्तर, गंगूबाई हंगल, डॉ. प्रभा आत्रे, गान सरस्वती किशोरी अमोनकर, मालिनी राजुरकर, परवीन सुलताना और सुगम संगीत की अलौकिक आवाज़ की गायिका लता मंगेशकर आदि हिन्दुस्तानी संगीत के जगमगाते सितारे हैं। इन सब गायिकाओं ने अपने जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अपनी लगन तथा मेहनत से गायिकी में अपने आपको निपुण बनाने के लिए कठोर साधना की और शास्त्रीय गायन की समृद्ध परम्परा को आगे बढ़ाने में विशिष्ट भूमिका निभायी।

उपशास्त्रीय संगीत में महिलायें:

उपशास्त्रीय संगीत में शास्त्रीय संगीत तथा लोक संगीत का मिश्रण होता है। ऐसा संगीत को लोकप्रिय बनाने या विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए फ़िल्मों या नाटकों में किया जाता है। ठुमरी, ग़ज़ल, कजरी होली व चैती आदि अनेक विधाएँ हैं जो पहले लोक संगीत की भांति प्रकाश में आए और बाद में उनका शास्त्रीयकरण किया गया। इनके शास्त्रीय रूप का विद्वान पूरी तरह पालन करते हैं, लेकिन आज भी लोक-संगीतकार इनके शास्त्रीय रूप का गंभीरता से पालन किए बिना इन्हें सुंदरता से प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार के मिश्रण को उपशास्त्रीय संगीत कहते हैं।

उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत संगीत की वे विधायें आती हैं जिन्हें हम उपशास्त्रीय संगीत की शैली में रखते हैं इनमें गायन को मधुर और आकर्षक बनाने के लिए गायन के कड़े नियमों को अनदेखा किया जा सकता है। इसका प्रमुख उद्देश्य केवल चितरंजन ही होता है राग गायन में विशेष नियमों का पालन करते हुए राग का गायन किया जाता है एक राग में अन्य राग के प्रवेश से राग का स्वरूप बिगड़ने का खतरा हो जाता है परन्तु उपशास्त्रीय संगीत में एक साथ

कई राग भी प्रयोग कर लिए जाते हैं इन्हे हम शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत का मिला जुला रूप भी कह सकते हैं ये रचनाये कई रागो के मिश्रण से भी बनाई जाती हैं इसके अंतर्गत ठुमरी, टप्पा दादरा आदि गायन विधाओं को शामिल किया जाता है यँ तो संगीत जगत में अनेक गायिकाओं ने जन्म लिया, परन्तु उपशास्त्रीय गायन विधाओं को अपने देश व विश्व के मानचित्र पर लाने का कार्य कुछ उपशास्त्रीय गायिकाओं ने प्रमुख रूप से किया यथा- सिद्धेश्वरी देवी, बेगम अख्तर, सविता देवी, काशी बाई, रसूलनबाई, शोभा गुर्टू, आदि परन्तु उपशास्त्रीय गायिकाओं में पद्मविभूषण गिरिजा देवी जैसी महिलाओं ने उपशास्त्रीय संगीत मे ख्याति प्राप्त की है तथा ठुमरी, कजरी, चैती, होली, दादरा, जेसी अनेक सांगीतिक विधाओ को प्रचलित एवं प्रसिद्ध करने में अपना योगदान दिया है जिस के लिए भारत सरकार ओर राज्य सरकार द्वारा इन उपशास्त्रीय शैली की महिलाओं को पुरस्कार एवं विभिन्न प्रकार के सम्मान और उपाधियों से सम्मानित किया गया है।

पार्श्व गायन में महिलाएं :

पार्श्वगायन अर्थात् वह गायन जो पर्दे के पीछे से किसी अभिनेता या अभिनेत्री के गाने के बदले होता है। जो अभिनेता या अभिनेत्री गान विद्या में निपुण नहीं होते, उसके बदले में नेपथ्य से कोई दूसरा अच्छा गायक या गायिका गाती है, यही गाना 'पार्श्वगायन' कहलाता है। पार्श्वगायक प्रायः ऐसे गायक को कहते हैं, जो अभिनेता के बदले पर्दे के पीछे से किसी भी गीत को गाने की भूमिका का निर्वाह करता है। पार्श्वगायक द्वारा गाये गए गीत को अन्य किसी अभिनेता पर फ़िल्माया जाता है। भारतीय हिन्दी फिल्मों के अधिकतर गायक पार्श्वगायक ही होते हैं और पार्श्वगायन करते हैं। पार्श्व गायन में अनेक महिलाओं ने अपनी एक नई जगह बनाई है, जिसमें सबसे ऊपर भारत रत्न प्राप्त लता जी को माना जाता है अर्थात् लता जी ने भारतीय हिन्दी सिनेमा में हजारों गीत के लिए पार्श्व गायन किया है जो भारतीय संगीत के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। भारतीय सिनेमा जगत में अपने ऐसी महिलाएं हुई हैं जिनकी आवाज मधुर एवम् मनमोहक रही है जिन्होंने भारत की जनता के दिलो पर राज किया है, जिनकी आवाज मात्र से ही श्रोता अनुमान लगा लेते हैं की किस गीत में किस महिला गायक ने पार्श्व गायन किया है। इन मधुर आवाजों में लता जी, आशा जी, कविता कृष्णा मूर्ति, अनुराधा पौडवाल, अलका यागनिक, उषा उतफ़, श्रेया घोंसाल, मधू श्री भट्टाचार्या, तथा अनेक नए चेहरे भारतीय सिनेमा को आवाज प्रदान कर रहे हैं। जिनसे सम्पूर्ण भारत गुंजायमान होता रहता है। भविष्य में भी अनेक महिलाओं की मधुर एवं मनमोहक आवाजें भारतीय हिन्दी सिनेमा जगत को सुशोभित करती रहेगी।

निष्कर्ष :

अतः कहा जा सकता है कि संगीत जगत का कोई भी क्षेत्र नहीं बचा जिसमें महिलाओं ने अपना नाम नहीं कमाया हो फिर चाहे वह हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत या फिर सुगम संगीत या पार्श्व गायन या लोक संगीत हो सभी में अपनी भूमिका अदा की है तथा इन महिलाओं ने संगीत को एक नई दिशा प्रदान की है एवम् भारतीय संगीत को ऊंचाइयों तक लेकर गई है जो की भारतीय संस्कृति के लिए गर्व की बात है।

संदर्भ सूची

- रानी डॉ अनीता, महिलाओ का कलाओं के क्षेत्र में योगदान.
- डॉ. के. एल. खुराना एवं डॉ. एस. एस. चौहान, भारतीय इतिहास में महिलाएं.
- Barsha Chattaraj, Women in the field of Classical music in India.

Mobile No.: 8168767247, Email: nbagri527@gmail.com



उत्तराधुनिक हिंदी महिला लेखिकाओं के उपन्यास : एक अध्ययन

डा. श्रीकला.एस.आर,
प्रोफसर, हिन्दी विभाग,
यूनिवर्सिटी कालेज, तिरुवनन्तपुरम

उपन्यास मूलतः यथार्थवादी दृष्टि से गद्यात्मक विधा है। यह आधुनिक युग का गद्यात्मक महाकाव्य है जिसमें वस्तुवादी जीवन जगत की विशालता, विविधता, गंभीर भाव बोध, नये मानव मूल्य और नए भौतिक प्रश्न अपने आप प्रकट होते हैं। अर्थात् उपन्यासों में आधुनिक युग की समस्त जटिलताएं जितने जीवंत रूप में व्यक्ति हो सकती है, उतनी अन्य विधाओं में नहीं। वास्तव में उपन्यास ने आधुनिक यूगीन यथार्थवादी परिवेश में जन्म ग्रहण किया है।

उत्तराधुनिक युग संघर्ष का युग है। वैश्वीकरण और बाजारीकरण के इस युग में खरीदनेवाला और बेचनेवाला ये दो वर्ग समाज के यथार्थ हैं। समाज उपभोक्ता में बदल गया है। इसका प्रतिफलन साहित्य में होना स्वाभाविक है। सन् 1995 के आसपास की रचनाओं में उत्तराधुनिकता की विशेषताएं हम देख सकते हैं।

उत्तराधुनिक काल नारी जागृति का काल रहा है। तत्कालीन समय में कई रूढ़ियों में जकड़ी नारी को मुक्ति मिली। शिक्षा के आलोक में भारतीय नारी ने स्वयं आत्म विश्लेषण किया, अपने परंपराओं और रीति - रिवाज के तहत अपनी अस्मिता को खोजा। आज स्त्री जीवन में आमूल परिवर्तन दृष्टिगत है। नारी पुरुष की बराबरी में बाहर की दुनिया में प्रतिकूल परिस्थिति का सामना करती दिखाई देती है। नारी अपने ऊपर होते अत्याचार को चुपचाप सहन नहीं करती। वह उसका प्रतिरोध करती है।

स्त्री विमर्श पुरुषों के विरुद्ध अभियान नहीं है, न उनसे प्रतिस्पर्धा करने की चेष्टा है। स्त्री विमर्श स्त्री के स्त्री रूप में ही बनाए रखने की प्रक्रिया है। पुरुष और स्त्री, स्त्री और पुरुष समाज के इन दोनों घटकों में पुरुष का वर्चस्व जब अत्याचार की सीमा को पार करता है तो स्त्री के लिए समस्या नहीं, समाज भी हिला देता है। उत्तराधुनिक साहित्य के परिप्रेक्ष्य में हिंदी उपन्यासों में चित्रित प्रतिनिधि नारीपात्र को परिलक्षित करते हुए नारी के परिवर्तित जीवन मूल्यों को आंकने का प्रयास यहां किया है। यद्यपि समकालीन उपन्यास दलित विमर्श, व्यवस्था विरोध, उत्तर आधुनिकता भूमंडलीकरण आदि की चुनौतियों से लगातार टकरा रहे हैं लेकिन सर्वाधिक उपन्यासों का नारी केंद्रित होना यह संकेत करता है कि नारी विमर्श समकालीन उपन्यास का सबसे चर्चित अध्याय है। पुरुष की दासता से मुक्ति इसका एक अहम पक्ष है। भूमंडलीकरण जैसे प्रभावों में हमारे सांस्कृतिक विरासत खत्म होती जा रही है। हमारे जीवन मूल्यों में निरंतर गिरावट आ रहे हैं। इसका सीधा प्रस्ताव नारी जीवन में भी है। हमारी संस्कृति में नारी पूज्या थी। लेकिन अब सारा

वातावरण बदल गया है। शिक्षा के द्वारा यह विचार विकसित होने लगा कि स्त्री को भी दहलीज के बाहर आकर सांस लेने का पूरा अधिकार है। उत्तराधुनिक हिंदी साहित्य के हर क्षेत्र में चाहे नाटक हो कविता हो या उपन्यास, महिला लेखिकाओं की भरमार बड़ी मात्रा में हुई है। उनके लिखे हुए उपन्यासों का सामान्य परिचय यहां हुआ है।

1. आवां :- श्रीमती चित्रा मुद्गल उत्तराधुनिक महिला उपन्यासकारों में सम्मानित कथाकार है। नई चेतना की संवाहिका चित्राजी के पास अनुभवों का विपुल भंडार है। उनके उपन्यास नारीवादी सरोकार के साक्ष्य हैं। इनमें

आवां नामक उपन्यास चित्रा मुद्गलजी के रचना कर्म को चार चांद लगा देता है। इस उपन्यास की कथावस्तु एक मजदूर की बेटी नमिता पांडे नामक युवती के मोहभंग, पलायन और वापसी है। इसमें मुंबई की ट्रेड यूनियन और मजदूर संगठनों के जीवन संघर्ष का भी चित्रण है।

उपन्यास की कथा नायिका नमिता पांडे 'कामगार अघाड़ी' श्रमिक संगठन के महासचिव और जुझारू मजदूर नेता देवी शंकर पांडे की बेटी है। एक बार फैक्ट्री में हड़ताल हुई। देवी शंकर के पत्नी उर्मिला पांडे क्रूर एवं कर्कश महिला है जो बेटी नमिता को हमेशा जली कटी सुनती रहती है। सारी समस्याओं से लड़ती नमिता अपनी पढ़ाई को अधूरा छोड़ देती है। छोटे-छोटे काम करते नमिता, छोटी बहन मुनिया एवं छोटे भाई चुन्नू की तरह देखभाल करती है।

इसी बीच ट्रेन यात्रा में अंजना वासवानी से नमिता की भेंट होती है। अंजना आभूषणों का व्यवसाय करती है। वह नमिता को नौकरी देती है जिसमें उसे लिपिक के कार्य के साथ आभूषणों की मोडलिंग भी करनी पड़ती है। बदले में नमिता को महावार तीन सौ रुपए वेतन मिलता है। नमिता का सौंदर्य देखकर अंजना उसे बेचने की इच्छा मन में रखती है। अंजना आभूषणों का डिजाइनिंग पढ़ने के लिए उसे हैदराबाद भेजती है। वहां नमिता की संजय कनोई से भेंट होती है। हैदराबाद जाने से पूर्व उसके पिता की मृत्यु होती है। संजय आभूषणों का विदेश में निर्यात करता है। वह विवाहित है, साथ में निस्संतान भी है। संजय समाज के सामने बच्चा पैदा करके अपने पुरुषत्व को सिद्ध कर मर्द कहलाना चाहता है। इसलिए वह नमिता से यौन संबंध स्थापित करता है। नमिता गर्भवती हो जाती है।

नमिता गर्भपात करने का निश्चय करती है। वह अपना फैसला संजय को फोन पर सुनाती है। तब वह कहता है, 'प्राण ले लूंगा मैं तुम्हारे। मुझे मेरा बच्चा चाहिए ...बच्चा जानती हो ? बाप बनने के लिए मैं ने तुम्हारे ऊपर कितना खर्च किया ?' परिणाम यह आता है कि आहत नमिता सीधे किशोरी बाई के पास अपने मृत बहन सुनंदा की बेटी की देखभाल के लिए एवं श्रमिकों की सेवा के लिए संजय कनोई के ऐशगाह को हमेशा के लिए छोड़ देती है।

प्रस्तुत उपन्यास में कई गौण कथाएं मुख्य कथा के साथ चलती हैं। सुनंदा की कहानी द्वारा लेखिका यहां हिंदू - मुस्लिम एकता स्थापित करना चाहती है। देवी शंकर पांडे और किशोरी बाई की अवैध संतान सुनंदा एक मुस्लिम युवक सुहेल से प्रेम करती है। वह सुहेल से शादी करना चाहती है। लेकिन वह धर्म परिवर्तन के लिए सहमत नहीं है। सुनंदा एक बच्चे को जन्म देती है। वह जिस कंपनी में काम करती है वहां से वह सुविधा उसे नहीं मिलती जो मां बनने पर एक महिला को मिलनी है। सांप्रदायिक दंगे में सुनंदा की मृत्यु हो जाती है।

चित्रा मुद्गल का प्रस्तुत उपन्यास 'आवां' नारी शोषण पर पर्दाफाश करता है। अपने जीवन की सारी विवशताओं में, विशेष कर गर्भवती होने पर समाज उससे सारा न्याय छीन लेता है।

2. चाक :- श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा नारीवादी चिंतन की अग्रणी उपन्यासकार हैं। साहित्य में बहुआयामी नारी जीवन के पहलुओं को रेखांकित करने के कारण महिला कथा लेखिकाओं में मैत्रेयी जी ने खास नाम कमा लिया है।

'चाक' उपन्यास की कथा भूमि के केंद्र में ब्रज प्रदेश का अतरपुर गांव और वहां स्थित जाट परिवार है। मैत्रेयीजी ने प्रस्तुत गांव का सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक परिदृश्य प्रस्तुत करके वर्तमान नारी जीवन की यातना

को वास्तविक रूप देने का प्रयास किया है। चाक एक समय चक्र है चाक घूमता है तो मिट्टी को नया आकार और रूप मिलता है। अतरपुर गांव में समय के परिवर्तन के साथ-साथ बदलाव आता है। किसान पत्नी सारंग का नया रूप ही इसका दस्तावेज है।

सारंग उपन्यास की नायिका है। उसके व्यक्तित्व का रूपांतरण बड़ा महत्वपूर्ण है। वह रंजीत से शादी करती है। सारंग की त्रासदी सभी सचेत स्त्रियों की है। वह कहती है, ' इस गांव के इतिहास में दर्ज दस्तानों बोलती है, रस्सी के फंदे पर झूलते रुकमणी, कुएं में कूदनेवाली रामदेई, करबन नदी में समाधिस्थ नारायणी ये बेबस औरतें सीधा मैया की तरह भूमि प्रवेशकर अपने सील सतीत्व की खातिर कुर्बान हो गई। ये ही नहीं और न जाने कितने.....'²

सारंग गुरुकुल में पढ़ी लिखी युवती है। संस्कृत भाषा की ज्ञानी होने के कारण वह नारी को आदर्श रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास करती है। कुलीन परिवार में जन्मा है। उसके ससुर और पति गांव के कुलीन मर्दों में अगवा है। सारंग की फुफेरी बहन रेशम पति की मृत्यु के पश्चात गर्भवती हो जाती है। बच्चा उसकी प्रेमी का है। अपमान के कारण उसका भाई डोरिया उसकी हत्या कर देता है। रेशम की हत्या नारी स्वतंत्रता, अधिकारों और उसकी पहचान की हत्या है।

3. कटगुलाब :- मृदुला गर्ग हिंदी की ख्याति प्राप्त कथाकार है। उन्होंने अपने अनुभवों से आत्मसात होकर सशक्त एवं कलात्मक रचनाएं लिखी है। इनके कथा सृजन के केंद्र में नारी है। नारी अस्मिता को उजागर करना वे अपना धर्म समझती है।

' कटगुलाब' नई तकनीक के साथ लिखा गया गर्ग जी का एक प्रौढ उपन्यास है। इसके प्रमुख पात्र है स्मिता, मरियम, नर्मदा, असीमा आदि। विपिन एकमात्र पुरुष कथापात्र है जो इन सभी औरतों से संबंध रखता है। स्मिता मध्यवर्गीय परिवार की लडकी है। बीस साल बाद वह स्वदेश लौटती है। बचपन में माता-पिता की मृत्यु के बाद वह बहन नमिता के घर आती है। विवश स्मिता का लाभ उसका जीजा उठता है। वह उसे बलात्कार करता है। बहन इस करुण दृश्य का मौन साक्षी बनने के सिवाय कुछ नहीं कर पाती। वे स्मिता को पढ़ने के लिए बड़ौदा भेजती है। स्मिता अमेरिका जाकर उच्च शिक्षा, नौकरी, पति सब कुछ प्राप्त करती है। लेकिन विवाह के बाद उसे मालूम हो जाती है कि उसने एक गलत आदमी से शादी की है। वह स्मिता का शारीरिक शोषण करता है और पति के विरुद्ध न्याय पाने के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाती है। लेकिन पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था में उसे न्याय नहीं मिलता।

' कटगुलाब ' एक विस्तृत कैनवस में लिखा गया उपन्यास है। व्यापक कथानक पर रचनाकार की पकड़ कहीं शिथिल नहीं होती। यह उपन्यास भाव एवं शिल्प की दृष्टि से एक सशक्त उपन्यास है।

4. समय सरगम :- ' समय सरगम ' श्रीमती कृष्णा सोबती का लिखा हुआ उपन्यास है। अरण्या इस उपन्यास की मुख्य नारी पात्र है। वह सत्तर पारकर चुकी वृद्ध नारी है। वह अविवाहित है। अरण्या सभी बुजुर्ग पात्रों की तरह पाल-पाल मृत्यु की कल्पना नहीं करती वह इस जिंदगी से हर पल को जीना चाहते हैं जो कुछ भी समय उसके पास शेष है उसे वह भाई पीड़ा से नहीं गुजरना चाहते बल्कि वह भाई पीड़ा दुख दर्द सभी को अपनी जिंदगी से दूर रखती है।

आरण्या लेखिका है। उसने अपने जीवन में अकेले होने का चुनाव खुद किया है। ईशान उपन्यास में एक बुजुर्ग वृद्ध पुरुष पात्र है। ईशान आरण्या का पड़ोसी है। वह भाग्यवादी नियतिवादी रिटायर्ड ऑफिसर है जिसकी पत्नी ने असमय ही साथ छोड़ दिया था। दो लड़कियां बाहर पढ़ती है। एक बेटा था जो दुर्घटना का शिकार हो गया था आरण्या का व्यक्तित्व अत्यंत सूक्ष्म और सघन है। आरण्या की अरण्य जिंदगी में अकेलापन के बूढ़े पेड़ हमेशा हरे भरे दिखते हैं। उसकी चाल - ढाल, पहनावा, बोलचाल, हाव- भाव बिल्कुल युवाओं जैसा है। वह प्रायः किसी बात पर किशोरियों

जैसे खिलखिलाकर हंसती है। उसे रंगों में काला रंग बेहद पसंद है। बुढ़ापे से बेखबर ही उसके व्यक्तित्व की जान है। वह कहती है, ' हम हैं तो समय है। हमारी ही चेतन में संचित है। हमारा काल आयाम। हम हैं क्योंकि धरती है, हवा है, धूप है, जल है और आकाश। इसलिए हम जीवित हैं भीतर और बाहर सबकहीं हम सब कुछ को अपने में सजोये। विलीन हो जाने का पल-पल आनंद में।' ³

आरण्या नारी स्वतंत्रता की प्रबल पक्षधर है और ईसान से कहती है, 'ईसान मुझे मेरा अपनापन निरंतरता का एहसास देता है' ⁴ निज का यही अपनापन आरण्या की पहचान है। वह अपने व्यक्तित्व को किसी के साथ विलीन होते नहीं देख सकती। इसलिए शायद वह सारे निर्णय स्वयं लेती है। उपन्यास के अंत में लेखिका ने आरण्या के माध्यम से जम्मू कश्मीर मुद्दे को भी छुआ। उपन्यास की आखिरी पंक्तियों में परमाणु हथियारों का विरोधकर लेखिका आरण्या के माध्यम से मानवतावादी सिद्धांत की सृष्टि करती हैं। उपन्यासकार कृष्णा सोबती आरण्या नामक पात्र के माध्यम से एक सशक्त नारी रूप हमारे आगे खींचती है।

5. अन्तर्वशी :- यह श्रीमती उषा प्रियंवदा का नवीनतम उपन्यास है। यह बनारस की चुनमुन यानी अमेरिकन वाना की कथा है। डॉक्टर शिवेश से चुनमुन की शादी होती है। अमेरिका के विण्डसर में रहते हैं। उनके दो बच्चे हैं,

आकाश और विकास। लेकिन वह दिल से दुःखी है। नौवें दर्जे तक पढी और ठीक-ठाक अंग्रेजी न बोल पानेवाली वह अपने को मेंढक मानती है और हमेशा हीन भावना से ग्रस्त रहती है। शिवेश के प्रेम रहित यौनाचार से भी वह परेशान है। ' कितने गड़बड़ रहती है इन्हें, जुट जाते हैं अपने सुख में। पूरा कपड़ा अलग करने का समय भी नहीं देते।' ⁴ वाना शिवेश के मित्र राहुल के प्रति आकृष्ट हैं। शादी के पूर्व जनेऊ उत्सव में वाना ने अपने भावि पति की जो झलक देखी वह राहुल की थी।

इसी बीच राहुल की गाड़ी दुर्घटना ग्रस्त हो जाती हैं। वह बुरी तरह घायल हो जाता है। अस्पताल से उसे शिवेश के घर लाया जाता है। वाना बड़ी तत्परता से उसकी सेवा करती है। दोनों का लगाव बढ़ जाता है। पूर्ण स्वस्थ होकर राहुल कैलिफोर्निया जाता है। वाना क्रिस्तीन की प्रेरणा से पढ - लिखकर आत्मनिर्भर होने का संकल्प करती है। जल्दी ही उसे एकदम अमेरिकी उच्चारण से सही अंग्रेजी बोलने का अभ्यास हो जाता है।

अंतर्वशी अमेरिका के प्रवासी भारतीयों के जीवन संघर्ष और अस्तित्व के संकट की ओर संकेत करता है। पढने या नौकरी के लिए अमेरिका पहुंचने वाले भारतीयों का जीवन कठिन और संघर्षपूर्ण होता है। उन्हें आजीविका केलिए कई छोटी-मोटी नौकरियां करनी पड़ती है। पत्नी के पति की आवहेलना का चित्र भी यहां दर्शाया गया है। वाना की मानसिकता की ओर पति शिवेश ध्यान नहीं देता। उपेक्षा की भावना उसे राहुल की ओर आकर्षित करने की प्रेरणा देती है। उत्तराधुनिक युग की भाग-दोड में मानव संबंध केवल दिखावा बन जाता है।

5. मिट्टी का सौगंध :- सन् 1995 में प्रकाशित प्रेम कबाडिया का उपन्यास ' मिट्टी का सौगंध ' दलित साहित्य का प्रतिनिधि उपन्यास है। इसमें दलितों के ऊपर सामंतशाही जुल्म का वास्तविक चित्रण किया गया है। उपन्यास की कथा ठाकुर मदन सिंह के इर्द -गिर्द घूमती है। जमींदार ठाकुर मदन सिंह अपने दौलत के घमंड में अंधा होकर गांव के दलित गरीब बेसहारा लोगों पर अन्याय करता है। आर्थिक और लैंगिक शोषण करना उसके लिए सामान्य बात है। शीला जाति से जो चमार है जिसपर ठाकुर मदन सिंह बलात्कार करता है। परंतु मदन सिंह का छोटा लड़का विजेंद्र दलितों का हमदर्द है। वह शीला के साथ हुए अन्याय को सम्मान में परिवर्तित करते हुए उसे अपने घर की बहू बनाना चाहता है। अपनी दादी मां से इस संदर्भ में वह कहता है , ' मुझे गरीब लोगों से प्यार है। मैं उनको भी इंसान समझता हूं। आखिर इंसान दूसरे इंसान से रिश्ता क्यों नहीं कर सकता?' ⁵

दलितों पर होनेवाले अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए जगजीवनराम नामक इंस्पेक्टर भी अपनी पुलिस की वर्दी त्यागने को तैयारी होता है। उपन्यास का केंद्रीय पात्र जमींदार मदन सिंह ललित अबलाओं का शारीरिक शोषण करता हुआ उनकी भूमि को हड़पने के लिए तैयार हो जाता है। दलित बस्ती के घरों को आग लगाने का षड्यंत्र रचता है ताकि दलित निराधार होकर कर्ज लेने आएंगे और अपनी जमीन गिरवी रखकर मदन सिंह की खेत पर आजन्म काम करेंगे। विजेंद्र सिंह और दलित पुलिस इंस्पेक्टर जगजीवन राम पर जानलेवा हमला होता है। शीला को भी मारने की कोशिश करती है। जगजीवन राम कहता है, ' लोग हर एक नौजवान को अपना सदस्य बनाइए और न्याय सेना नामक इस संस्था के लिए धन की व्यवस्था मैं स्वयं करूंगा। हरेक नौजवान के लिए एक रिवाल्वर और चाकू होगा। आपको कम से कम पच्चीस नौजवान तैयार करना है।' ⁶

उत्तराधुनिक सामाजिक संदर्भ मानव में विद्रोह की भावना जगाने में सहायक रहा है। व्यक्ति अपने अस्तित्व के प्रति बोधवन्त है। तिरस्कार की भावना उसके मन में सशक्त है। अपने पिता द्वारा पीड़ित नारी को घर का बहू बनाने का निर्णय विजेंद्र लेता है। यह उसके मनोबल का परिचायक है। शीला अन्याय के विरुद्ध लड़ाई करती है। प्रस्तुत उपन्यास में चमार जाति और सवर्ण में जातीय संघर्ष की लड़ाई चित्रित है। विजेंद्र सवर्ण होकर भी डॉक्टर बाबा साहेब अंबेडकर के विचारों से प्रभावित होता है। वह कहता है, 'मैंने बाबा साहेब अंबेडकर की सौगंध ली है। जब तक मेरी एक भी सांस बचेगी, दलित और गरीबों को सामाजिक न्याय दिलाने के लिए संघर्ष करता रहूंगा। इस कसम के अनुसार वह अपने जन्मदाता पिता को ही अपराध की सजा देने में प्रयत्नशील रहता है।

' मिट्टी की सौगंध ' में केवल जातीय संघर्ष ही नहीं, यहां ऊंचे वर्ग द्वारा निम्न वर्ग का आर्थिक, शारीरिक, बौद्धिक शोषण करने का चित्र भी प्रस्तुत किया गया है। उत्तराधुनिक विचारों से प्रेरित युवक वर्ग संघर्ष समाप्त करने की कसम खाते हैं। वे अपनी भारतमाता की मिट्टी की सौगंध खाकर यह तय करते हैं कि अब किसी अनाथ बेसहारा नारी की इज्जत नहीं लूटी जाएगी, अब किसी का छप्परनुमा घर नहीं जलेगा। शीला और ठाकुर विजेंद्र सिंह का अन्तरजातीय विवाह वर्ग - संघर्ष का जवाब है। उत्तराधुनिक युग में आम आदमी जिन संघर्षों का सामना करता है, इसका सुंदर चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है।

भारतीय साहित्य में महिलाओं का विशिष्ट बखान किया गया है। उपन्यास साहित्य नारियों के विभिन्न पहलुओं को समय-समय पर पेश करता है। प्रेमचंद कहते हैं, एक पुरुष को नारी का हृदय मिल जाए तो पुरुष महान हो जाता है। परंतु नारी को पुरुष का हृदय मिल जाए तो नारी कुलटा हो जाती है। वैश्वीकरण, निजीकरण एवं उदारीकरण के इस युग में नारी की स्थिति बदल गई है।

सहायक ग्रन्थ सूची

1. आवां, चित्रा मुदगल, पृ. सं. 50
2. चाक, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. सं. 28
3. समय सरगम, कृष्णा सोबती, पृ. सं. 70
4. वही.... पृ. सं. 84
5. मिट्टी का सौगन्ध, प्रेम कपाडिया, पृ. सं. 43
6. वही.. पृ. सं. 50

मो.नं. 7356325607



Agricultural Productivity and Its Regional Imbalances of Australia.

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

Abstract

Agricultural productivity in Australia has historically been a strong contributor to national wealth, with significant growth driven by technological adoption, mechanization, and structural adjustments through the late 20th century. However, since the early 2000s, productivity growth has notably slowed, with broadacre farm productivity growth declining from an average annual rate of 2.18% in the 1980s-1990s to approximately 0.6-0.7% in recent years. This slowdown is attributed to a complex interplay of factors including climate variability, rising input costs, fluctuating commodity prices, limited breakthrough innovations, and policy and market challenges. Regional imbalances are pronounced across Australia's diverse agricultural landscape. Cropping and horticulture activities are concentrated near coastal regions with more favorable climates and market access, while livestock grazing dominates the extensive inland and arid zones. Climate impacts vary regionally, with cropping farms facing greater climate risks than livestock farms, which can partially offset drought impacts through adaptive strategies such as increased livestock sales. These regional disparities influence productivity outcomes and resilience capacity. Recent data from ABARES and other sources highlight that despite high adoption rates of sustainable practices—such as stubble retention (85%), reduced tillage (68%), and optimized fertilizer use (65%)—productivity gains have plateaued, signaling that sustainable intensification alone is insufficient. Climate-adjusted productivity estimates reveal gradual positive growth over three decades but underscore the need for bundled solutions integrating precision agriculture, climate resilience, R&D investment, and improved market access to reinvigorate productivity. The dairy sector exemplifies regional productivity divergence, with national productivity growth stalling since 2010-11 and significant variation between regions. Similarly, broadacre productivity estimates show volatility influenced by seasonal conditions and climate trends, particularly hotter and drier seasons post-2000. Australia's agricultural exports remain robust, with approximately 70% of production exported, notably grains, oilseeds, and pulses growing at 9% annually in real terms.

Keywords: Australian agriculture, productivity growth, regional imbalances, broadacre farming, dairy productivity, climate variability, sustainable intensification, precision agriculture, R&D investment, export markets, climate resilience, agricultural policy.

Introduction

Agriculture is a cornerstone of Australia's economy and land use, contributing significantly to national wealth with a gross production value rising from \$61.5 billion in 2004–05 to \$82.4 billion in 2023–24 (ABARES 2025). Productivity growth has historically been strong, averaging around 2% annually through the late 20th century, driving much of the sector's expansion and competitiveness domestically and internationally. However, since 2000, productivity growth has slowed markedly to approximately 0.7% per year, influenced by factors such as climate variability, high input costs, limited technological breakthroughs, and structural challenges within the industry. Climate change has had a tangible impact, reducing average farm profits by 23% between 2001 and 2020, with effects varying widely across regions and farming types (ABARES 2025). Regional imbalances are pronounced: cropping and horticulture dominate temperate, coastal, and fertile zones like Southern Eastern Australia (Victoria, New South Wales), while livestock grazing is widespread across drier inland and northern tropical savanna regions. Soil types, climate zones, and water availability create diverse agricultural landscapes—from iron-rich but less fertile tropical soils in the north to volcanic and clay loam soils supporting intensive cropping in the south-east—shaping productivity potentials and constraints. Export orientation is high, with about 70% of agricultural output destined for international markets, linking productivity directly to global trade dynamics and market access challenges. Addressing productivity slowdowns and regional disparities requires integrated approaches combining technological innovation, climate resilience strategies, sustainable land management, and supportive policy frameworks to sustain Australia's agricultural competitiveness and environmental stewardship. This introduction sets the foundation for understanding how Australia's agricultural productivity is evolving amid environmental pressures and economic shifts, and why regional differences matter for policy and practice.

Statement of the Problem

Australian agriculture, once a global leader in productivity growth, is currently experiencing a significant slowdown in farm productivity gains. Since the 1980s and 1990s, when annual productivity growth averaged around 2.2%, recent decades have seen this rate decline to approximately 0.6–0.7% per year, with some sectors like dairy even showing stagnation or decline since 2010. This productivity slowdown is compounded by stark regional imbalances. Larger farms, particularly in certain states and regions, achieve disproportionately higher outputs and returns compared to smaller farms. For example, the largest 10% of broadacre farms produce over half of the output and enjoy significantly higher rates of return than the smallest 10%, highlighting a growing concentration of productivity and profitability. Climatic variability and deteriorating conditions—characterized by hotter, drier seasons and increased frequency of droughts—have reduced farm profits by an estimated 23% between 2001 and 2020. These climate impacts vary widely across regions, with cropping farms facing greater risks than livestock farms, further deepening regional disparities in productivity. Structural challenges also hinder productivity growth: limited expansion of arable land (only about 6% of Australia's vast agricultural land is suitable for cropping), aging soils with low fertility, and a plateau in technological breakthroughs constrain the sector's ability to improve output efficiently. Policy and market factors exacerbate these issues. Despite substantial R&D investments (nearly \$3 billion in 2023–24), the translation

of innovation into widespread on-farm adoption remains uneven, partly due to regulatory burdens, infrastructure gaps, and fragmented market access. Calls from industry leaders emphasize the need for policy reform to reduce administrative barriers, improve labor access, and enhance competition frameworks.

Objectives

- Enhance Productivity Growth Amid Slowdown.
- Address Regional Variability and Climate Impact.
- Promote Sustainable Intensification and Environmental Stewardship.
- Improve Market Access and Trade Competitiveness.
- Support Structural Change and Farm Business Adaptation.
- Build Climate-Adjusted Productivity Measurement and Policy Response.
- Ensure Long-Term Competitiveness Through Innovation and Policy.

Literature of review

- Australian agriculture has been a significant contributor to national wealth, with the sector's real production value exceeding \$40 billion annually since the late 1990s (Mullen, 2010).
- Productivity growth in agriculture has historically outpaced many other sectors of the Australian economy and compared favorably with other developed countries.
- Total Factor Productivity (TFP) growth in broadacre agriculture averaged around 1.36% per year from 1990 to 2011, though recent trends indicate a slowdown (Khan et al., 2015; ABARES, 2024).
- Productivity growth and efficiency vary significantly across Australian states and territories, reflecting differences in climate, farm size, technology adoption, and local economic conditions (Khan et al., 2015).
- Regions with higher migrant populations, often metropolitan areas, show higher labor productivity, but rural and remote agricultural regions face challenges in maintaining growth (OECD, 2023).
- Climatic variability, especially hotter and drier conditions post-2000, disproportionately affects productivity in certain regions, exacerbating regional disparities (ABARES, 2024).
- Larger farms tend to achieve higher productivity not merely through scale but by adopting advanced production technologies and innovative practices (Sheng, 2015).
- Smaller farms can improve productivity by increasing access to technology rather than expanding land size, highlighting the importance of technology diffusion policies (Sheng, 2015).
- Adoption rates of new cropping equipment and innovations vary by state, influencing regional productivity differences (Mallawaarachchi et al., 2009).
- Technological progress remains the main driver of productivity growth, but its pace has slowed in recent decades, contributing to the overall decline in productivity growth rates (Khan et al., 2015).

Methodology

Overview of Agricultural Productivity Measurement in Australia Productivity is defined as the ratio of agricultural outputs (crops, livestock, wool) to inputs (land, labour, capital, materials, services). Productivity is a key indicator of farm performance, profitability, and international competitiveness, especially as 70% of Australian agricultural products are exported.

Data Sources and Survey Framework Productivity estimates are based on extensive farm-level data from the Australian Agricultural and Grazing Industries Survey (AAGIS) and the Australian

Dairy Industry Survey (ADIS). These surveys cover approximately 1,600 broadacre farms and 300 dairy farms annually, selected to represent the national farm population at regional, state, and national levels. Additional data sources include agricultural levy payer registers, satellite crop imagery, and administrative data such as farmland transaction records from CoreLogic.

Total Factor Productivity (TFP) Estimation Methodology

ABARES uses a conventional growth accounting approach aligned with OECD guidelines to calculate TFP. TFP measures the efficiency with which all inputs are converted into outputs, capturing technological change and scale effects. The methodology accounts for multiple inputs simultaneously, rather than single-factor productivity measures. Farm-level TFP estimates are aggregated by industry (cropping, beef, sheep, dairy), state, and region to reveal spatial productivity patterns.

Climate-Adjusted Productivity Estimates: The Farm predict Model

Conventional productivity estimates are highly volatile due to climatic variability (droughts, heatwaves). To isolate underlying productivity trends, ABARES developed climate-adjusted TFP estimates using the Farm predict model, a machine learning-based microsimulation.

Regional and Industry Disaggregation Productivity estimates are disaggregated by: Broadacre sub-industries: cropping, beef, sheep, sheep-beef, mixed livestock-cropping. Geographic levels: national, state, and Australian Statistical Geography Standard (ASGS) Statistical Area Level 2 regions.

Conclusion

Australia's agricultural productivity has historically been a strong driver of economic growth, with productivity gains contributing significantly to the sector's output value over past decades. However, since the early 2000s, productivity growth has notably slowed—from around 2.18% annual growth in the 1980s-1990s to approximately 0.7% per year recently—reflecting complex challenges. Key factors behind this slowdown include climate variability, which reduced farm profits by 23% between 2001 and 2020, fluctuating input and output prices, limited breakthrough technological innovations, and structural constraints within the sector. These impacts are unevenly distributed across regions, with cropping farms facing higher climate risks than livestock farms, and wage growth and labor market conditions varying significantly between states such as Queensland and Western Australia. Despite high adoption rates of sustainable farming practices—such as stubble retention (85%), reduced tillage (68%), and optimized fertilizer use (65%)—sustainable intensification alone has not reversed the productivity slowdown. This indicates the need for bundled solutions that integrate precision agriculture, climate resilience strategies, digital advisory services, and enhanced R&D investment to bridge the gap between innovation and on-farm implementation. Regional imbalances in productivity and agribusiness wages highlight the importance of tailored policy responses. Regions with subdued wage growth risk talent shortages, while others with stronger labor demand benefit from competitive remuneration. Addressing these disparities is critical to maintaining a skilled workforce and ensuring equitable productivity improvements nationwide. Australia's heavy reliance on agricultural exports (70% of production) underscores the importance of market access and trade facilitation.

References

1. Australian broadacre farm productivity growth has slowed significantly from an annual average of 2.18% in the 1980s–90s to just 0.72% since 2000 (ABARES, 2025).

2. National dairy productivity has stalled since 2010-11, with a slight negative growth rate of -0.04% annually, contrasting with strong growth of 1.90% per year from 1978-79 to 2009-10 (ABARES, 2025).
3. Despite the slowdown, the gross value of agricultural production increased by 34% in real terms over the past 20 years, reaching \$82.4 billion in 2023-24 (DAFF Snapshot, 2025).
4. Climate variability has reduced farm profits by 23% between 2001-2020, with impacts varying widely across regions and sectors (ABARES, 2025).
5. Southern Eastern Australia (Victoria, New South Wales) benefits from temperate climate and fertile volcanic and clay loam soils, supporting diverse cropping including wheat, barley, and wine grapes, with relatively high productivity levels (Cropilots, 2025).
6. Northern Australia (Queensland, Northern Territory) features tropical savannas with lower natural soil fertility, focusing on sugarcane, mangoes, and citrus fruits; productivity here is challenged by soil constraints and climatic extremes (Cropilots, 2025).
7. South Australia's arid and semi-arid zones contrast with fertile plains near the Murray River, creating a patchwork of productivity levels influenced by water availability and soil types (Cropilots, 2025).



Applying Social Engineering Techniques to Address Social Issues: A Sociological Perspective

Karunarathne Rasika R A,

Research Scholar,

Department of Post Graduate Studies and Research in Sociology,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje.

Shyamali. W.M.

Lecturer,

Department of Sociology, University of Sri Jayewardenepura

Abstract

Social engineering, often associated with cybersecurity and manipulation, involves systematic methods for influencing human behaviour and decision-making. This paper explores how social engineering principles can be applied ethically to address pressing social issues from a sociological perspective. Through a systematic literature review, we examine how behavioural influence techniques can promote positive social change in areas like public health, environmental sustainability, and civic engagement. The study connects social engineering with sociological frameworks such as social learning theory, diffusion of innovations, and structural functionalism. Findings indicate that ethical, transparent social engineering can effectively shape social norms, encourage behavioural change, and strengthen community resilience. However, significant ethical concerns related to autonomy, consent, and power dynamics must be addressed. The paper concludes that while social engineering offers promising tools for social intervention, its application must be governed by ethical frameworks that uphold human dignity, informed participation, and equitable outcomes. This research contributes to sociological discourse by linking behavioural science with social policy, offering insights for researchers, policymakers, and practitioners.

Keywords: social engineering, behavioral change, social issues, sociological intervention, ethical frameworks, systematic review.

Introduction

Contemporary societies face complex challenges including climate change, public health crises, social inequality, and political polarisation. Traditional responses often rely on legislative, economic, or educational measures that assume rational decision-making. However, research in sociology, psychology, and behavioural economics shows that human behaviour is deeply influenced by social contexts, cognitive biases, and environmental cues (Thaler & Sunstein, 2008). This has led to interest in more nuanced approaches to social intervention that account for these underlying mechanisms.

Social engineering, originally a sociological concept for planned social change, is now often associated with cybersecurity tactics that manipulate individuals into compromising security (Mouton et al., 2016). However, its core principles—understanding human psychology, leveraging social influence, and designing choice architectures—have broader applications in addressing social issues. From a sociological perspective, individual behaviours are embedded within larger social structures, norms, and institutions (Giddens, 1984). Therefore, interventions must consider both individual psychology and social context.

Recent years have seen the rise of behavioural approaches in social policy, such as government “nudge units” that apply behavioural insights to public health, environment, and development programs (Behavioural Insights Team, 2014). While demonstrating practical potential, these initiatives raise ethical questions about manipulation, autonomy, and democratic governance (Bovens, 2009).

This paper examines social engineering as a sociological tool for addressing social issues. It systematically reviews theoretical foundations, practical applications, and ethical implications, bridging gaps between behavioural science and sociological theory. The research has relevance for public policy, community development, and social work, offering evidence-based frameworks for designing ethical and effective interventions.

Research Objectives

1. To examine connections between social engineering and sociological theories.
2. To review applications in public health, environmental behaviour, civic engagement, and social welfare.
3. To assess the effectiveness of social engineering methods and identify success factors.
4. To examine ethical issues and develop guidelines balancing effectiveness with autonomy, equity, and democratic values.

Theoretical Framework

In a sociological context, social engineering refers to the deliberate use of psychological, social, and environmental influences to shape individual and collective behaviour toward desired outcomes (Mouton et al., 2016). It represents a form of planned social change operating through social influence rather than coercion (Parsons, 1951). Social engineering applies the scientific method to understand and intervene in social systems, distinguishing it from political decision-making which may involve differential gains (Chandrashekhar, 2024).

Methodology

This study employs a systematic review methodology to synthesize existing literature on social engineering applications in addressing social issues. This approach is rigorous, transparent, and suitable for interdisciplinary fields (Petticrew & Roberts, 2006).

Analysis

Applications Across Social Domains

Public Health: Social engineering techniques have promoted health behaviours such as vaccination, smoking cessation, and healthy eating. Simple environmental modifications—like making healthy food options more visible—have improved outcomes without restricting choice (Thaler & Sunstein, 2008). Social norms marketing has reduced binge drinking by correcting misperceptions about peer behaviour (Perkins, 2003).

Environmental Sustainability: Interventions have targeted energy conservation, waste reduction, and sustainable transportation. Social comparison feedback, showing households, their energy use relative to neighbours, consistently reduces consumption (Allcott, 2011). Commitment devices, like public pledges, leverage consistency principles to sustain pro-environmental behaviours (Lokhorst et al., 2013).

Civic Engagement: Techniques have increased voter turnout and community engagement. Emphasising that “most people vote” as a social norm has boosted election participation

(Gerber & Rogers, 2009). Making volunteer opportunities accessible and providing social recognition enhances engagement (Janssen et al., 2015).

Social Welfare and Poverty Reduction: Simplifying application processes for benefits increases uptake among eligible populations (Bhargava & Manoli, 2015). Automatic enrollment in savings programs with opt-out options significantly improves retirement savings (Madrian & Shea, 2001). Text reminders improve attendance at training programs and reduce loan defaults (Karlan et al., 2016).

Effectiveness Patterns and Success Factors

Effectiveness analysis reveals several patterns: interventions aligning with existing motivations are more successful than those requiring attitude change; environmental design often outperforms information campaigns alone; social influence mechanisms (norms, peer comparison) are powerful levers; timing at decision points matters; and multi-level approaches addressing individual, social, and structural factors are essential (Behavioural Insights Team, 2014; Cialdini & Goldstein, 2004; Glass & McAtee, 2006).

Success factors include: understanding target behaviours and determinants, involving affected communities, addressing ethical concerns, using appropriate evaluation designs, and integrating interventions with broader policy frameworks (Dolan et al., 2012).

Theoretical Insights

Social engineering interventions operate through mechanisms articulated in sociological theory. Social learning processes are evident when using role models or peer influence (Bandura, 1977). Network effects appear when leveraging social structures to spread behaviours (Centola, 2018). Symbolic dimensions, such as reframing issues or linking actions to identities, are crucial (Blumer, 1969). Structural factors and power dynamics mediate effectiveness and distribution of benefits (Giddens, 1984; Foucault, 1982). Effective social engineering integrates psychological insights with sociological understanding of structures, culture, and power.

Ethical Challenges and Tensions

Ethical concerns include manipulation versus autonomy, equity, and democratic governance. Behavioural influence operating below conscious awareness may undermine self-determination (Hausman & Welch, 2010). Interventions may differentially affect social groups, potentially widening inequalities or individualising structural problems (Mols et al., 2015; Schubert, 2017). Democratic concerns arise regarding who has authority to engineer behaviour and the transparency of decision-making (Lepenies & Malecka, 2015). Tensions exist between effectiveness and ethics, requiring balanced frameworks (Rebonato, 2012).

Toward Ethical Social Engineering

Ethical principles for social engineering include:

- **Transparency and Disclosure:** Basic disclosure of intentions and approaches (Bovens, 2009).
- **Participatory Design:** Involving affected communities in problem identification and intervention design (Fung & Wright, 2003).
- **Equity Assessment:** Evaluating distributional effects and incorporating compensatory measures (Rawls, 1971).
- **Structural Complementarity:** Combining behavioural interventions with policy and institutional change (Schubert, 2017).
- **Reversibility and Exit Options:** Preserving individual capacity to opt out (Sunstein, 2014).
- **Accountability Mechanisms:** Establishing monitoring, evaluation, and oversight processes (Fischer, 2009).

Practical Implications

For policymakers and practitioners:

1. Conduct comprehensive assessments of behavioural determinants.
2. Employ multi-level strategies addressing psychological, social, and structural factors.
3. Adapt interventions to specific cultural and institutional contexts.
4. Build ethical review processes considering manipulation, equity, and governance.
5. Create feedback loops for learning and adaptation.
6. Develop internal capacity for behavioural and sociological analysis.

Discussion

Integration of Findings with Sociological Theory

Social engineering, through sociological lenses, is a practice of intentional social design engaging questions of agency, structure, culture, and power. Structural functionalism views it as adaptive change maintaining system functioning (Parsons, 1951). Symbolic interactionism highlights the role of meaning-making and identity (Blumer, 1969). Critical perspectives reveal power dynamics and governance through “soft power” (Foucault, 1982). Social network theory shows how interventions can leverage or reinforce social structures (Centola, 2018).

Conclusion

This review demonstrates that social engineering, grounded in sociological understanding and ethical principles, offers valuable tools for addressing social issues. Integrating behavioural insights with sociological theory provides a framework for effective, ethical interventions. Effectiveness depends on alignment with motivations, attention to social influences, strategic timing, multi-level approaches, and context adaptation.

Ethical challenges require careful navigation, balancing effectiveness with autonomy, equity, and democratic governance. Social engineering should be seen as a social practice embodying values and power relations, necessitating democratic deliberation and oversight.

The conceptual framework bridges behavioural science and sociology, emphasizing that behavioural change occurs within social systems mediated by norms, networks, institutions, and power. For sociology, engaging with behavioural science and policy enhances practical relevance and addresses theoretical concerns. Moving forward, approaches must combine scientific rigor with ethical integrity, technical effectiveness with democratic legitimacy, and individual change with structural transformation. With ethical frameworks and sociological insight, social engineering can contribute to addressing pressing social issues while respecting human dignity and promoting collective flourishing.

References

1. Allcott, H. (2011). Social norms and energy conservation. *Journal of Public Economics*, 95(9-10), 1082-1095.
2. Bandura, A. (1977). *Social learning theory*. Prentice Hall.
3. Behavioural Insights Team. (2014). *EAST: Four simple ways to apply behavioural insights*. Cabinet Office.
4. Bhargava, S., & Manoli, D. (2015). Psychological frictions and the incomplete take-up of social benefits. *American Economic Review*, 105(11), 3489-3529.
5. Blumer, H. (1969). *Symbolic interactionism: Perspective and method*. University of California Press.
6. Bovens, L. (2009). The ethics of nudge. In T. Grüne-Yanoff & S. O. Hansson (Eds.), *Preference change* (pp. 207-219). Springer.
7. Centola, D. (2018). *How behavior spreads: The science of complex contagions*. Princeton University Press.
8. Chandrashekhar, J. (2024). *Applied social work and social engineering*. Cyber Tech Publications.

9. Cialdini, R. B., & Goldstein, N. J. (2004). Social influence: Compliance and conformity. *Annual Review of Psychology*, 55, 591-621.
10. Dolan, P., et al. (2012). Influencing behaviour: The mindspace way. *Journal of Economic Psychology*, 33(1), 264-277.
11. Foucault, M. (1982). The subject and power. *Critical Inquiry*, 8(4), 777-795.
12. Fung, A., & Wright, E. O. (Eds.). (2003). *Deepening democracy: Institutional innovations in empowered participatory governance*. Verso.
13. Gerber, A. S., & Rogers, T. (2009). Descriptive social norms and motivation to vote. *The Journal of Politics*, 71(1), 178-191.
14. Giddens, A. (1984). *The constitution of society: Outline of the theory of structuration*. University of California Press.
15. Glass, T. A., & McAtee, M. J. (2006). Behavioral science at the crossroads in public health. *Social Science & Medicine*, 62(7), 1650-1671.
16. Hausman, D. M., & Welch, B. (2010). Debate: To nudge or not to nudge. *Journal of Political Philosophy*, 18(1), 123-136.
17. Janssen, M., et al. (2015). Utilizing social media for civic engagement. *Government Information Quarterly*, 32(3), 289-298.
18. Karlan, D., et al. (2016). Getting to the top of mind: How reminders increase saving. *Management Science*, 62(12), 3393-3411.
19. Lepenies, R., & Malecka, M. (2015). The institutional consequences of nudging. *Review of Philosophy and Psychology*, 6(3), 427-437.
20. Lokhorst, A. M., et al. (2013). Commitment and behavior change: A meta-analysis. *Environment and Behavior*, 45(1), 3-34.
21. Madrian, B. C., & Shea, D. F. (2001). The power of suggestion: Inertia in 401(k) participation and savings behavior. *The Quarterly Journal of Economics*, 116(4), 1149-1187.
22. Mols, F., et al. (2015). Why a nudge is not enough: A social identity critique of governance by stealth. *European Journal of Political Research*, 54(1), 81-98.
23. Mouton, F., Leenen, L., & Venter, H. S. (2016). Social Engineering Attack Examples, Templates, and Scenarios. *Computers & Security*, 59, 186-209.
24. Parsons, T. (1951). *The social system*. Free Press.
25. Perkins, H. W. (2003). *The social norms approach to preventing school and college age substance abuse*. Jossey-Bass.
26. Petticrew, M., & Roberts, H. (2006). *Systematic reviews in the social sciences: A practical guide*. Blackwell Publishing.
27. Rawls, J. (1971). *A theory of justice*. Harvard University Press.
28. Rebonato, R. (2012). *Taking liberties: A critical examination of libertarian paternalism*. Palgrave Macmillan.
29. Schubert, C. (2017). Green nudges: Do they work? Are they ethical? *Ecological Economics*, 132, 329-342.
30. Sunstein, C. R. (2014). *Why nudge? The politics of libertarian paternalism*. Yale University Press.
31. Thaler, R. H., & Sunstein, C. R. (2008). *Nudge: Improving decisions about health, wealth, and happiness*. Yale University Press.

rasike2010@gmail.com

ORCID 0000-0002-5681-2919

wathsalashyamali@sjp.ac.lk

Orcid.org/0009-0005-9965-0568



“डॉ. शिवमंगल सिंह ‘सुमन’ के काव्य में मानवतावादी चिंतन”

डॉ. नेमीचंद कुमावत

सहायक आचार्य (हिंदी),

मा. ला. वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान)

मानवतावादी चिंतन के मूल में मनुष्य जीवन और उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा निहित है। व्यापक सांस्कृतिक आधार और मानवीय-हित-चिंतन की नींव पर मानवतावादी परिकल्पना का भवन निर्मित होता है। आधुनिक युग में सृष्टि का निर्माण और विकास का केंद्र-बिंदु मनुष्य है, न कि कोई मानवोत्तर सत्ता। स्वच्छंदतावाद का उद्देश्य व्यक्ति-चेतना का विकास करना है। अतः वह हर तरह से व्यक्ति और समाज को विघटन से बचाने में अनुरक्त रहता है। उसका मूल उत्स मानव विषयक धारणा को नवीन दृष्टि प्रदान करना है। मानवतावादी काव्य-दृष्टि मनुष्य की अपार शक्ति और संभावना पर विश्वास करती है। श्री प्रेमशंकर ने भी लिखा है—“स्वच्छंदतावादी कवियों की मानवतावादी दृष्टि आदर्शवादी है और उसमें एक ऐसे सुंदर भविष्य की कल्पना की गई है, जहाँ सब कुछ प्रीतिकर होगा।”¹ जहाँ एक ओर रवींद्रनाथ विश्व-मानवता का स्वप्न देख रहे थे तो दूसरी ओर गाँधी जी रामराज्य की परिकल्पना साकार करने में लगे हुए थे। उसी समय कवि डॉ. शिवमंगल सिंह ‘सुमन’ का काव्य-मन नये संसार, नैसर्गिक प्रेम और निश्छल सौंदर्य की खोज में निमग्न था।

कवि ‘सुमन’ के काव्य पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता है कि मानव का सांस्कृतिक उत्थान करना, उनके काव्य की केंद्रीय धुरी है। उन्होंने एक ही ढर्रे का काव्य-सृजन नहीं किया, बल्कि मानवीय हित-चिंतन से जुड़े प्रेम, प्रकृति और सौंदर्य के साथ सामाजिक, आर्थिक, राष्ट्रीय परिदृश्य में जी रहे मानव के व्यापक फलक को अपने काव्य में समाविष्ट कर पूरी तन्मयता और सजगता के साथ मानवीय समग्रता का चित्र प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास किया है, जिसमें कवि की कामना यही है कि सारा संसार एक खूबसूरत नंदन-कानन में बदल जाय और मानव ही उसका रक्षक और स्वामी बने।

कवि ‘सुमन’ के मानवतावादी चिंतन पर पं. नेहरू और गाँधी जी के महापुरुषत्व का प्रभाव पड़ा है। ये दोनों उनकी विचार-दृष्टि के केंद्र में रहे हैं। तत्कालीन परिवेश में दोनों ही सर्वाधिक लोकप्रिय नेता थे। गाँधी जी उनके लिए पूज्य थे। अतः नेहरू जी का ही उन्होंने अनुकरण किया। इस संदर्भ में विजयबहादुर सिंह ने लिखा है—“नेहरू में सौंदर्य-बोध तो हृदय दर्जे का था ही, उसी कोटि का मानव-बोध भी...इन्हीं जवाहर लाल नेहरू ने ‘सुमन’ जी को लिखकर दिया कि ‘जीवन को कविता बनाया जाना चाहिए।’...‘सुमन’ जी जैसे कवि के सारे काव्य-स्वप्न इन्हीं नेहरू से होकर जाते हैं।”² उक्त कथन से भी स्पष्ट है कि कवि ‘सुमन’ के मानवीय-बोध और मानवतावादी कृतित्व पर नेहरू जी का सर्वाधिक प्रभाव है।

मानवतावादी अवधारणा आधुनिक कवियों की भाव-चेतना का अभिन्न अंग है, जो किसी संकीर्ण कटघरे में बद्ध नहीं होती है। आधुनिक युग में हिंदी कविता का प्रारंभ ही मानव-महत्ता के गान से हुआ है। भारतेंदु युग, द्विवेदी युग और छायावादी युग की कविता में मानवतावादी चेतना व्यापक है। कवि ‘सुमन’ का काव्य

स्वच्छंदतावादी भावों से आरंभ होता है और शीघ्र ही प्रगतिशील संवेदनाओं से जुड़ जाता है। इसलिए उनके काव्य में मानवतावादी चेतना अधिक ठोस, स्पष्ट और व्यावहारिक भूमि पर आधृत है। उनका सृजन मानवतावाद का साक्षात् प्रतिबिंब है, जिसमें विश्व मानवता की परिकल्पना साकार होती है। उनके सभी काव्य-संकलनों में मानवतावादी संवेदनाएँ लक्षित होती हैं।

(क) वैयक्तिक स्वातंत्र्य—

हिंदी स्वच्छंदतावादी काव्य-सृजन के समय (1918-1936 ई.) भारतीय राजनीति संघर्ष के दौर से गुजर रही थी। स्वच्छंदतावादी कवियों ने उतार-चढ़ावों के बीच प्रसार पाती हुई राष्ट्रीयता के भीतर से व्यक्ति-स्वातंत्र्य पर बल देकर व्यक्ति में यह चेतना जाग्रत की कि उसका अस्तित्व किसी से कम नहीं है। उन्होंने राजनीतिक स्वतंत्रता के माध्यम से व्यक्ति-स्वातंत्र्य पर बल दिया। कवि 'सुमन' का काव्य भी इसी कर्म में सक्रिय है। 'मुक्तिबोध' ने लिखा है—'ऐसा साहित्य, जो जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनादर्शों को प्रतिष्ठापित करता हो, उसे अपने मुक्ति-पथ पर अग्रसर करता हो।...अतः इसमें प्रत्येक प्रकार का साहित्य सम्मिलित है, बशर्ते वह सचमुच उसे मुक्ति-पथ पर अग्रसर करें।'³ उक्त कथन कवि 'सुमन' के रचना-कर्म पर भी चरितार्थ होता है। उनका काव्य रूढ़ियों, बंधनों, ऊँच-नीच, जड़ता, दासता आदि के विरुद्ध विद्रोह करता है तथा व्यक्ति को युगीन विषमताओं और कटुताओं से बाहर निकालकर, उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा करता है और जीवनगत चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करने की मानसिकता से निर्मित है, जो परिवेश से संपृक्त एवं जीवंत ही नहीं, बल्कि व्यक्ति को उसकी मर्यादा, निजत्व और अस्तित्व-रक्षा के प्रति जागरूक करने में सशक्त है।

मानवतावादी जीवन-दर्शन वैयक्तिक स्वातंत्र्य पर बल देता है। सामंती समाज में व्यक्ति का जीवन परंपराओं व रूढ़ियों में जकड़ा हुआ था। कवि 'सुमन' इन्हीं रूढ़ियों, जड़ता-दासता पर प्रहार करते हैं तथा निष्क्रियता और गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने हेतु व्यक्ति में क्रांतिकारी भावनाएँ भरकर उसकी व्यक्ति चेतना को प्रखर और सशक्त बनाते हैं, जिसमें कवि की सांस्कृतिक चेतना लक्षित कर सकते हैं; यथा—

“अकर्मण्य भुजदंड हमारे/क्या ढीले ही पड़े रहेंगे/और विवशता पर अपनी
हम मुँह बाए ही खड़े रहेंगे/सदियों से दासत्व और अपमान हमने झेला है।”⁴

× × × × ×

“आओं विरोधित कर्म करो/मानव हो कुछ तो शर्म करो/यों कब तक सहते जाओगे
इस परवशता के जीवन से/विद्रोह करो, विद्रोह करो।”⁵

कवि 'सुमन' ने वैयक्तिक स्वातंत्र्य के मार्ग में बाधक तत्वों पर आक्रोशी मुद्रा में प्रहार किया है। ऊँच-नीच के आडंबरों पर प्रहार द्रष्टव्य है;—

“भस्मात् कर दूँगा क्षण में/ऊँच-नीच के सब आडंबर/काँप उठेगी निर्बल जगती
सिहर उठेगा सूना अंबर/पाद प्रहारों से मैं पथ के कुश-कंटक दलता जाता हूँ।”⁶

इसी तरह उन्होंने उत्सव के सहारे रूढ़ियों पर प्रहार कर नव-सृजन की कामना व्यक्त की; यथा—

“होली में सब कूड़ा करकट जलता है/नवयुग का शिशु लपटों बीच मचलता है...

इसलिए जर्जरित जलाकर राख करो/उसी में नये फसल की शाख धरो

भस्म राशि को खेल-खेल में घूर करो/नये जमाने के रोधों को चूर करो।”⁷

आधुनिक युग में व्यक्ति चेतना का स्वरूप निरंतर बढ़ती गतिशीलता, परंपरागत रूढ़ियों और जड़ताओं के बीच संघर्ष की स्थिति का रहा है। कवि 'सुमन' का मूल स्वर इसी संघर्ष से जुड़ा है, जिसमें वे कहीं द्वंद्व, कहीं मूल्य-संघर्ष, कहीं पीढ़ियों के संघर्ष और कहीं व्यवस्था में स्वतंत्रता के माध्यम से व्यक्ति-चेतना की जड़ता के विरुद्ध संघर्ष करते दिखाई देते हैं। वे रूढ़िवादी व्यक्ति को एक जिंदा लाश तक की संज्ञा दे देते हैं; यथा—

“जो न बदले/बदलते परिवेश में भी/रहे चिपका

आत्मरति की अंतड़ियों से/वह अपाहिज/महज जिंदा लाश।”⁸

कवि ने ज्योतिष भ्रम से आबद्ध अंधविश्वासी व्यक्ति के भाग्यवाद पर भी करारा व्यंग्य किया है; यथा—

“तुम तो निंदियाने लगे/अपना दाव देखकर/मसान-सा जगाने लगे...शेष क्या रह गया है बस

एक काम सुबह-शाम/कुंडली दिखाने/या गंडा गले में बाँध/ताबीज गुहाने का।⁹
 कवि 'सुमन' व्यक्ति को निराशा के अंधकार से बाहर निकालकर व्यापक भूमि पर प्रतिष्ठित करने के आकांक्षी हैं। सामाजिक मूल्यों के विघटन से उनके काव्य में यत्र-तत्र अवसाद और अकेलेपन की स्थिति है, किंतु उनकी मूल प्रवृत्ति है-सदैव आशान्वित रहकर, निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर होना; यथा-

“साथी इस कर्तव्य-जगत् में/मानव बनकर जीना होगा/अपने सुख-दुख के प्यालों को
 जैसे भी हो पीना होगा/चलते-चलते, करो जो करना, व्यर्थ निराशा से क्यों डरते हो।”¹⁰

कवि ने व्यक्ति स्वातंत्र्य के मार्ग में व्यक्ति को संकटों से न घबराने और स्वच्छंद गति से निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है; यथा-

“पथ के रोड़ों से डरना क्या/बीती पर व्यर्थ झगड़ना क्या/बढ़कर फिर पिछे मुड़ना क्या...

निष्क्रियता का गंदला पानी बहकर निर्मल हो जाता है।”¹¹

उन्होंने वैयक्तिक स्वातंत्र्य में बाधक और सामाजिक वैषम्य के लिए जिम्मेदार साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त कर शोषण-मुक्त समाज की कामना बहुत-सी कविताओं में व्यक्त की है; यथा-

“ये छल छंद शोषकों के है/कुत्सित, ओछे, गंदे/तेरा खून चूसने को ही/ये दंगों के फंदे।”¹²
 व्यक्ति स्वातंत्र्य हेतु कवि अंततः राष्ट्रीय स्वाधीनता का आह्वान करते हैं; यथा-

“अपने अतीत की कालिख तो/लोहू की लाली से धो दो/युग-युग से बंदी मानव को
 करना है तुमको मुक्त आज/बलि की शुभ बेला आ पहुँची/बलिदानी ! आज परीक्षा दो।”¹³

व्यक्ति के स्वाभिमान और अस्तित्व-रक्षा कवि 'सुमन' का केंद्रीय सरोकार है। वे जिस व्यक्ति के स्वातंत्र्य की तलाश करते हैं, वह दारिद्र्य ग्रस्त, अभावग्रस्त, शोषित, किंकर्तव्यविमूढ़, दीन व्यक्ति है, जिनका वे उद्धार करना चाहते हैं, यही उनके काव्य की विशिष्टता है। उन्होंने ईमानदारी से जीने और स्वाभिमान की रक्षा का प्रश्न एक मजदूर को आधार बनाकर उठाया है; यथा-

“मैं मजदूर का बेटा/मुझे काम दो/बिना मजदूरी किए रहा नहीं जाता.....भूखा हूँ
 जीना चाहता हूँ/पर हराम की खाकर नहीं/तुमसे निकम्मों के/गीत गाकर नहीं।”¹⁴

कवि 'सुमन' का मानवतावादी चिंतन व्यक्ति स्वातंत्र्य हेतु वर्तमान की समस्याओं से जुड़ा है। उन्होंने व्यक्ति को स्वयं के प्रति जागरूक करने का सशक्त प्रयास किया है। उन्होंने हर प्रकार के बंधनों, रुढ़ियों, जड़ताओं पर तीव्र प्रहार कर व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल दिया है तथा व्यक्ति की न्यायोचित माँगों और अधिकारों का समर्थन किया है। उनकी दृष्टि वैयक्तिक सुख-दुख से ज्यादा देश और समाज के सुख-दुख पर केंद्रित है। वे व्यक्ति चेतना का सर्वांगीण विकास चाहते हैं। जीवन और जगत के प्रति उनकी दृष्टि एक जिज्ञासु अन्वेषक की है, जो उन्हें महत्तर ऊँचाइयों पर ले जाती है।

(ख) मानवीय बोध-

आधुनिक कवियों की पहली विशिष्टता है- मानव-बोध। आज मनुष्य ने अपनी असीम शक्तियों का परिचय देकर यह सिद्ध कर दिया है कि वह सृष्टि में सबसे बड़ा प्राणी और कर्म से महान् है। वह सृष्टि की शक्ति का वाहक है, उसमें एक साथ सृजन, पालन और संहार की शक्तियाँ निहित हैं। मानव ही प्रकृति का श्रेष्ठ उपहार है। आज का समग्र संघर्ष मनुष्य केंद्रित है। कविता का उद्देश्य ही मानव-कल्याण करना है। कवि 'सुमन' ने मनुष्य के स्वाभिमान को जाग्रत करने का भरसक प्रयास किया है तथा उसे एक सजग, दृढ़, सशक्त, सत्यनिष्ठ और विवेक सम्पन्न मनुष्य के रूप में स्थापित किया है। मानवीय बोध ही 'सुमन' जी की सृजना का मूलाधार और केंद्रीय सरोकार है। प्रमोद त्रिवेदी ने इस संदर्भ में लिखा है-“वे (कवि 'सुमन') अपनी कविताओं में व्यक्ति के वैराट्य में पूरे समाज को पा लेते हैं तो समाज की घटना बहुलता में व्यक्ति की विराट मूर्ति भी गढ़ते हैं।”¹⁵

मानव जीवन में गहरी तल्लीनता कवि 'सुमन' की मानवतावादी दृष्टि को सुदृढ़ आधार देती है। उनके काव्य में मानवीय बोध की सघन अनुभूतियाँ हैं। उनका मानव-बोध वायवी न होकर यथार्थ धरातल पर टिका है तथा वह मनुष्य के प्रति गहरे लगाव से उपजा है, जिसमें अधिक से अधिक मनुष्यों तक पहुँचने की क्षमता है। डॉ. नामवरसिंह ने लिखा है-“अनुभूति की शक्ति केवल तीव्रता में नहीं, बल्कि स्थायित्व में होती है और स्थायित्व का आधार व्यापक मानवीयता ही है।”¹⁶ कवि 'सुमन' का मानवीय बोध सामान्य मानव से भिन्न और

स्थायी है। कवि अपनी संवेदनशीलता के कारण वैयक्तिक अनुभूतियों को संकीर्ण घरे में रखकर नहीं देखता, बल्कि समाज के विस्तृत आँगन में उसके दर्शन करता है। इसी कारण कवि अपनी अनुभूतियों में मानव समाज की बहुविध छाया-छवियों को समेटकर, उसका निर्वैयक्तीकरण कर देते हैं, जिसे पाठक पढ़कर अपनी ही अनुभूतियों का आभास पाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने तुलसी की भावुकता के संदर्भ में लिखा है—“कवि की पूर्ण भावुकता इसमें है कि वह प्रत्येक मानव स्थिति में अपने को डालकर उसके भाव का अनुभव करे।”¹⁷ कवि ‘सुमन’ पर भी उक्त कथन पूर्णतः चरितार्थ होता है।

कवि ‘सुमन’ के मानवीय चिंतन में मनुष्य जीवन की रागात्मक वृत्तियाँ अधिक मुखरित हुई हैं, जिनमें हम मानवीय जीवन का लेखा-जोखा देख सकते हैं। उनका मानव-बोध मानव के दुःख-दर्द, द्वंद्व, कर्म-चेतना, मर्म, पीड़ा, शोषण, वेदना आदि विविध रूपों में प्रतिबिंबित है, जिसमें निम्नवर्गीय मजदूर, किसान, गरीब, स्त्री और मध्यम वर्ग के विविध रूप समाहित हैं। उनकी दृष्टि देशकाल की सीमाओं के आर-पार देखती है, इसलिए वे लुमुंबा, गाँधी जी के हत्यारों को खरी-खोटी सुनाते हैं। उनका काव्य मनुष्य को उसकी अस्मिता से परिचित कराकर संघर्ष हेतु उकसाता और ललकारता है, जिसमें पाठक कवि की अनुभूति से सीधा संवाद और साक्षात्कार करता है। कवि का पहला काव्य-संग्रह है—‘हिल्लोल’, जिसकी ‘असमंजस’, ‘प्रणय-संघर्ष’ और ‘जागरण’ कविताओं में मानवीय बोध के स्वर सुनाई पड़ते हैं, जो आगामी संग्रहों में उत्कर्ष को प्राप्त करते हैं। मानवीय उन्नति पर ही समाज, देश और राष्ट्र की उन्नति निर्भर करती है, इस हेतु कवि सामाजिक असमानता से पीड़ित होकर अपने वैयक्तिक स्वप्नों को समष्टि पर अर्पित कर देते हैं; यथा—

“हाय! यहाँ मानव-मानव में/समता का व्यवहार नहीं है/हाहाकारों की दुनिया में
स्वप्नों का संसार नहीं है/इसलिए अपने सपनों को मुट्ठी में मलता जाता हूँ।”¹⁸

कवि ‘सुमन’ के काव्य में जब प्रणय और युग-बोध में गहरा आत्मसंघर्ष उभरता है, तब उन्हें मानवीय बोध का कटु एहसास होता है और वे अपने संकल्प की वाणी मुखरित कर देते हैं; यथा—

“अपने सुख-दुख में विह्वल है, आज जगत् का कोना-कोना/नहीं पहुँच पाता महलों तक
कभी झोंपड़ी का दुख रोना/....विस्तृत पथ है मेरे आगे, उस पर ही मुझको चलना है
चिर-शोषित असहायों के संग अत्याचारों को दलना है।”¹⁹

‘सुमन’ जी की बहुत-सी कविताओं में मानवीय प्रगति और सुखद भविष्य के प्रति एक दृढ़ आशा-आस्था का स्वर मुखरित हुआ है, जो मानव को निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर करता है। कवि मानव को शोषण, अन्याय, अत्याचारों के खिलाफ सजग रूप में खड़ा करते हैं। उन्होंने मानव को सृष्टि का रचयिता मानकर उसे संघर्ष से न घबराने की प्रेरणा दी है; यथा—

“तुम हो प्रलय-सृजन के कर्ता/सुख-दुख तो होते रहते हैं
हँसते रोते बढ़ते जाओ/इसको ही जीवन कहते हैं।”²⁰

कवि ‘सुमन’ को मानव-बोध का तीखा एहसास है। उनका सपना एक शोषण-मुक्त मानवता का है, इसलिए वे शोषित, पीड़ित, दलित मानव को संघर्ष हेतु प्रेरित ही नहीं करते, बल्कि स्वयं उसी संघर्ष का अंग बनकर उन सबका स्वागत करते हैं; यथा—

“देखो वे नंगे भिखमँगे/आए हैं नूतन वेश लिए/अब तक की जर्जर जगती में
नव युग का नव संदेश लिए/आओ उठो देरी न करो/उनका स्वागत करना होगा
सुख-शांति-स्नेह-समभावों से/जग का अंचल भरना होगा।”²¹

वे मानवीय कल्याण हेतु अपना जीवन तक समर्पित करने हेतु प्रस्तुत हैं; यथा—

“असहाय निर्बल को कभी/यह विश्व ही सुख-स्वर्ग हो/मानव तुम्हारे लिए
जीवन सदा उत्सर्ग हो/मेरे लिए तो बस यही/सत्-चित्-ब्रह्मानंद हो।”²²

कवि युग-युग से पीड़ित मानव को सुख-समृद्धि से संपन्न देखने के आकांक्षी हैं, इसलिए उन्होंने काव्य-सृजकों का आह्वान किया कि ‘चाहे मुझे मत अपनाओ’, किंतु सुखद समाज का सपना साकार करने में पूर्ण सहयोग करो; यथा—

“मेरी वाणी में अभिशापित/मानवता की चीख भरी है/मेरी झोली में नव-युग के
संदेशों की भीख भरी है/नव युग का निर्माण हो रहा/आओ हाथ बटाओ।”²³

इतना ही नहीं कवि की मानवतावादी काव्य-दृष्टि मानव को हर तरह के बंधनों से मुक्त देखना चाहती है, इसलिए वे सच्चा बसंत राष्ट्रीय स्वाधीनता की कामना में देखते हैं; यथा—

“युग-युग से पीड़ित मानवता/सुख की साँसें भरती होगी/जब अपने होंगे वन-उपवन
जब अपनी यह धरती होगी/तब समझूँगा आया बसंत।”²⁴

मानव-जीवन की संपूर्णता को चाहने वाला, अपने काव्य को समाज की छवि बनाने वाला कवि समाज के कठोर यथार्थ और राजनीतिक पराधीनता के प्रति उदासीन नहीं रह सकता। वह अपने देश की बौद्धिक जड़ता और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को दूर करने का उत्तरदायित्व निभाता है। कवि ‘सुमन’ के काव्य का केंद्र-बिंदु सदियों से दासता और अभावग्रस्त, शोषित, पीड़ित, दलित, मजदूर और किसान है। यही उनका सर्वहारा है, जिसमें उन्होंने अपरिमित शक्ति के दर्शन किए हैं और इसी पर देश की भावी समृद्धि निर्भर है; यथा—

“मैंने केवल जाना मानव/उन्नत जीवन का श्रेष्ठ मान
उसके ही कंटों से निःसृत/भावी समृद्धि के अनल गान।”²⁵
कवि का गहरा मानव-बोध ही कवि-कर्म की कसौटी निर्धारित करता है; यथा—
“जो लिख रहा हूँ आज मैं/जो दिख रहा हूँ आज मैं
उसमें अगर झलके न तुम जो व्यर्थ सब आराधना।”²⁶

‘पथ भूल न जाना पथिक कहीं’ शीर्षक कविता गहरे मानवीय बोध से अभिभूत होकर लिखी गई है। इसमें कवि ने मानव को संघर्षों से न घबराने, सांसारिक लालच से विचलित न होकर कर्तव्य-पथ पर डटे रहने की प्रेरणा दी है: यथा—

“पथ में काँटे तो होंगे ही/दूर्वादल, सरिता, सर होंगे/सुंदर गिरि वन वापी होगी
सुंदर-सुंदर निर्झर होंगे/सुंदरता की मृग-तृष्णा में पथ भूल न जाना पथिक कहीं।”²⁷
कवि-‘सुमन’ ने उन कवियों पर भी प्रहार किया है, जो मानवीय बोध से अप्रभावित या आत्मकेंद्रित है: यथा—
“ऊपर पूँजीवादी समाज/नीचे शोषित जनता का स्वर
तुम आँखें ऊपर कर चलते/मिट्टी जाती है खिसक इधर।”²⁸

कवि ‘सुमन’ का मानवीय बोध ‘जीवन के गान’, ‘प्रलय-सृजन’ और ‘विश्वास बढ़ता ही गया’ संग्रह की कविताओं में करुणा और वेदना से आपूरित है। इन कविताओं में उन्होंने मानवीय बोध के मार्मिक चित्र उपस्थित किए हैं। शोषित-पीड़ित मानव की भूख से बेहाल स्थिति द्रष्टव्य है: यथा—

“हंत वह भूखा मानव बैठा/गोबर से दाने बीन रहा है
और झपट कुत्ते के मुँह से/जूटी रोटी छीन रहा है।”²⁹

कवि की दृष्टि में जब तक अभावग्रस्त मानव का उद्धार न हो, तब तक साहित्य और संस्कृति की उन्नति असंभव है, इसलिए कवि ने मानवता की रक्षार्थ साथी सृजकों को आंदोलित कर झकझोरा है; यथा—

“भूख की मरोर क्रूर/तिल तिल तराशती जब/मानव अस्तित्व की
बड़ी-बड़ी बातें तब/साहित्य और संस्कृति की/बगलें-सी झाँकती हैं।”³⁰

मानवीय अस्तित्व की रक्षा कवि ‘सुमन’ के काव्य का केंद्रीय सरोकार है। कवि सामाजिक वैषम्य को मिटाने का दृढ़ संकल्प व्यक्त करते हैं। यह संकल्प मानवीय बोध की चरम सीमा है; यथा—

“चाहता हूँ ध्वंस कर देना विषमता की यह कहानी
हो सुलभ सबको जगत् में वस्त्र-भोजन-अन्न-पानी।...

नव-भवन निर्माण हित में प्राचीनता का/गढ़ ढहाता जा रहा हूँ।”³¹

कवि ‘सुमन’ के मानवतावादी प्रेम में हम कामायनी के ‘आनंदवाद’ का दर्शन भी कर सकते हैं; यथा—

“चुभती रहती प्रतिपल प्रज्ञा पैनी/मुझको हर क्षण जीने की बेचैनी
इसलिए धरित्री का कण-कण प्यारा/इसलिए जिंदगी का क्षण-क्षण प्यारा
चाहे सुषुप्ति हो, जागृति हो सपना/कुछ भी न पराया यहाँ सभी अपना।”³²

‘सुमन’ जी मनुष्य पहले है और कवि बाद में। मनुष्य उनकी संवेदना के सर्वाधिक निकट है। उनकी चिंताएँ मनुष्य तक सीमित नहीं, बल्कि जड़-चेतन तक उनका विस्तार हैं। वे सच्चे अर्थों में मानवता के गायक

कवि हैं। उनके काव्य में मानवता के विजय-घोष का स्वर निरंतर सुनाई पड़ता है। भारत की आजादी के बाद विश्व-शांति की कामना द्रष्टव्य है; यथा—

“गाँधी सागर का जल/नेहरू की नहरों में ढालों/शांति-प्रेम संबोधि-वृक्ष
फिर भारत में पनपा दो/इसकी कलमें देश-विदेश को भेजी जाएगी।”³³

अंत में कहा जा सकता है कि कवि ‘सुमन’ का काव्य मानव-प्रेम और आत्मीयता का समग्र परिदृश्य प्रस्तुत करता है। उनके मानवीय बोध का दायरा विस्तृत है, जिसमें सभी वर्ग के मानव का बोध समाविष्ट है। वे अपने मानव-बोध को इतना विस्तृत आकाश देते हैं कि उन्हें किसी वाद की सीमा में कैद करने में समीक्षकों को बाधा पड़ी है। जिस तरह ‘निराला’ और ‘पंत’ आरंभ में स्वच्छंदतावादी कवि रहे और बाद में प्रगतिशीलता के प्रमुख हस्ताक्षर बनते हैं। उसी तरह कवि ‘सुमन’ के आरंभिक लेखन में हम स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियों के दर्शन करते हैं, किंतु उनका अधिकांश लेखन प्रगतिशीलता से जुड़ा हुआ है। वे आत्मकेंद्रित न होकर समाज-सम्पृक्त कवि हैं। अपने भीतर का संकल्प, एक अदम्य जिजीविषा, जीवन से निरंतर साक्षात्कार, दृढ़ आशा, सजग मानवीयता, सांस्कृतिक चेतना आदि ‘सुमन’ जी के स्वच्छंदतावादी काव्य के प्रदेय हैं। उनके काव्य में गहरी रागात्मकता है, जिसमें जीवन-यथार्थ का संस्पर्श है और जीवन के प्रति गहरी सदाशयता-मानवीयता के उच्चतम भाव छिपे हुए हैं।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची:-

1. हिंदी स्वच्छंदतावादी काव्य : प्रेमशंकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2002 ई., पृ. 09
2. आलेख-‘जोश और जवानी के कवि ‘सुमन’-डॉ. विजय बहादुर सिंह, साक्षात्कार (मासिक पत्रिका), मध्यप्रदेश साहित्य परिषद, भोपाल, जनवरी-मार्च, 2003, संयुक्तांक, 277-279, पृ.-170
3. आखिर रचना क्यों? : गजानन माधव ‘मुक्तिबोध’, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-1982 ई., पृ. 57
4. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय सं.-1997 ई., पृ.-94
5. वही, पृ.-130
6. वही, पृ.-82
7. विंध्य हिमालय, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि. सं. 1997 ई., पृ.-44
8. कटे अंगूठों की बंदनवारें, सुमन समग्र-2, पृ.-284
9. वाणी की व्यथा, सुमन समग्र-2, पृ.-244
10. हिल्लोल, सुमन समग्र-1, पृ.-73
11. विश्वास बढ़ता ही गया, सुमन समग्र-1, पृ.-226
12. वही, पृ.-256
13. प्रलय-सृजन, सुमन समग्र-1, पृ.-190-191
14. मिट्टी की बारात, सुमन समग्र-2, पृ.-161
15. लेख आलेख-अपने समय में (कुछ नोट्स)-प्रमोद त्रिवेदी, साक्षात्कार (मासिक पत्रिका), जनवरी-मार्च, 2003, संयुक्तांक, 277-279, पृ.-160
16. इतिहास और आलोचना : नामवरसिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-1978 ई., पृ. 12
17. गोस्वामी तुलसीदास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संवत् 2039 वि., पृ. 74
18. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, पृ.-82
19. हिल्लोल, सुमन समग्र-1, पृ.-55
20. वही, पृ.-73
21. वही, पृ.-83
22. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, पृ.-93
23. वही, पृ.-122
24. वही, पृ.-156-157
25. प्रलय-सृजन, सुमन समग्र-1, पृ.-190-191
26. पर आँखें नहीं भरें, सुमन समग्र-1, पृ.-340

27. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, पृ.-97
28. प्रलय-सृजन, सुमन समग्र-1, पृष्ठ-153
29. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, पृ.-128
30. वाणी की व्यथा, सुमन समग्र-2, पृ.-235
31. विश्वास बढ़ता ही गया, सुमन समग्र-1, पृ.-219
32. विंध्य हिमालय, सुमन समग्र-2, पृ.-59
33. वही, पृ.-65

पत्र व्यवहार का पता—

डॉ. नेमीचंद कुमावत,

H. No. 16/3307, 100 फिट रोड, शारदा चौराहा के पास,
हरि ओम नगर, भीलवाड़ा, जिला-भीलवाड़ा (राजस्थान)।

पिन कोड नं. 311001, मो. नं. 92522-78880

E-mail ID-nemichandkum1977@gmail.com



छत्तीसगढ़ी लोक गीतों का समाज के विकास में योगदान

डॉ. अश्वनी कुमार ध्रुव

प्रोफेसर

शास.महाविद्यालय नगरी, जिला-धमतरी (छ0ग0)

लोक गीत एवं नृत्य का इतिहास मानव सभ्यता के विकास के साथ प्राचीनकाल से जुड़ा हुआ है, जिसे किसी एक व्यक्ति द्वारा नहीं बल्कि समूहिक रूप से जनमानस द्वारा रचा गया है। भारतीय समाज अपनी आध्यात्मिक परम्पराओं, विशिष्ट संस्कृति और श्रेष्ठ जीवन मूल्यों के साथ सदैव से भारतीय-सभ्यता और समाज विकास का अभिन्न अंग रहा है।

लोकगीत और नृत्य के बिना समाजिक या धार्मिक कार्यक्रम अधूरा माना जाता है। लोक गीत व नृत्य मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी आसानी से पहुँचते हैं। इनके मुख्य रचनाकार अक्सर अज्ञात होते हैं, समय के साथ इनमें भी सुधार होते रहता है।

भारत के हर राज्य में अपनी लोक गीत व नृत्य की परंपरा रही है। जैसे उत्तर प्रदेश में कजरी, राजस्थान में मांड, महाराष्ट्र में लावणी, बंगाल में बाऊल इसी प्रकार छत्तीसगढ़ में कर्मा, ददरिया, सुआ, पंथी गायन एवं नृत्य की परंपरा सदियों पुरानी है।

इस शोध आलेख के माध्यम से छत्तीसगढ़ की लोक गीत के वैशिष्ट्य को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। कई अनछुए पहलुओं की ओर पाठकों का ध्यान केन्द्रित करते हुए उसकी अंतः वस्तुओं को समाज विकास में समाज शास्त्रीय सौन्दर्यात्मक परीक्षण को आगे बढ़ाने का प्रयास किया गया है।

लोक गीत वस्तुतः लोक की सृजनात्मक अभिव्यक्ति है जो लोक गीत एवं नृत्य की परंपरा के रूप में शताब्दियों की इतिहास यात्रा में कमशः विकसित हुई है। लोक गीत एवं नृत्य का इतिहास अत्यन्त समृद्ध और वैविध्यपूर्ण है। समाज विकास में लोक गीतों की अहम भूमिका रही है। लोकगीत, लोक नृत्य, लोक संगीत और लोकाचार में अकूत ज्ञान विद्यमान है। उत्तर से दक्षिण छत्तीसगढ़ के पठारी भू-भाग में जनजातीय ज्ञान के अतिरिक्त कृषि और शिल्पकर्म पर आधारित समृद्ध जीवन और श्रमजीवी संस्कृति मौजूद है, जिसके विशिष्टताओं का समुचित अध्ययन एवं अनुसंधान आवश्यक है।

19 वी. शताब्दी में वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण की नई शक्तियों जैसे आडियों रिकाडिंग तकनीक आने से पहले तक की लोकगीतों का इतिहास केवल संग्रह कर्ताओं के लेखों के माध्यम से ही जाना जाता था परंतु आज लोक गीतों पर शोध किए जा रहे और इन्हे पाठ्यक्रमों में शामिल किया गया। आधुनिक दौर में संगीत महोत्सव एवं शासन के प्रयासों से इन परंपराओं को संरक्षित किया जा रहा है। ये

गीत सस्कारों, त्यौहारों और खेती बारी के कामों के दौरान गाए जाते हैं। ये गीत सामाजिक-राजनीतिक धार्मिक, सांस्कृतिक जन-जीवन का प्रतिबिम्ब रहे हैं।

आज आधुनिकीकरण की नई शक्तियों के कारण हमारी लोक गीत/ नृत्य सांस्कृतिक संपदा का बहुत बड़ा हिस्सा अस्तित्व के संकट से जूझ रहा है। ग्रामीण समाज का ताना बाना बिखर रहा है, लोकाचार में परिवर्तन दिखाई देने लगा है, बोली वानी बदलने लगी है। सामुदायिकता की भावना टूट रही है। उनकी पारंपरिक अभिव्यक्तियां लुप्त प्रायः हो रही हैं। छत्तीसगढ़ी लोकगीत/नृत्य की सृजनात्मक अभिव्यक्ति संकट ग्रस्त है, इसे संरक्षित करने की आवश्यकता है।

छत्तीसगढ़ के मध्य युग की धार्मिक और सामाजिक गीत धारा का प्रारंभ कबीर प्रभावित आंचलिक संप्रदायों एवं पंथों के माध्यम से होता है। इनमें कबीर पंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा तथा सतनाम पंथ प्रसिद्ध है। पंथी गीत लोक गीत है तथा लोक चेतना के उन्नयन में इसकी उल्लेखीय भूमिका रही है। छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक अस्मिता के संरक्षण और संवर्धन में पंथी गीत, नृत्य एक विशिष्ट पहचान बनाई है। पंथी गीत नृत्य आज देश विदेश में प्रख्यात हो चुका है। पंथी गीतों में निहित सत्य तत्व का वर्तमान संदर्भ में बहुत अधिक महत्व है। सत्य ईश्वर है। यह कथन लौकिक जगत की अंधी आंखों से देखी गई, मोह जनित कल्पनाओं को दूर करने की प्रेरणा देता है। सतनाम का जो स्वरूप पंथी गीतों में प्रतिपादित किया गया है, वह मानवीय प्रकृति को सत्यवचन, सत्य कर्म एवं सत्य जीवन की ओर उन्मुख होने का संदेश देता है। हमारी संस्कृति में नैतिक बल को अधिक शक्तिशाली माना गया है। परंतु भारत में भौतिक संसाधनों से लैस अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए मजबूर करने गांधी जी ने सत्यग्रह आन्दोलन में इन्हीं तत्वों को स्थान दिया था।

इस आशय का संदेश पंथी गीतों में मिलता है। यह लोक चेतना की भावना को प्रबल बनाती है। पंथी गीतों में व्यक्त जाति संबंधी विचार आधुनिक प्रगतिशील विचारों के जन्म से पूर्व ही अस्तित्व में आ चुके थे। उनके वर्गाविहीन समाज की कल्पना साम्यवादी विचार का ही एक रूप है, जो लोक भावना की सहज समूल चेतना का प्रतिफल है। गीतों की समतावादी दृष्टि को मानव को एक समान बतलाना चाहती है। पंथी गीतों से उत्पन्न लोक चेतना-वर्ण और जाति व्यवस्था नकारती है।

“मनखे – मनखे एक सामान”

सतनाम पंथ की रचनाएँ मूलतः सांसारिक बंधनों की असारता और ईश्वरीय कृपा की प्राप्ति की अभिलाषा का चित्रण करती हैं।

“ चल हंसा अमर लोक जइबो”

मायावी संसार की स्वार्थपरता को स्वष्ट करते हुए ईश्वर के नाम को शाश्वत शांति के गोद के रूप में चित्रित किया गया है।

“ चलो चलो हंसा अमर लोक जाइबो, इहां हमर संगी कोनो नइहे”

करमा गीत – करमा गीत छत्तीसगढ़ का प्रमुख लोकगीत एवं नृत्य है। यह धसिया जाति का विशेष जातीय गीत माना जाता है परन्तु इसे सभी जातियों द्वारा गाया जाता है। ऐसी दंत कथा है कि कर्म नाम का राजा था, उस पर विपत्ति आ पड़ी। सामान्य उपचार से ठीक नहीं हुआ। इस लिए उसने मानता मानी और नृत्य गीत किया जिससे उसकी विपत्ति दूर हो गई। उसी समय से यह गीत एवं नृत्य प्रचलित हुआ।

आदिवासी कर्मा नृत्य/गीत करके प्रकृति की पूजा करते हैं। मंगल गान करते हैं। गायन शैली के आधार पर आदिवासी करमा, बैगानी करमा, तथा देवार करमा आदि।

चोला रोवत हे राम बिन देखे परान।

कइसे करौ हे दाई, करम के बरन।।

यह केवल एक गीत नहीं, बल्कि यहां की संस्कृति, परंपराओं और आस्थाओं का जीवंत प्रतीक है। यह गीत नृत्य के साथ गाया जाता है करमा गीत प्रदर्शन के बजाय सामूहिकता के रूप में गाया जाता है। इसमें गांव के सभी लोग, विशेष कर युवा एक साथ मिलकर नृत्य करते और गाते हैं। इन गीतों में प्रकृति के प्रति गहरा प्रेम झलकता है। इनमें पेड़ पौधों, नदियों, नहाड़ों और कृषि से जुड़े विषयों का उल्लेख होता है। फसल की अच्छी पैदावारी, वर्षा और धरती माता के प्रति धन्यवाद व्यक्त की जाती है।

करमा गीत छत्तीसगढ़ का अभिन्न अंग है एवं सांस्कृतिक पहचान है। जाति और धर्म के बंधन से मुक्त होते हैं। स्थानीय देवी देवताओं, लोक कथाओं और पौराणिक प्रसंगों का भी समावेश होता है। जो इन्हे अधिक अर्थपूर्ण बनाते हैं। जिससे सामाजिक बंधन और मजबूत होते हैं। यह पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाता है। पारंपरिक संस्कृति और कला को जीवीत रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। यह गीत छत्तीसगढ़ी लोक काव्य का एक महत्वपूर्ण अंग है जो न केवल मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि सामाजिक, सदभाव, विकास, प्रकृति प्रेम और सांस्कृतिक विरासत को जीवंत बनाये रखता है।

सुआ गीत – नृत्य में सुआ को संबोधित करके गाया जाता है। इसी से सुआ या सुवना कहलाते हैं। नारी जीवन की सहजता और उनके दैन्य जीवन भावों से परिपूर्ण सुआ गीत का प्रधान रस करुण रस है। नारियां सुआ को अपने सुख दुख का साथी मानकर उनके द्वारा अपने मनोभावों को व्यक्त करती हैं। सुआ गीत केवल विरह तक सीमित नहीं है, बल्कि नारी के पारिवारिक जीवन के अनुभवों को दर्शाते हैं। इसमें ससुराल के माहौल, सास ससुर जेठ-देवर आदि से जुड़े प्रसंग और एक नवविवाहित के मन की दुविधाएँ भी शामिल होती हैं। कई बार ये गीत मायके की याद और वहां से विदाई की पीड़ा को भी व्यक्त करते हैं। इसमें आशा और प्रतीक्षा की भावना भी होती है। नारियां यह उम्मीद करती हैं कि उसका संदेश तोते के माध्यम से उनके प्रिय तक पहुंचेगा और वह जल्द ही वापस लौटेंगे। यह उसकी मजबूत इच्छा शक्ति और प्रेम की निरंतरता को दर्शाता है।

तरी हरी नहा नारी नहा नारी नाना।

रे सुवना मोर कहि आते पिया ल संदेश ।।

इसमें किसी वाद्य यंत्र का प्रयोग नहीं होता, बल्कि ताली बजाकर ही ताल दी जाती है। यह समूहिकता गांव की महिलाओं के बीच एकता, सहयोग और सदभाव को बढ़ावा देती है।

सुआ गीत दीपावली के अवसर फसल कटाई के बाद गाए जाते हैं। इस दौरान महिलाएँ अच्छी फसल, घर में समृद्धि और खुशहाली के साथ घर और परिवार के कल्याण के लिए प्रार्थना करती हैं।

ददरिया गीत – लोकगीत लोक सांस्कृति का दर्पण होते हैं। ये लोकगीत आमतौर पर प्रकृति के मूल्य को व्यक्त करते हैं। उस क्षेत्र की सामाजिक, सांस्कृतिक प्रथाओं के महत्व को व्यक्त करते हैं। इसे लोक गीतों का राजा भी कहा जाता है। ये गीत अपनी प्रेम तथा लोक जीवन की अनुभूतियों को व्यक्त करने की क्षमता के साथ-साथ संक्षिप्तता, सीधे सादे ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता के कारण अत्यंत लोकप्रिय हैं। ददरिया मुलतः प्रश्नोत्तरी शैली प्रेम गीत होते हैं।

छत्तीसगढ़ एक कृषि प्रधान राज्य है और ददरिया में इस कृषि संस्कृति की स्पष्ट झलक मिलती है। खेतों में काम करते हुए, फसल की बुआई, कटाई करते हुए या पशु चराते हुए इन गीतों की रचना होती है। दैनिक जीवन की सामान्य क्रियाकलापों जैसे – हाट जाना, पानी भरना, मेला देखना, लकड़ी काटना आदि जीवन की सरलता और स्वाभाविकता झलकती है। जिससे पारिवारिक और सामाजिक संबंधों का भी उल्लेख मिलता है। जेठ, देवर, भाभी, सास, ससुर आदि यह ग्रामीण सामाजिक जीवन की खासियत को दर्शाता है।

सन्दर्भ ग्रंथ –

1. भूदेव व्यास सर लोक संगीत – अवलोकन, इतिहास विकास पृ. 37
2. डॉ. आडिल सत्याभामा छत्तीसगढ़ी भाषा और साहित्य विकल्प प्रकाशन रायपुर
3. डॉ. जोशी सच्चिदानंद जनजाति गौरव गाथा, वनगुंजन प्रकाशन नई दिल्ली
4. डॉ. बंजारे स्वामी राम छत्तीसगढ़ी लोकवार्ता संस्कृति और परम्परा
5. पत्र पत्रिकाओं से संकलन

मो. 9617808055, 9424237228



मानव संसाधन एवं तनाव प्रबंधन

किरण पवार,

सहायक प्राध्यापक,

श्री वैष्णव इंस्टीट्यूट ऑफ टीचर्स एजुकेशन

डॉ. दीपक जहागीरदार

सह-प्राध्यापक,

सेज यूनीवर्सिटी, इन्दौर

उप प्रकरण – मानव संसाधन एवं तनाव प्रबंधन

मानव संसाधन प्रबंधन—

मानव संसाधन प्रबंधन (HRM) किसी प्रतिष्ठान की सबसे मूल्यवान उन आस्तियों के प्रबंधन का कौशलगत और सुसंगत दृष्टिकोण है — जो वहां काम कर रहे हैं तथा व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से व्यापार के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान दे रहे हैं। “मानव संसाधन प्रबंधन” और “मानव संसाधन (HR)” शब्दों का स्थान मुख्यतः “कार्मिक प्रबंधन” शब्द ने ले लिया है जो प्रतिष्ठान के लोगों के प्रबंधन में शामिल प्रक्रियाओं की व्याख्या करता है। सामान्य अर्थ में HRM का मतलब लोगों को रोजगार देना, उनके संसाधनों का विकास करना उपयोग करना, उनकी सेवाओं को काम और प्रतिष्ठान की आवश्यकता के अनुरूप बनाये रखना और बदले में (भरण पोषण) मुआवजा देते रहना है।

विशेषताएं—

इसकी विशेषताओं में शामिल हैं—

- प्रतिष्ठानात्मक प्रबंधन
- कार्मिक प्रशासन (Personnel administration)
- मानव शक्ति प्रबंधन
- औद्योगिक प्रबंधन

सैद्धांतिक अनुशासन मुख्य रूप से इस धारणा पर आधारित है कि कर्मचारी वे व्यक्ति हैं जिनके अलग-अलग लक्ष्य और जरूरतें हैं और उनके बारे में ट्रकों और फाईलिंग कैबिनेट जैसे बुनियादी व्यापार संसाधनों की तरह नहीं सोचा जाना चाहिए। इस क्षेत्र में कर्मचारियों के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाता है, यह मानते हुए कि लगभग सभी कर्मचारी उद्यम में उत्पादकता के योगदान की इच्छा रखते हैं और उनके प्रयासों में मुख्य बाधा ज्ञान का अभाव, अपर्याप्त प्रशिक्षण और प्रक्रिया की विफलता है।

HRM तकनीकें जब ठीक से लागू की जाती हैं तो वे उद्यम के लक्ष्य और समय परिचालन कार्य प्रणालियों के प्रभावी होने की सूचक हैं। HRM में भी कई लोगों प्रतिष्ठानों में जोखिम कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कार्मिक प्रबंधन जैसे समानार्थक शब्द का अक्सर एक बहुत सीमित अर्थ में प्रयोग किया जाता है, जो कर्मचारियों की भर्ती, सदस्यों के वेतन तथा लाभों और उनके कार्य-जीवन की जरूरत की व्यवस्था

उपलब्ध कराने जैसी गतिविधियों के लिये आवश्यक है। अतएव अगर हम वास्तविक परिभाषा की बात करें **टोरिंगटन** और **हॉल** (1987) के अनुसार कार्मिक प्रबंधन की परिभाषा इस प्रकार है :

“ऐसी गतिविधियों की एक श्रृंखला जो: प्रथमतः काम करने वालों और उनके नियोक्ता प्रतिष्ठानों के उद्देश्यों और कार्य-सम्बन्ध की प्रकृति तथा द्वितीयतः यह सुनिश्चित करना कि समझौते का पूरा निर्वाह हुआ है। जबकि **मिलर** (1987) का सुझाव है कि **HRM** का संबंध –

..... उन फैसलों और कार्रवाई से है जो व्यापार में सभी स्तरों पर कर्मचारियों के प्रबंधन की चिन्ता करते हैं जो प्रतिस्पर्धी लाभ बनाने की दिशा में कौशलगत नीतियों के कार्यान्वयन रणनीति के कार्यान्वयन से संबंधित है।”

शैक्षणिक सिद्धांत–

मानव संसाधन प्रबंधन का लक्ष्य किसी प्रतिष्ठान के प्रति कर्मचारियों का आकर्षित करने, उन्हें बरकरार रखते और उनके प्रभावी ढंग से प्रबंधन के कौशलगत लक्ष्यों का पूरा करने की मदद करना है।

HRM के शैक्षणिक सिद्धांत का मूल आधार यह है कि मनुष्य मशीन नहीं है इसलिए हमें कार्यस्थल पर लोगों के आंतरिक अनुशासन की जांच की आवश्यकता है। मनोविज्ञान औद्योगिक अभियांत्रिकी, औद्योगिक, न्यायिक/अर्धन्यायिक अध्ययन और संस्थागत मनोविज्ञान, औद्योगिक संबंध, समाजशास्त्र और महत्वपूर्ण सिद्धांत: उत्तर-आधुनिकता, उत्तर-संरचनावाद जैसे क्षेत्र प्रमुख भूमिका निभाते हैं। कई कॉलेजों और विश्वविद्यालयों ने मानव संसाधन प्रबंधन में स्नातक और परा-स्नातक की डिग्रियों के पाठ्यक्रम रखे हैं।

HRM की भूमिका के व्यापक तौर और इस्तेमाल की योजना **ड्रेव एलरिच** द्वारा विकसित की गयी है, जिसमें **HRM** के कार्यों को 4 क्षेत्रों में परिभाषित किया है :

- कौशलगत व्यापार साझेदार
- परिवर्तन प्रबंधन
- कर्मचारी हिमायती
- प्रशासन

व्यावसायिक संस्थान

HRM में व्यावसायिक संस्थानों में सोसाईटी फॉर ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट ऑस्ट्रेलियन ह्यूमन रिसोर्स इंस्टीट्यूट (**HRM**) चार्टर्ड इंस्टीट्यूट ऑफ पर्सनल एंड डेवलपमेंट (**CIPD**) इंटरनेशनल पब्लिक मैनेजमेंट एसोसिएशन फॉर **HR** (**IPMA-HR**) मैनेजमेंट एसोसिएशन ऑफ नेपाल (**MAN**) और इंटरनेशनल पर्सनल मैनेजमेंट एसोसिएशन ऑफ कनाडा (**IPMA कनाडा**) ह्यूमन कैपिटल इंस्टीट्यूट (**HCL**) शामिल हैं।

यह ध्यान देने योग्य है कि कुछ लोग **HRM** (एक प्रमुख प्रबंधन गतिविधि) और **HRD** (मानव संसाधन विकास, एक पेशा) के बीच अंतर देखते हैं। ऐसे लोग **HRM** को **HRD** में यह कहकर शामिल करते हैं कि **HRD** में प्रतिष्ठान के अंदर कर्मियों के विकास, जैसे कैरियर विकास, प्रशिक्षण प्रतिष्ठान का विकास आदि गतिविधियों का व्यापक दायरा शामिल है।

HRM के क्रिया-कलापों और **HRD** पेशे के पिछले 20–30 वर्षों में जबरदस्त परिवर्तन आया है। एकदम हाल में ही प्रतिष्ठानों ने **HR** विभाग की प्रमुख भूमिका पर विचार किया जो प्रतिष्ठान के लिये उच्च तरीके से अधिकतम क्षमता के साथ कार्य का प्रदर्शन कर सकने में कर्मचारियों को काम पर रखने प्रशिक्षण और लोगों के प्रबंधन में सहायता प्रदान करती है।

1– क्या होता है तनाव

तनाव मानसिक स्थिति में उपजा विकास है। जो मानसिक स्थिति और परिस्थिति के बीच असंतुलन के कारण उत्पन्न होता है। तनाव मन से चलने वाला ऐसा द्वन्द्व है जो मन एवं भावनाओं में गहरी दरार पैदा करता है। तनाव अन्य अनेक मनोविकारों की जन्मभूमि भी है। जिनसे मन में अशांति अस्थिर भावना का अनुभव होता है इसके साथ साथ तनाव से शरीर भी अस्वस्थता का भी अनुभव करता है। इन सबसे कार्यक्षमता प्रभावित होती है और शारीरिक व मानसिक विकास में बाधा उत्पन्न होने लगती है।

2– तनाव प्रबंधन

परिवार की जिम्मेदारियां, काम का बोझ, वक्त की कमी, करियर, रिश्तों में बढ़ती दूरियां अकेलेपन और महत्वाकांक्षाओं के बढ़ते बोझ के कारण कई बार तनाव उत्पन्न होता है । या यूँ कहिए कि जब मस्तिष्क को पूरा आराम नहीं मिल पाता और उस पर हमेशा एक दबाव बना रहता है तो तनाव का जन्म होता है । तनाव के कारण शरीर में कई प्रकार की तनाव हार्मोनों जैसे एड्रालीन और कोलेस्ट्रॉल का स्तर बढ़ने लगता है लेकिन तनाव से निपटने और प्रबंधन का अलग अलग लोगों का अलग ढंग होता है ।

3— शारीरिक लक्षण—

क्या आप सांस लेने में कठिनाई का अनुभव करते हैं ? साथ ही सीने में दर्द और हार्ट में रक्त प्रवाह की कमी का अनुभव करते हैं ? ये शारीरिक लक्षण इस बात का संकेत है कि आप तनाव से ग्रस्त हैं । ऐसे लक्षणों से पीड़ित व्यक्ति को भी तनाव प्रबंधन के लिए अपना परीक्षण करवाना की आवश्यकता होती है ।

4— दिल की बीमारी —

हार्ट से ग्रस्त लोगों में तनाव ज्यादा देखने को मिलता है । एक शोध के अनुसार से यह बात सामने आई कि हृदयघात होने पर लगभग 70 फीसदी व्यक्ति एक वर्ष अवसाद से पीड़ित रहे । इसलिए हार्ट अटैक या कारोन्जरी हार्ट डिजीज होने पर भी आपको तनाव के लक्षणों से छुटकारा पाने के लिए तनाव परीक्षण करवाना चाहिए ।

5— एक्सरसाइज

व्यायाम के सत्र के दौरान सांस लेने में कठिनाई, बेहोशी, सीने में दर्द या अतालता के अन्य लक्षण (अनियमित दिल की धड़कन) का अनुभव होना भी तनाव का कारण हो सकता है । इस तरह से दिल या फेफड़ों की समस्या होने पर आपको तनाव परीक्षण करवाना चाहिए ।

6— निष्क्रिय जीवन—

कहा जाता है कि एक्सरसाइज से तनाव को कम किया जा सकता है । इसके विपरीत लंबे समय तक निष्क्रिय जीवन जीने के बाद अचानक से फिटनेस के लिये तीव्र एक्सरसाइज करने से तनाव बढ़ने लगता है । यह तनाव के कारणों में से एक है । इस समस्या से ग्रस्त लोगों को तनाव प्रबंधन करने की जरूरत होती है ।

7— तनाव हृदय रोग के जोखिम को कैसे बढ़ता है ?

तनाव चाहे शारीरिक हो या मानसिक, वास्तव में आपके हार्ट रेट में वृद्धि का कारण बनता है । साथ ही रक्तचाप में वृद्धि और दिल के लिए ऑक्सीजन की आपूर्ति के परे जाकर हार्ट अटैक के खतरे को बढ़ा देता है । एक लंबी अवधि के आधार पर क्रोनिक तनाव लगातार उच्च रक्तचाप कोलेस्ट्रॉल के स्तर से बढ़ने और रक्त के थक्के में गड़बड़ी पैदा करके दिल के लिए खतरनाक साबित हो सकता है ।

8— तनाव का मुकाबला—

समय का सही उपयोग कर तनाव को दूर किया जा सकता है । वो अंग्रेजी में कहते हैं कि ना **टाईम इज मनी** । तो समय प्रबंधन से आप काम को बेहतर तरीके से निपटा सकते हैं । साथ ही तनाव को कम करने में अच्छी नींद और आराम की तकनीक आपकी मदद कर सकती है । इसके आलावा, चिंता को न्यूनतम करने की कोषिष करें । इसके लिए अपनी गतिविधियों और महत्वपूर्ण कामों की योजना बनाएं यथार्थवादी लक्ष्य निर्धारित करें और सबसे जरूरी असफलताओं को स्वीकार करना और व्याकुल महसूस होने पर दूसरों को ना कहने की कला को सीखना ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्निहोत्री रवींद्र, 'आधुनिक भारतीय शिक्षा समस्याएं और समाधान', राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, 2007, जयपुर ।
2. अग्रवाल, जे. सी. एवं गुप्ता. एस. ' शिक्षा के आधार ' शिप्रा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008 ।
3. चौद किरण, चौहान आर. एस. , ' शिक्षा दार्शनिक परिपेक्ष्य ' हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली वि. वि. , 2006
4. ओड डॉ. लक्ष्मी लाल के, ' शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि ' राजस्थान ग्रन्थ अकादमी 2007
5. पाण्डे, डॉ. रामशकल, ' शिक्षा-दर्शन और शिक्षाशास्त्री ' , राजस्थान ग्रन्थ अकादमी 2007

Email- kiranpawar deepakjagirdar2@gmail.com Mob. 7999598897

Email-kiranpawar 27july@gmail.com Mobile 942008418



छत्तीसगढ़ के महिला कृषि श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन

डॉ. सुनीता प्रधान

प्रधान चौक भोजपुर चांपा, पो. चांपा,
जिला-जांजगीर चांपा, पिन 495671 छत्तीसगढ़

सारांश

भारत का प्रमुख कृषि उत्पादक प्रदेश छत्तीसगढ़ है जिसे धान का कटोरा के नाम से भी जाना जाता है। यहां पर धान के अलावा विभिन्न प्रकार के फसल का उत्पादन किया जाता है। छत्तीसगढ़ में लगभग 80 प्रतिशत परिवार कृषि कार्य में अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं जिसमें 60 प्रतिशत परिवार कृषि मजदूर है। कृषि श्रमिक के रूप में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों की तुलना में समकक्ष या इनसे अधिक है। महिला कृषि श्रमिक अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करते हुए कृषि कार्यों का कुशलतापूर्वक निर्वहन करते हैं। कृषि में महिलाओं की बहुआयामी भूमिका से इन्कार नहीं किया जा सकता है क्योंकि वे हर कृषि संचालन में योगदान करते हैं। जो फसलों की कटाई, बुवाई, मवेशी प्रबंधन, डेयरी, मधुमक्खी पालन, बकरी पालन, और पोल्ट्री आदि जैसे सम्बद्ध क्षेत्रों में सक्रिय है। उनके योगदान को पुरुष प्रधान समाज में नगण्य माना जाता है। उन्हें लैंगिक असमानता, कम वेतन, कार्य की अधिकता, सामाजिक और शारीरिक शोषण का सामना करना पड़ता है।

मुख्य शब्द :-

कृषि श्रम, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, लैंगिक भेदभाव, महिला कृषि श्रमिक, असमानता।

प्रस्तावना :-

यद्यपि महिलाओं की प्राथमिक जिम्मेदारी घरेलू काम की है लेकिन ग्रामीण परिवारों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण महिला कृषि श्रमिक खेत पर पुरुषों के बराबर काम करके अपनी दोहरी भूमिका निभाती हैं। भारत में छत्तीसगढ़ कृषि क्षेत्र के लिए प्रसिद्ध है यहां की 80 प्रतिशत परिवार कृषि कार्य कर अपना जीविकोपार्जन कर रहे हैं। कृषि प्रधान प्रदेश में महिलाएं कृषि गतिविधियों में अनेक ऐसे कार्य करने होते हैं जो उनके स्वास्थ्य की दृष्टि से जोखिम भरे होते हैं। रोपाई, फसल कटाई, दवाई छिड़कना, सुखाई, धान ओसाई जैसे कार्यों में महिलाओं को काफी पसीना बहाना पड़ता है महिलाओं को कठिन परिश्रम की न तो कोई कीमत मिलती है और न ही उन्हें भलीभांति मान्यता दी जाती है उनके कामों की कोई गिनती नहीं होती। वे कृषि, पशुपालन और घर गृहस्थी में कमर तोड़ मेहनत करती है ये काम वे प्रतिदिन करती है परन्तु उन्हें उन्ही कार्यों के लिए पुरुषों की तुलना में कम मजदूरी दी जाती है। भूमि का मालिकाना हक पुरुषों के नाम ही होता है। कृषि फसल उत्पादों की बिक्री आदि पुरुष ही करते हैं जिसके कारण घरेलू आमदनी पर उनका ही नियंत्रण रहता है। काम की तलाश में पुरुषों के शहरों की ओर पलायन की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण कृषि और खेतों की अधिकांश जिम्मेदारी महिलाओं पर आ गई है परन्तु उन्हें कर्ज आसानी से नहीं मिलता क्योंकि पट्टे उनके नाम नहीं होते। शिक्षा और तकनीक के ज्ञान से वंचित महिला कृषि पर हाल के वर्षों में अन्य अनेक सामाजिक आर्थिक कारकों का भी

विपरित प्रभाव पड़ा है । इच्छा उत्सुकता के बावजूद वे प्रायः नयी तकनीक नवाचार और बाजार के अवसरों का उचित लाभ नहीं उठा पाती। अनेक नीतिगत सुधारों और बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप के बाद भी महिलाओं के अधिकारों के सम्मान पर जिस प्राथमिकता से ध्यान दिया जाना चाहिए वह नहीं हो सका महिलाओं की कृषि श्रम में भागीदारी

- महिलाएं :-छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 86 प्रतिशत कार्यरत महिलाएं कृषि और सम्बद्ध गतिविधियों में शामिल हैं । राष्ट्रीय स्तर पर फसलों के उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी 75 प्रतिशत तक बताई गई है।
- पुरुष :-पुरुष भागीदारी दर भी अधिक है लेकिन कृषि क्षेत्र में महिलाओं का अनुपात बहुत प्रमुख है।

कृषि गतिविधि	महिलाओं की भागीदारी	पुरुषों की भागीदारी
बुवाई	68%	82 %
निराई-गुड़ाई	73 %	पुरुष भी सक्रिय रूप से भाग लेते हैं।
रोपाई	89-93 %	कम
जुताई	03-22 %	78-95 %
कटाई	70-89 %	पुरुष भी महत्वपूर्ण रूप से शामिल होते हैं।

महिला कृषि श्रमिकों की मुख्य समस्याएं :

1.आर्थिक शोषण और असमानता

- कम मजदूरी : पुरुषोंकी तुलना में उन्हें कम वेतन मिलता है और अक्सर टुकड़ों के आधार पर भुगतान होता है, जिससे आय कम होती है।
- ऋण का बोझ :खराब आय और बचत के कारण वे कर्ज में डूबी रहती है और सोना गिरवी रखती हैं, जिससे आर्थिक चक्र में फंस जाती है।

2. दोहरा कार्यभार :

- परिवार की देखभाल और घरेलू कामों के साथ- साथ कृषि कार्य भी करना पड़ता है,जिससे शारीरिक थकान और समय की कमी होती है ।

3.सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएं :

- लैंगिक भेदभाव : उनके योगदान को कम आंका जाता है और संसाधनों व निर्णय लेने की प्रक्रियाओं तक उनकी पहुंच सीमित होती है।
- तकनीकी और बाजार पहुंच का अभाव : मोबाईल ,इंटरनेट और नई तकनीक के उपयोग में पुरुष आगे हैं और बाजार तक पहुंच कम होने के कारण उन्हें बिचौलियों को उपज कम दान पर बेचनी पड़ती है।

4 खराब काम करने की स्थिति :

- धूल, धुएं और खराब रोषनी के संपर्क में आने से स्वास्थ्य समस्याएं (पीठ दर्द,जोड़ों का दर्द) होती हैं।

5 कृषि का स्त्रीकरण

- पुरुषों के गैर कृषि-कार्यों या शहरों की ओर पलायन करने के कारण महिलाएं कृषि क्षेत्र में अधिक शामिल हो रही हैं, लेकिन उन्हें पर्याप्त समर्थन नहीं मिलता।

6 जलवायु परिवर्तन का प्रभाव :

- बाढ़ और सूखे जैसी मौसमी घटनाएं फसलों को तबाह करती हैं, जिससे आय घट जाती है और लैंगिक असमानता बढ़ती है।

7 शिक्षा और प्रशिक्षण का अभाव :

- शिक्षा और कौशल प्रशिक्षण के अवसरों की कमी आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने की उनकी क्षमता में बाधा डालती है।

समाधान के लिए सुझाव

- समान कार्य के लिए समान वेतन, कानूनी सहायता, व्यावसायिक प्रशिक्षण और शिक्षा की व्यवस्था।
- कृषि उपकरणों और प्रौद्योगिकी तक पहुंच बढ़ाना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करना और बुनियादी सुविधाएं (शिक्षा, चिकित्सा) उपलब्ध कराना ताकि पलायन रुके।
- महिला केंद्रित ऋण और बीमा योजना को मजबूत करना।
- बाढ़ और सूखे जैसे मौसमी घटनाएं फसलों को तबाह करती हैं और लैंगिक असमानता बढ़ती है।

निष्कर्ष

छत्तीसगढ़ में महिला श्रमिकों की समस्याओं का निष्कर्ष यह है कि वे पुरुषों की तुलना में अधिक चुनौतियों का सामना करती हैं, जिनमें मुख्य रूप से वेतन, असमानता, काम की असुरक्षा और सामाजिक आर्थिक शोषण शामिल है। इन समस्याओं के बावजूद वे राज्य की अर्थव्यवस्था और कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। छत्तीसगढ़ के महिला श्रमिकों के समग्र सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए इन बहुआयामी समस्याओं का समाधान आवश्यक है। सरकारी संस्थाओं द्वारा लक्षित हस्तक्षेप जैसे कि बेहतर वित्तीय सहायता प्रशिक्षण कार्यक्रम और समान वेतन सुनिश्चित करना, उन्हें सशक्त बनाने और कृषि क्षेत्र में उनकी क्षमता का पूर्ण उपयोग करने में मदद कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. संजय वर्मा : भारतीय परिदृश्य में महिला कृषि श्रमिकों के क्रियाकलाप एवं समस्याएं।
2. चंदन कुमार : कृषि श्रम में महिलाओं के सामने आने वाली चुनौतियां – एक व्यापक विश्लेषण।
3. इंटरनेट द्वारा प्राप्त जानकारी।

मो. 7489850265, मेल—pradhansunita12008@gmail.com



भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषद : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डा० चन्द्र शेखर उपाध्याय

असिस्टेंट प्रोफेसर,

भोलानाथ महाविद्यालय (स्वायत्तशासित) धुबरी, असम।

पत्रसार

उपनिषद वैदिक काल की अन्तिम भाग की रचना मानी जाती है – वेदस्य अन्त वेदान्त । उपनिषद शब्द में उप शब्द का अर्थ सामीप्य अथवा व्यवधान रहित है। अर्थात् गुरु के समीप आकर गुरु से व्यवधान रहित होकर शिक्षा ग्रहण करने की बात यहाँ स्पष्ट होता है। नि का अर्थ विशिष्ट अथवा सम्पूर्ण बोधा। सद् का अर्थ ज्ञान या बोधा। अर्थात् सामीप्य द्वारा प्राप्त विशिष्ट अथवा सम्पूर्ण बोध अथवा व्यवधान रहित सम्पूर्ण ज्ञान। पुनः उपनिषदों प्राप्यते ब्रह्मात्मभावोऽनया इति उपनिषद्। जिसमें ब्रह्म साक्षात्कार हो सके वही उपनिषद है। इसीलिए उपनिषद को अध्यात्म विद्या भी कहते हैं। ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्, कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजोविषेच्छतं समाः, आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत्किञ्चनमिषत्, श्रीत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः, न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो, उन्निष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान्तिबोधत..., सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति, मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथिदेवो भव, असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्युर्मा अमृतं गमय, सत्यं ब्रह्म, धर्मं चर, स्वाध्यायान्मा प्रमदः, सत्यमेव जयते, पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी इत्यादि उपनिषदीय मुख्यबोध भारतीय ज्ञान-परम्परा का ही स्रोत हैं। इसीलिए इस शोध पत्र में भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषदों की एक समीक्षा करने की प्रयास किया गया है।

मूलशब्द – भारतीय ज्ञान परम्परा, उपनिषद, स्रोत, समीक्षा।

साहित्य समीक्षा(Literature Review) इस शोध पत्र को नयी दिशा देने के लिए तथा इसके उद्देश्य तक पहुँचने के लिए ऋग्वेदीय ऐतरेय उपनिषद, सामवेदीय छान्दोग्य उपनिषद, केनोपनिषद्, कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीय उपनिषद, कठ उपनिषद श्वेताश्वतर उपनिषद, शुक्लयजुर्वेदीय बृहदारण्यक उपनिषद, इशोपनिषद, अथर्ववेदीय प्रश्नोपनिषद मुण्डकोपनिषद, माण्डूक्योपनिषद आदि मुख्य (Principal) उपनिषद, श्री मद् भगवद्गीता, गौण उपनिषद तथा १०८ उपनिषद (सरल हिन्दी भावार्थ सहित), दि प्रिन्सिपल उपनिषद आदि ग्रन्थों की सहायता ली गई है।

शोधकार्य का उद्देश्य (Objectives): : प्रस्तावित शोधकार्य का उद्देश्य इस प्रकार है-

१. भारतीय ज्ञान परम्परा के उपर जोड़ देना।
२. उपनिषदों में प्रतिफलित भारतीय ज्ञान परम्परा के बारे में निचोड़ विश्लेषण करना और

३. भारतीय ज्ञानपरम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषदीय मूल्यबोध कैसे जीवनशैली परिवर्तन कर सकता है उस पर प्रकाश डालना।

शोधप्रविधि (Methodology) इस शोध कार्य में विश्लेषणात्मक प्रविधि (Analytical method) का प्रयोग किया गया है।

अवधारणा (Hypothesis)

हम उम्मीद करते हैं कि प्रस्तुत शोध कार्य भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषदीय मूल्यबोध अथवा अवधारणाएँ व्यक्ति विशेष में जागरूकता लाकर व्यक्ति विशेष को परिमार्जित और परिवर्धित करके भारतीय चिन्तन और मनन के हमारे परिकल्पना को बास्तवायित करेगा।

प्रारम्भ:

उपनिषद् को वेद का शीर्ष भाग कहा गया है क्योंकि यह वेदों का अन्तिम (सर्वश्रेष्ठ) भाग है। भारतीय दर्शन जगत में प्रसिद्ध प्रस्थानत्रयी के उपनिषद् आदिम ग्रन्थ है तथा अन्य दोनों गीता और ब्रह्मसूत्र के उपजीव्य (आश्रयीभूत) हैं। इसे आध्यात्मिक मानसरोवर कहा जा सकता है, जिससे विनिःसृत ज्ञान को सरिताएँ इस पूण्य भूमि में मानव मात्र के अभ्युदय (भौतिक उन्नति) एवं निःश्रेयस (आध्यात्मिक कल्याण) के लिए प्रवाहमान हैं। उप-नि+सद्+क्विप्-- इस प्रकार उपनिषद् शब्द की निष्पत्ति होती है। यहां उप और नि उपसर्ग हैं, सद् धातु गति के अर्थ में प्रयुक्त होती है। गति शब्द का उपयोग ज्ञान, गमन और प्राप्ति इन तीन संदर्भों में होता है। यहाँ प्राप्ति अर्थ अधिक उपयुक्त है। इसलिए उप सामिप्येन, नि-नितरां प्राप्नुवन्ति परं ब्रह्म यया विद्या सा उपनिषद्- अर्थात् जिस विद्या के द्वारा परब्रह्म का सामीप्य एवं तादात्म्य प्राप्त किया जाता है, वही उपनिषद् है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने "उपनिषद् ज्ञान की आवश्यकता को न केवल ब्रह्म प्राप्ति के लिए ही अपितु दैनिक जीवन के लिए भी उपयोगी बतलाया है। उनका कथन है कि उपनिषदे वह शक्ति प्रदान करती हैं, जिसके द्वारा मनुष्य जीवन संग्राम का धैर्य तथा साहस से मुकाबला करता है। जीवन का प्रत्येक क्षेत्र चाहे वह आध्यात्मिक हो या भौतिक दोनों में उपनिषदें अत्यन्त आवश्यक हैं।"^१

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ जी ने कहा है कि- "चक्षु सम्पन्न व्यक्ति देखेंगे कि भारत का ब्रह्मज्ञान समस्त पृथिवी का धर्म बनने लगा है। प्रातः कालीन सूर्य की अरुणिम किरणों से पूर्व दीशा आलोकित होने लगी है; परन्तु जब वह सूर्य मध्याह्न गगन में प्रकाशित होगा तब उस समय उसकी दीप्ति से समग्र भूमण्डल दोषप्रिय हो उठेगा।"^२

उपनिषदों को भारतीय ज्ञान परम्परा का स्रोत कहने में किस प्रकार के दिव्यमत नहीं होनी चाहिए। मुख्य उपनिषदों (Principal Upanisads) से लेकर सभी गौण उपनिषदों में केवल भारतीय ज्ञान परम्परा ही झलकती है। मनुष्य जीवन केवल अपने लिए नहीं है। केवल अपने लिए जीना मनुष्य का लक्ष्य नहीं होना चाहिए। समाज के अन्य लोगों को भी अपनी तरह जीने का अधिकार मिले इसके लिए हमें सचेतन रहना चाहिए।

ईश उपनिषद् में कहा गया है- "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्/तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥"^३ अर्थात् इस सृष्टि में जो कुछ भी (जड़ अथवा चेतन) है, वह सब ईश द्वारा आवृत आच्छादित है। इसलिए त्याग की भावना से भोग करना चाहिए और किस के धन पर लालच मत करो। इस तरह त्याग की भावना से जीवन जीने के लिए यह मन्त्र हमें प्रेरित करती है। इससे समाज के पिछड़े वर्ग अथवा जो संघर्ष की जीवन जी रहे हैं, उनको मदद होती है, जीवन में एक नया उत्साह आता है। फिर जाति-वर्ण-भाषा-धर्म के आधार पर जो भी अन्तर है उसे भुलाकर एक नया समाज निर्माण में सहायक होता है। सभी लोगों के अन्दर परमात्मा विराजमान है जो मेरे भी अन्दर है। इसलिए सभी को समान ज्ञान करना चाहिए, आपस में लड़ाई अथवा झगड़ा

नहीं करना चाहिए। ईशोपनिषद कहती है--"यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्यैव अनुपश्यति/सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥"४ अर्थात् व्यक्ति जब सभी भूतों को आत्मा में ही स्थित अनुभव करता है तथा सभी भूतों के अन्दर इस आत्मा को समाहित अनुभव करता है तब वह किस प्रकार भ्रमित नहीं होता। जब व्यक्ति जान लेता है कि यह आत्मा तत्त्व ही समस्त भूतों के रूप में प्रकट हुआ है तब उस एकत्व की अनुभूति की स्थिति में मोह अथवा शोक कहाँ टिक सकता है? अर्थात् ऐसी स्थिति में व्यक्ति मोह एवं शोक से परे हो जाता है। अर्थात् इस स्थिति में व्यक्ति को प्रकृत ज्ञान होता है, जिस ज्ञान से व्यक्ति मोह और शोक शून्य होकर स्थितप्रज्ञ स्थिति से मुक्ति की पथ पर गमन करना है।

समाज में सद्भाव और भाईचारा लाने के लिए भी उपनिषदीय इस ज्ञान परम्परा की अति आवश्यक है। जीवन में अनुशासन और नैतिक प्रमुल्यका ऊँचा दर्जा है। नैतिकता ही जीवन है। मृत्यु-पर्यन्त व्यक्ति को अनुशासन और नैतिकता ही व्यक्ति बनाकर रखता है, समाज में ऊँचा दर्जा देता है। उपनिषदीय ज्ञान अथवा ऋषयों की वाणी केवल व्यक्ति के जीवन में सुधार लाने के लिए अथवा सफलता की शिखर पर पहुँचने के लिए नहीं बल्कि समाज में सतता, निष्ठा, परम्परा, समरसता, एकात्मता, त्याग, कर्तव्यपरायणता, श्रेष्ठ आचरण पारंपरिक आचरण आदि प्रगति के साधन उच्च मानवीय प्रमुल्यवोध उत्कृष्ट समाज व राष्ट्र निर्माण के लिए भी है। इसीलिए गुरु गृह में शिक्षा समाप्त (स्नातक) कर घर वापसी के समय गुरु शिष्यों को उपदेश देते थे – 'सत्यं वद'५, 'धर्मं चर'६, 'स्वाध्यायान्मा प्रमद'७, 'प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सी'८, 'सत्यान् प्रमदितव्यम्'९, 'धर्मान् प्रमदितव्यम्'१०, 'कुशलान् प्रमदितव्यम्'११, 'भूत्यै न प्रमदितव्यम्, स्वाध्यापप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्'१२, 'देव पितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्'१४, 'मातृदेवो भव'१५, 'पितृदेवो भव'१६, 'आचार्यदेवो भव'१७, 'अतिथि देवो भव'१८, 'यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि'१९, 'यानि अस्माकं सुचिरतानि तानि त्वयोपास्यानि'२० इत्यादि। अर्थात् सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो, स्वाध्याय में प्रमाद न करो, प्रजाओं की परम्परा विच्छिन्न न होने दो, सत्य से न डिगो, धर्म से न डिगो शुभ कर्मों में प्रमाद न करो, प्रगति के साधन न छोड़ो, शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन में प्रमाद न करो, देव और पितृ कर्मों का त्याग न करो, माता-पिता को देव रूप मानो, आचार्य को देवता समझो, अतिथि को देव रूप मानो, जो दोष रहित कर्म वर्णित है, उन्हीं का आचरण करो, अन्य का नहीं, हमारे शास्त्रों में वर्णित जो श्रेष्ठ चरित्र है, उसी की उपासना करो, अन्य की नहीं इत्यादि। इस तरह यह सभी भारतीय श्रेष्ठ परम्परा जो विश्वकल्याण के लिए है, मनव कल्याण के लिए है, उपनिषदों के हर एक मन्त्र में झलक उठती है। जीवन में सत्य की मार्ग पर चलने के लिए मुण्डक उपनिषद ने जो उद्घोष किया है वह सराहनीय है – 'सत्यमेव जयते नानृतम्'२१ अर्थात् सत्य का ही जीत होता है झुठका नहीं। इस तरह व्यक्ति को सत्यनिष्ठ जीवन व्यतीत करने के लिए प्रोत्साहित किया गया है।

जीवन में वित्त से कभी कोई सन्तुष्ट नहीं हुआ है, इसीलिए जीवन चर्या के लिए जीतनी धन की आवश्यक हो उसी से सन्तुष्ट रहना चाहिए। इसीलिए उपनिषदीय ऋषि कहते हैं--'न हि वित्तेन तर्पणीयो मनुष्या'२२

हमारी जीवन की यात्रा सदैव प्रकाश की ओर होनी चाहिए। हमें किसी एक क्षण के लिए भी नकारात्मक सोच अथवा भ्रष्टमार्ग की तरफ अपने पैर नहीं रखनी चाहिए। इसीलिए ऋषियों कहते हैं-- "असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्युर्मा अमृतं गमय॥"२३ यह आदर्श अथवा कथन सदा स्मरण करना चाहिए और जीवन को मुल्यबोध से पूर्ण करके एक आदर्श के रूप में प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

समाज में मातृशक्ति को नमन, पूजा करने से ही समाज आगे बढ़ पाता है। मातृशक्ति सदैव नमन योग्य है। कारन पुरुष की तरह स्त्री भी उसी परमात्मा का अंश है यह हमें नहीं भूलना चाहिए। इसीलिए उपनिषद कहती है-- "त्वं स्त्री त्वं पुमांस्त्वं च कुमार एकस्त्वं वै कुमारी ह्यथ भुस्तमेव/तमेव धाता वरुणश्च राजा त्वं वत्सरोऽग्नयम् एव सर्वम्॥"२४

इस तरह उपनिषदों में भारतीय उच्च मूल्यबोध और परम्परा का ही प्रतिबिम्बित हुआ है जिसके सहारे हम एक सुन्दर विश्व का निर्माण कर सकते हैं जहाँ हर कोई सुख चैन से रह सके। समाज में सन्तुलन बनाई रखकर अच्छी तरह से आगे बढ़ने के लिए नारी पुरुष समान रूप से आगे बढ़ना जरूरी है। क्योंकि नारी पुरुष एक ही सिक्के का दो पहलु है, एक नहीं होने से, दुसरा चलता नहीं, नारी पुरुष दोनों ही परमेश्वर है। इसलिए नारी पुरुष के समन्वय से आगे बढ़ा हुआ समाज ही देश की प्रगति पर अपना अवदान देने में सक्षम हो पाएगा। नहीं तो वो समाज समाज ही नहीं रहेगा जाहा नारी-पुरुष एक दुसरे से उलझा रहेगा और अपने अधिकार के लिए सर्वदा लड़ता झगड़ता रहेगा। इसलिए समाज में नारी को पुरुष के समान दर्जा देना जरूरी है यही उपनिषदीय मूल्यबोध है।

उपसंहार:

इसतरह भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषद जो भी शिक्षा प्रदान कर रही है वो तो चिरन्तन और अक्षय रूप है। भारतीय ज्ञान परम्परा में जो कुछ भी हमें मिलता है वो कहीं नहीं मिलने वाला है। त्याग, परोपकार, भाईचारा, दान, श्रद्धा, विश्वास आदि से परिपूर्ण भारतीय ज्ञान परम्परा व्यक्ति को मर्यादा प्रदान करती है एवं समाज में सभी लोगों के साथ शान्तिपूर्ण सहावस्थान करने में मदद करती है। इसलिए भारतीय ज्ञान परम्परा मजबूत और शक्तिशाली है जो पाश्चात्य में कहीं भी नहीं मिलने वाला है। त्याग और परोपकार से समृद्ध भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में उपनिषदीय मूल्यबोध सदा सदा के लिए व्यक्ति निर्माण के रूप में प्रेरणा बनकर रहेगी इत्यलं विस्तरेण।

सन्दर्भसूची:

१. १०८ उपनिषद, पृष्ठा, ८
२. वही
३. ईशोपनिषद, १
४. वही, ६
५. तैत्तिरीयोपनिषद, शीक्षावल्ली, ११.१
६. वही
७. वही
८. वही
९. वही
१०. वही
११. वही
१२. वही
१३. वही
१४. वही
१५. वही, २
१६. वही
१७. वही
१८. वही
१९. वही
२०. वही
२१. मुण्डकोपनिषद, ६

२२.कठोपनिषद, १.१.२७

२३.बृहदारण्यकोपनिषद, १.३.२८

२४.एकाक्षरोपनिषद, ११

सन्दर्भग्रन्थसूची :

1. Brihadaranyak Upanishad by Swami Jagadiswarananda. Sri Ramakrishna Math Chennai.
Brihadaranyakoupanishad. (with Samkarabhasya) and Hindi trans.. Gitapress Gorakhpur, 6th edition. 1938.
2. Eight Upanisads, (with Samkarabhasya) (Vol-I & II), Trans. into Eng by Swami Gambhirananda. Advaita Ashrama, Kolkata, (Vol-1). 1957 & (Vol-II). 1958
3. Isadi Nau Upanisad, Gitapress, Gorakhpur, 2066 (Vikrama Samvat).
4. Kathopanishad, (with Samkarabhasya), ed. with Sanskrit, Hindi and Eng. Commentaries by Dr. Ram Rang Sharma & Dr. Malati Sharma. Bharatiya Vidya Prakashan, Delhi, 2003.
5. Mundakopanisad, (with Śamkarabhaṣya), ed. by Sri Jagannathsastri Tailang; Bharatiya Vidya Prakashan, Delhi, 2003
6. Taittiriyaopanisad, (with Samkarabhasya), Gitapress, Gorakhpur, 20th edition. 2063 (Vikrama Samvat).
7. Upanisat-Samgrahah, (containing 188 Upaniṣads), ed. By Prof. J.L.. Shastri, Motilal Banarsidass, Delhi, 1970.
8. 108 Upanisad (Saral Hindi Bhabartha Sahit) ed. By Vedamurti Taponistha Pandit Sri Ram Sarma, Acharya Bhagavati Devi Sarma, Yug Nirman Yojana Bistar Trust, Mathura 2016.



रमणिका गुप्ता की कविताओं में चित्रित सामाजिक चेतना

बी. अनीता

(पीएच.डी. हिंदी)

जूनियर लेक्चरर इन हिंदी,

गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज, गरीब नगर, विकाराबाद तेलंगाना – 501101

रमणिका गुप्ता समकालीन हिंदी साहित्य की एक सशक्त और संघर्षशील कवयित्री रही हैं, जिनकी कविताओं में सामाजिक चेतना, स्त्री-आत्मसम्मान, श्रमिक वर्ग की पीड़ा, दलित-आदिवासी जीवन और लोकतांत्रिक मूल्यों की गहरी अभिव्यक्ति हुई है। उनकी कविताएँ समाज में व्याप्त अन्याय, असमानता और पितृसत्ता के खिलाफ प्रतिरोध की आवाज़ बनकर उभरी हैं। रमणिका गुप्ता की काव्य दृष्टि में समाज के अंतिम व्यक्ति की पीड़ा और संघर्ष केंद्र में है। वे उनकी अनुभूतियों को शब्द देकर उन्हें मुख्यधारा की आवाज़ प्रदान करती हैं।

हिंदी साहित्य में रमणिका गुप्ता का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने बचपन से ही कविता लिखना आरंभ किया था। रमणिका गुप्ता ने इस संदर्भ में लिखा है कि- “लिखने की विधाएँ तो व्यक्ति में अंतर्निहित होती हैं, किसी में कम किसी में ज्यादा। साहित्य की साधारणतः तीन विधाएँ हैं- कविता, नाटककार और किस्सागोई। ये सभी में होती हैं किंतु जो लोग अधिक संवेदनशील या भावुक होते हैं उनके पास कविता आती है। वे कविता करना सीखते हैं।”¹ रमणिका गुप्ता का व्यक्तित्व संवेदनशील और भावुक होने के कारण उन्होंने अन्य विधाओं के साथ कविताओं का भी सृजन किया है। रमणिका गुप्ता एक ऐसी कवयित्री के रूप में सुविख्यात हैं, जिन्होंने अपने लेखन को समाज के हाशिये पर पड़े उपेक्षित वर्गों की आवाज़ बनाया। उनकी कविताएँ केवल भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक संघर्ष और चेतना का प्रखर दस्तावेज़ हैं। स्त्री, दलित, आदिवासी और मजदूर वर्गों के जीवन संघर्ष को उन्होंने अपनी कलम के केंद्र में रखा। इस प्रकार उनकी कविताओं में सामाजिक चेतना एक सशक्त और निरंतर सक्रिय तत्व के रूप में उपस्थित मिलती है। आदिवासियों का लाचार जीवन अलिशान बंगलों की नींव में दब जाता है।

“उनकी बेबस बातें
और मजबूरियों का
कोई गीत नहीं कहता
केवल गंदी, गलीज और मक्कारी के
गहनों से मढ़ा करता है समाज?”²

गरीब, मजदूरों को जानने के लिए अपने दृष्टिकोण को बदलना होगा। उनके तनाव भरे जीवन को जानना होगा। इसलिए रमणिका गुप्ता इस समाज को बदलना चाहती हैं। सामाजिक बदलाव के लिए क्रांति की जरूरत पर जोर देती रही हैं। कवयित्री समाज में परिवर्तन लाना चाहती थी। आंदोलन समानता लाने के लिए किए जाते हैं किंतु इनके खिलाफ साजिशें भी रची जाती हैं। रमणिका गुप्ता आगे बढ़कर सोचती हैं-

“रहा लंबी है - मंजिल दूर ^२
अनिश्चय के तूफान से
निश्चय के कदम डगमगा गये हैं
क्या जाने -
मंजिल पर पहुँचे
या न पहुँचे।”^३

जंगलों को काटकर बड़े-बड़े कारखानों का निर्माण किया गया। आदिवासियों को जंगल से यानी अपनी ही जमीन से विस्थापित किया गया। देश उन्नति की राह पर चल रहा है परंतु देश का ही एक हिस्सा आदिवासी दयनीय स्थिति में जीवन यापन कर रहा है। गरीबी, बेबस, लाचार, बेघर, भूखा, प्यासा जीवन यापन कर रहा है। कवयित्री कविता के द्वारा कहती है-

“सुनाता ^५
देश बहुत तरक्की कर रहा ^६
पर मैं अभी बहुत
पीछे हूँ
लोग कहते हैं
मैं इस लायक नहीं ^७
मुझसे ज्यादा
मेरे
कंकाल की कीमत ^८
जिसे मैं
बेच तो सकता ^९

पर उसे खरीदने की मेरी औकात नहीं।”^४

रमणिका गुप्ता ने आजीवन दलित और आदिवासी जीवन के अधिकारों की लड़ाई लड़ी, उन्होंने सामाजिक श्रेणीकरण की क्रूरता को बहुत बारीकी से समझा और अभिव्यक्त किया। उनकी कविताएँ जातिगत विभाजन, छुआछूत और आदिवासी समुदाय पर होने वाले अत्याचार को सीधे प्रश्नांकित करती हैं। उनकी कविताएँ केवल सहानुभूति ही नहीं, बल्कि बराबरी के संघर्ष की चेतना भी जगाती हैं। उन्नति का समाज मशीनों पर चलता है और आज मशीनी युग बन गया है। अमीर अमीर होते जा रहे हैं और गरीब गरीब बनते जा रहे हैं। लोग मतलबी होते जा रहे हैं और मानवीय मूल्य गिरते जा रहे हैं। समाज मशीनों के साथ दिन बिता रहा है यानी एक तरह से समाज मशीन बन गया है। रमणिका गुप्ता की कविताएँ समाज में व्याप्त आर्थिक शोषण और वर्गीय असमानताओं को चुनौती देती हैं। उन्होंने उन आवाजों को शब्द दिया, जिनकी पीड़ा प्रायः उपेक्षित रहती है। मजदूरों, खेतिहर स्त्रियों और मजदूरी के बदले उपेक्षा पाने वाले हाथों की पीड़ा उनकी कविताओं में मुखर होकर सामने आती है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्री को चार-दीवारी में कैद कर कटघरे में रखा था। आज स्त्री मुक्त होना चाहती है और हवाओं का रुख बदलना चाहती है। रमणिका गुप्ता कविता के माध्यम से कहती हैं-

“पर अंधेरो में अब नहीं भटकूंगी
आकाश के धुँधलकों में
भ्रम के झुटपुटों में
नहीं उलझूंगी
नहीं उलझूंगी
धूमिल नहीं,
मुझे प्रकाश चाहिए
प्रकाश।”⁵

सदियों से स्त्री चार दीवारी कैद में थी और अब स्त्री घुट-घुट कर अंधेरे में जीना नहीं चाहती है। वह मुक्त होकर आगे बढ़ना चाहती है। आज स्त्री के जीवन में काफी बदलाव भी आया है, पर समाज के हर कोने में स्त्री मुक्त नहीं हो सकी है। रमणिका गुप्ता ने आदिवासियों की स्थिति को नजदीक से देखा है।

आज की स्त्री रूढ़ि-परंपरा के पिंजरे को तोड़ने लगी है और समझौते के जीवन से मुक्त होना चाहती है। स्त्री अपनी मुक्ति के लिए सदियों से जूझ रही है और सदियों से पीड़ित स्त्री अपनी मुक्ति के लिए स्वतंत्र जीवन जीने की इच्छुक है। सदियों से चार दीवारी में कैद स्त्री कहती है-

“अब आजाद है सभी
मेरा बेडरूम भी
जो एक बंदीगृह बन गया था मेरे लिए
बंद हो गया था तहखाने के तरह
तिलस्म के जादू के ताले पड़ गये थे जिस पर
आज खुल गया ~
और मैं आजाद हुई हूँ।”⁶

आधुनिक स्त्री अपने अस्तित्व के निर्माण के लिए हिम्मत के साथ आगे बढ़ रही है और अब वह हर बात को नियति मानना अस्वीकार करने लगी है। इतना ही नहीं दुख हो या सुख हर रास्ते से गुजरना चाहती है। रमणिका गुप्ता की कविता में स्त्री मुक्ति के साथ दलित-आदिवासी स्त्री, मजदूर वर्ग की बेबसी का मार्मिक चित्रण भी मिलता है। उपेक्षित वर्ग मजबूरी में जीवन यापन करता है। दिन भर श्रम करता है, पर पेट भर खाना उसके नसीब में नहीं होता है। भूख, गुलामी, विवशता और लाचारी में रहता है। इसको वह अपना भाग्य मानता है। मन संतुष्ट नहीं फिर भी कहता है-

“गरीबी गुलामी
रुढ़ी-मजबूरी की
सब एक अमानत है - देन है
भाग्य की धर्म की भगवान की।”⁷

धर्म के ठेकेदार मजदूरों का शोषण करते रहे और मजदूर वर्ग शोषण सहता है। समाज में धर्म के नाम पर भेदभाव, शोषण, दंगे किए होते हैं। प्रार्थना के नाम पर घृणा फैलाई जाती है। हमने ही ईश्वर को बनाया है, फिर मंदिर में सजाया, फिर सोने-चांदी से सजाया, अनेक रूप देकर अनेक नाम भी दिए। आखिर मनुष्य भूल गया कि ईश्वर को

हमने ही बनाया है, रूप और नाम भी दिया और फिर उसी ईश्वर का गुलाम बन गए। आस्था और भय को ईश्वर का नाम दिया गया और मनुष्य धर्म की आस्था में फंसता गया।

रमणिका गुप्ता की कविताओं में स्त्री का आक्रोश व्यक्त हुआ है। कवयित्री को स्त्री खूँटे का बंधकर रहना कतई पसंद नहीं है। वह स्त्री स्वतंत्रता चाहती थी। स्त्री शोषण का शिकार न हो, स्त्री किसी बंधन में बंधकर न रहे। राजेंद्र अवस्थी ने इस संदर्भ में लिखा है कि- “मैंने उन कविताओं में एक ही चीज पायी है और वह है पुरुष समाज के प्रति तीव्र आक्रोश। रमणिका को नारी का न तो दासी रूप स्वीकार्य है और न पति-निष्ठा पत्नी का। वे उसे इस मामले में पुरुष के समकक्ष खड़ा देखना चाहती है।”⁸ रमणिका गुप्ता ने अपने जीवन में परंपरा और संस्कारों का पालन नहीं किया। उनका कहना था कि पुरुष स्त्रियों पर अपना अधिपत्य जमाए बैठा है। स्त्री को बंदिश परंपरा और संस्कृति के घेरे में बांध दिया गया है। स्त्री हमेशा समर्पण की भावना से जीवन जीती आयी है। रमणिका गुप्ता ने ऐसी परंपरा, संस्कृति और समर्पण की भावना का विरोध करते हुए कविता के माध्यम से कहा-

“इसलिए
हटा लो
संस्कारों की पहरेदारों को
दरवाजों पर से।”⁹

रमणिका गुप्ता की कविता में स्त्री प्रतिरोध और आत्मसम्मान का प्रतीक बनकर उभरती है। वे स्त्री की देह को बाज़ार और पितृसत्ता द्वारा किए जाने वाले शोषण पर प्रश्न करती हैं। उनकी कविताओं की स्त्री घर, कार्यालय, खेत और खदान में अपनी पहचान खोजने और स्थापित करने के संघर्ष में सक्रिय दिखाई देती है। इस स्त्री में संघर्ष की जिजीविषा और दमन के विरुद्ध विद्रोही चेतना स्पष्ट रूप से झलकती है।

रमणिका की कविताएँ ऐतिहासिक दस्वावेज हैं और उनकी कविताओं की खासियत यह है कि उन्होंने जो देखा उसी को अभिव्यक्त किया। इसलिए उनकी कविताओं में सामाजिक चेतना और मानवीयता का भाव स्पष्ट रूप से झलकता है। रमणिका गुप्ता की कविताएँ परिवर्तन की राह भी सुझाती हैं। वे मानवाधिकार, न्याय, समानता और सम्मान की आकांक्षाओं को केंद्र में रखकर समाज को अधिक मानवीय और प्रगतिशील दिशा में बढ़ने का संदेश देती हैं। यही जागरूकता सामाजिक चेतना का प्रधान स्वरूप बनकर उभरी है। उनकी कविताओं में अलग-थलग पड़े उपेक्षित समाज को एकजुट होकर संघर्ष करने का संदेश मिलता है। वे एकता और सामूहिक अस्मिता के महत्व को रेखांकित करती हैं, जिससे सामाजिक बदलाव की संभावनाएँ और प्रबल हो जाती हैं और उनकी कविताओं में सामाजिक बदलाव की मजबूत वैचारिक भूमि तैयार करती हैं। उनकी काव्य चेतना शोषित, वंचित, उपेक्षित तबकों की आवाज़ बनकर उभरती है और समाज को अपने दर्पण में झाँकने के लिए विवश करती है। इस तरह उनकी कविताएँ सामाजिक चेतना की मशाल लेकर चलती हैं और नए भविष्य की ओर मार्ग प्रशस्त करती हैं।

अतः रमणिका गुप्ता की कविताओं में सामाजिक चेतना केवल विचार या सिद्धांत के रूप में उपस्थित नहीं, बल्कि एक सक्रिय संघर्षधर्मी स्वर के रूप में उभरती है। वे कविता को हथियार बनाकर समाज में न्याय, समानता और स्वतंत्रता की स्थापना की आकांक्षा व्यक्त करती हैं। इस दृष्टि से उनकी कविता समकालीन हिंदी कविता में परिवर्तनशील युग की सशक्त दस्तावेज है।

संदर्भ :

1. रमणिका गुप्ता - साक्षात्कार, पृ.सं. 61
2. रमणिका गुप्ता - अब और तब, पृ.सं. 68
3. रमणिका गुप्ता - अब और तब, पृ.सं. 154
4. रमणिका गुप्ता - अब और तब, पृ.सं. 72

5. रमणिका गुप्ता - अब और तब, पृ.सं. 62
6. रमणिका गुप्ता - प्रकृति युद्धरत है, पृ.सं. 22
7. रमणिका गुप्ता - प्रकृति युद्धरत है, पृ.सं. 101
8. रमणिका गुप्ता - खूँटे - भूमिका से,
9. रमणिका गुप्ता - खूँटे, पृ.सं. 14

मो.नं. 9603549377 ई-मेल : vanitapawar656@gmail.com



रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन का चित्रण

पुरी गोदावरी

पीएच.डी. (हिंदी)

जूनियर लेक्चरर इन हिंदी,

गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज गर्ल, कोटागल्ली, निजामाबाद, तेलंगाना – 503002

आधुनिक हिंदी कथा साहित्य ने भारतीय ग्रामीण जीवन को अभिव्यक्ति देते हुए निरंतर प्रगति की है। ग्रामीण भारत की समस्याएँ, संस्कृति, लोक-परंपरा, सामाजिक और आर्थिक जटिलताएँ और मनोवैज्ञानिक धरातल को समकालीन कथाकारों ने अपने कथा साहित्य में मुखरित किया है। इन्हीं कथाकारों में रमेशचंद्र शाह का नाम अत्यंत आदर से लिया जाता है। उन्होंने उत्तराखंड की सांस्कृतिक जड़ों, पहाड़ी ग्रामीण जीवन, लोक मान्यताओं और प्रकृति संवाद को अपने उपन्यासों में समेटा है। उनके उपन्यासों में भारतीय गांव केवल भौगोलिक स्थान नहीं, बल्कि एक मानव संबंधों और संवेदनाओं का एक जाल है, जहाँ परंपरा और आधुनिकता के संघर्ष, जीवन की अकुलाहट, और अस्तित्व की जिजीविषा प्रकट होती है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन, प्रकृति, संस्कृति और मानवीय संवेदनाओं का अत्यंत सूक्ष्म और जीवंत चित्रण मिलता है। उनके उपन्यासों में पहाड़ी भूगोल, लोकविश्वास, लोकगीत, परंपराएँ और प्रकृति के साथ मनुष्य की सह-अस्तित्ववादी चेतना निरंतर रूप से प्रकट होती है। ग्रामीण परिवेश उनके यहाँ मात्र पृष्ठभूमि नहीं; वह उनके चरित्रों का संस्कार भूमि, जीवन दृष्टि और अस्तित्व का अनिवार्य आधार है।

‘पुनर्वास’ उपन्यास में गांव की सरलता और सहजता अभिव्यक्त हुई है। पर्वतीय ग्रामीण जीवन प्रकृति से निरंतर संघर्षरत है। उनके दैनंदिन जीवन में कठिनाइयाँ हैं, जीविका स्रोत कम है। खेत-खलिहान, जंगल से चारा, मवेशी, ये उनके जीवन का हिस्सा है- “नए-पुराने स्थापत्य का इतना बेमेल मिश्रण आपको कहीं नहीं दिखाई देगा। एक तरफ पत्थर और लड़की के असली पुराने घर हैं- सुघड़-सुडौल और अद्भुत नक्काशीदार दरवाजों-खिड़कियों वाले और दूसरी ओर सीमेंट के बदसूरत ढूह। कोई मुकाबला है दोनों का।”¹ रमेशचंद्र शाह का जन्म और जीवन अनुभव पर्वतीय भूगोल से जुड़ा होने के कारण उनके लेखन में हिमालयी प्रकृति, गढ़वाली जनजीवन और वहाँ की सांस्कृतिक संवेदना गहराई से अभिव्यक्त हुई है। उनके उपन्यास इस बात के सशक्त प्रमाण हैं कि पर्वत के कण-कण में मौजूद जिजीविषा, रहस्य, अध्यात्म और संघर्ष उन का मूल आधार है।

रमेशचंद्र शाह प्रकृति को केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं लेते, बल्कि उसे पात्रों के जीवन का अंग बनाते हैं। हिमालय, नदियों का संगीत, बादलों का विचरण, बर्फ की श्वेत चादर और जंगलों की नीरवता आदि उनके उपन्यासों में जीवंत दिखाई देते हैं। उनके यहाँ प्रकृति सृष्टि, आध्यात्मिक अनुभूति और मनुष्य के अंतरजगत से संवाद की

प्रतीक है। रमेशचंद्र शाह ने 'विनायक' उपन्यास में विनायक के मित्र लच्छू के द्वारा आज के दौर की समस्या का चित्रण किया है। लच्छू ने पत्र में विनायक को पहाड़ की दुर्दशा का वर्णन किया है। वह विनायक को पत्र के द्वारा हिमालय की ऊँची गगनचुंबी पर्वतमाला जो हमेशा बर्फ की सफेद चादर ओढ़कर रखा करती थी। आज वह पर्वतमाला दिन-ब-दिन नंगी और काली पड़ चुकी है। विनायक को बचपन में अपनी खिड़की से स्नोफोल को देखना बहुत पसंद था। उसे देखकर बहुत खुशी होती थी। कई वर्षों से ऐसा स्नोफोल नहीं देखना दुःख है। लच्छू ने पत्र के जवाब में लिखा है- “पहाड़ अब तो पहाड़ नहीं रहा बीनू, जो तुमने बचपन में देखा था।”² फिर आगे लिखा कि- “अरे, अब तो हिमालय तक को हिम के लाले पड़े हुए है। सारी जमा-पूंजी, उसकी यूँ ही पिघली जा रही है और नई बर्फ की आमद यूँ ही दिनोंदिन घटती जा रही है। अरे, एक के बाद एक ग्लेशियर नंगे और काले पड़ते जा रहे हैं। वही लाल रहा, प्योर, तो वो दिन दूर नहीं जब लोग एक लोटा गंगाजल तक के लिए तरस जाएंगे।”³ इसके अलावा लच्छू ने कहा कि आज के समय की प्रमुख समस्या जो पेड़ काटकर सभी जगहों पर बिल्डिंग, मॉल, मकान बनाए जा रहे हैं, जिससे लोगों को घूमने-फिरने, पेड़-पौधे लगाने की, बाल-बच्चों को खेलने-घूमने की जगह नहीं बची है। उपन्यासों में पर्वतीय दृश्य निरंतर मानवीय अनुभूतियों को प्रभावित करते हैं, कभी आश्चर्य देते हैं तो कभी भय, रहस्य और अकेलेपन की अनुभूति उत्पन्न कराते हैं।

शाह के उपन्यासों में पर्वतीय समाज की जीवन शैली, लोक परंपराएँ, रीति-रिवाज और उत्सव अत्यंत स्वाभाविक रूप में आते हैं। ग्रामीण जीवन की सादगी, सामूहिकता और पारस्परिक सहयोग, देव-आस्था और लोक-विश्वासों की सशक्त उपस्थिति उनके उपन्यासों में महत्वपूर्ण तत्व हैं। पर्वतीय मनुष्य प्रकृति के निकट रहता है और उसकी सीमाओं के साथ जीना जानता है। यह तथ्य लेखक ने अपने पात्रों के माध्यम से गहन रूप में प्रस्तुत किया है। लेखक कुमाऊँ अंचल में पले-बढ़े हैं। पहाड़ आंचल से उनका विशेष लगाव है और उनके उपन्यासों में पहाड़ी आंचल की विशेष छटा झलकती है। कुमाऊँ के नैनीताल, रानीखेत और गरमपानी आदि स्थानों का चित्रण है। उनकी विशेष रुचि अपनी जन्मभूमि अल्मोड़ा और आसपास के गांवों में है और ग्रामीण प्रकृति के प्रति उनका कितना लगाव है, 'विनायक' उपन्यास में एक प्रसंग इस तरह है- “बचपन के ऐसे संगी-साथी थे, ऐसा देवता स्थान था, ऐसी धरती और ऐसा असमान और ऐसे जिंदादिल हीरा-मोती सरीखे लोग, ऐसे मेले-कौतुक, ऐसी सदाबहार लीला...जो अभी तक, हाँ चालीस बरसों के बनवास के बावजूद मेरे भीतर ज्यों-की-त्यों जिंदा है।”⁴ पर्वतीय क्षेत्र का कठिन जीवन, सीमित संसाधन और रोजगार की कमी युवाओं को परदेश-गमन के लिए मजबूर करती है। रमेशचंद्र शाह ने अपने उपन्यासों में इस विस्थापन यथार्थ को अत्यंत मार्मिक रूप में चित्रित किया है- घर-गाँवों से कटता हुआ मन, परिवार और संबंधों में दूरी, गाँवों का उजड़ना, संस्कृति और लोकज्ञान का लोप, पर्वतीय जीवन के उजले पक्ष के साथ-साथ उसके दर्दनाक यथार्थ को भी बिना किसी बनावटीपन के सामने रखा है। पर्वतीय क्षेत्र में स्त्री श्रम और सामाजिक दायित्व अधिक होते हैं। शाह ने अपने उपन्यासों में पहाड़ी स्त्री की मेहनत, संघर्ष, भावनाएँ और आत्मबल का मार्मिक वर्णन किया है। उनकी स्त्रियाँ पीड़ित ही नहीं, बल्कि पर्वत की तरह धीरता और संबल से युक्त होती हैं। वे परिवार और समूचे समाज की धुरी बनकर उभरती हैं। हिमालय आध्यात्मिकता का केंद्र रहा है। रमेशचंद्र शाह अपने पात्रों के द्वारा इस आध्यात्मिक भूगोल को आत्म-साक्षात्कार, मुक्ति-अनुभूति और जीवन-तत्त्व की तलाश से जोड़ते हैं। 'गोबर गणेश' उपन्यास में पहाड़ी देवी-देवता और मंदिर का चित्रण आया है। विनायक अपने मित्र त्रिभुवन के साथ घूमने जाता है। वह त्रिभुवन को कहता है- “जहाँ नंदादेवी का शिखर दिखाई दे रहा उसकी बगल में वो पहाड़ है न उसके ऊपर मंदिर का कलश चमक रहा है। वह कसार देवी का मंदिर है। बहुत बढ़िया जगह है, पूरा अल्मोड़ा वहाँ से दिखाई देता है।”⁵ उनके यहाँ पर्वत देवताओं का निवास मात्र नहीं, बल्कि अपनी जड़ों से जुड़े रहने का प्रतीक भी है।

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में उत्तराखंड की भूमि, वहाँ का जनजीवन, प्रकृति और गाँवों का वास्तविक स्वरूप सजीव हो उठता है और ग्रामीण जीवन केवल पृष्ठभूमि न होकर संपूर्ण कथात्मक विश्व का केंद्र है। यहाँ ग्रामीण मनुष्यों की संवेदनाएँ, उनके संघर्ष, परंपराएँ, आर्थिक विषमता, सामुदायिक संबंध और बदलते सामाजिक ढाँचे का प्रभाव अत्यंत स्वाभाविक और जीवंत रूप में अभिव्यक्त हुआ है। शाह के उपन्यासों में गाँव आदर्श लोक नहीं, बल्कि संघर्ष और संबल का वास्तविक संसार है। 'पुनर्वास' उपन्यास में लेखक ने उजड़ते गांव और नष्ट होती वहाँ की प्रकृति का चित्रण किया है- "कहने को ड्राई एरिया है। मगर दवाई के नाम पर इस सुरा ने सारी कसर निकाल दी है। जमाना बहुत बदल गया है भाई साहब। गाँवों के हालात तो शहर से भी ज्यादा खराब है। घर के घर उजाड़ दिए इस सुरा ने।"⁶ लेखक ने जिस मिट्टी में पला है, जहाँ का पानी पिया उसके प्रति प्रेम और अपने पूर्वज के प्रति आस्था है। 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास के एक कथन से झलकती है- "पहाड़ नहीं छूटेगा। जहाँ का अन्न-जल पाकर उगे-पनपे, वहाँ भी हमारा कायदे का एक घर होना चाहिए। वहाँ भी मेरी जिंदगी भर की कमाई का कुछ हिस्सा लगाना है। तभी पुरखों की आत्म को शांति मिलेगी।"⁷ वे ग्रामीण जीवन के सुख-दुख, आशा-निराशा और सपनों को किसी रोमानी दृष्टि से नहीं देखते, बल्कि मनुष्य और प्रकृति के बीच के गहरे संबंध को उद्घाटित करते हैं। उनके पात्र श्रमशील, आत्मसम्मानी हैं पर अभावग्रस्त जीवन जीते हैं। उपन्यासों में ग्रामीण गरीब और सामंती ताकतों के मध्य संघर्ष स्पष्ट झलकता है।

लेखक ने ग्रामीण समाज में जातिगत व्यवस्था, सामाजिक रूढ़ियाँ, पितृसत्तात्मक नियंत्रण, धार्मिक मान्यताओं को गहन संवेदना के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही उन्होंने यह भी दिखाया कि समय के साथ इन संरचनाओं में परिवर्तन हो रहा है- शिक्षा, पलायन, और आधुनिकता गाँवों को प्रभावित कर रही है। विशेषकर पलायन की समस्या, पहाड़ी गाँवों में बेरोजगारी के चलते युवाओं का शहरों की ओर जाना, उनके उपन्यासों में बार-बार उभरता विषय है। उनके उपन्यासों में उत्तराखंड की लोक-जीवन परंपराएँ, वहाँ के ग्रामीण परिवेश, सामाजिक संरचनाएँ और आर्थिक यथार्थ गहराई से चित्रित मिले हैं। स्वयं पहाड़ी समाज से जुड़े होने के कारण उन्होंने ग्रामीण जीवन के संघर्ष, अभाव, श्रम-मूलक जीविका और अस्तित्व की निरंतर लड़ाई को भीतर से देखने-समझने में समर्थ हैं। उनके उपन्यासों में पहाड़ के गाँवों की आर्थिक संरचना प्राकृतिक संसाधनों और श्रम पर आश्रित है। खेती-बाड़ी, पशुपालन, जंगल से लकड़ी-घास लाना, ये सब ग्रामीण अर्थ-जीवन के मूल आधार हैं। लेकिन खेती भी वर्षा और भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर होने से अनिश्चित रहती है। रमेशचंद्र शाह इस असुरक्षा को संवेदनापूर्ण तरीके से व्यक्त करते हैं। कठोर जीवन-स्थितियाँ, पर्याप्त भूमि का अभाव, सिंचाई-सुविधाओं का न होना आदि समस्याएँ उनके पात्रों के केंद्र में रहती हैं। ग्रामीण परिवारों के पास बुनियादी आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए भी संघर्षपूर्ण स्थितियाँ बनी रहती हैं।

आर्थिक विषमता के साथ ही शाह ग्रामीण समाज की श्रमशीलता और जिजीविषा को उजागर करते हैं। पहाड़ की स्त्रियाँ घर-परिवार, खेती-बाड़ी और सामाजिक उत्तरदायित्वों का बोझ साथ लेकर चलती हैं। उनका श्रम ही पहाड़ी अर्थव्यवस्था की आधारशिला है। शाह के उपन्यासों में यह स्त्री-शक्ति विशेष रूप से मुखरित है। 'पुनर्वास' उपन्यास में प्रो. दीनानाथ गांव में रहनेवाले आर्थिक रूप से विपन्न भाई की सहायता करते हैं- "गाँव में रहनेवाला छोटा भाई और उसका परिवार क्या उन्हें दो जून सूखी रोटी भी नहीं खिला सकता? आखिर अभी पिछले साल ही तो अपने गांव घर की मरम्मत करवाने और उसमें दो कमरे और जोड़ने के लिए भाई को पैसे भेजे थे।"⁸ ग्रामीण आर्थिक चरित्र का सबसे मार्मिक पक्ष पलायन है। रोजगार के अभाव में युवा अपने गाँव-घर छोड़कर शहरों की ओर भाग रहे हैं। इस प्रवृत्ति से ग्रामीण ढाँचा कमजोर होता जा रहा है, बुजुर्ग और स्त्रियों पर ज़िम्मेदारियों का बोझ और बढ़ जाता है। लेखक इस सामाजिक विडंबना को तीखी दृष्टि से रेखांकित करते हैं। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में

ग्रामीण आर्थिक जीवन केवल अभाव और समस्याओं का विवरण भर नहीं है, बल्कि वहाँ के मनुष्य की संघर्षशीलता, श्रम-निष्ठा, सामुदायिकता और जीवन-मूल्यों का संवेदनात्मक यथार्थ भी है।

अतः उनके उपन्यासों में पहाड़ी गाँवों की आर्थिक परिस्थितियाँ सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना के साथ गहरे रूप में जुड़ी हुई हैं। इसलिए उनके उपन्यास पहाड़ी समाज की आर्थिक नियति का सशक्त दस्तावेज बनकर सामने आते हैं।

संदर्भ :

1. रमेशचंद्र शाह – पुनर्वास, 21
2. रमेशचंद्र शाह – विनायक, पृ.सं. 17
3. वही, पृ.सं. 17
4. वही, पृ.सं. 41
5. रमेशचंद्र शाह – गोबर गणेश, पृ.सं. 48
6. रमेशचंद्र शाह – पुनर्वास, पृ.सं. 44
7. रमेशचंद्र शाह – आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू, पृ.सं. 98
8. रमेशचंद्र शाह – पुनर्वास, पृ.सं. 9

मो.नं. 8688483751

ई-मेल : purigodavari01@gmail.com



आधुनिक कविता में किसान चित्रण

डॉ. ममता उपाध्याय

सह प्राध्यापक, हिन्दी

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

किसान हमारे अन्नदाता हैं लेकिन उनके प्रति हमारा दृष्टिकोण आज भी संकीर्ण बना हुआ है। भारत कृषि प्रधान देश है। हिन्दुस्तान को गाँवों का देश कहा जाता है। बहुसंख्यक जनता खेती किसानों पर निर्भर है। किसान ही इस खेती कारोबारी का संरक्षक और अन्नदाता माना गया है। किसानों को गाँव का पुत्र, पृथ्वीपुत्र, कृषि पुत्र और हलधर की भूमिका में देखा गया है। ग्रीष्म हो या बरसात या कि कंकपाती शीत—वह प्रकृति की गोद में रहकर माटी को उर्वरा बनाकर उसमें मेहनत के बीज बोकर खुशहाली की फसल तैयार करता है। कृषि भारत का राष्ट्रीय महोत्सव है। जिसमें भाग लेकर किसान सपरिवार अपने सम्पूर्ण तीज त्यौहार मनाता है। झूमता है, गाता है, नाचता है और जीवन जगत के प्राणियों/मनुष्यों का पेट भरता है। महाकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने इनके बंधुत्व, मूल्यों, श्रम और सुखी सार्थक जीवन को देखकर कहा है—

सच्चा राज्य कृषक करते हैं,
जिनके खेतों में अन्न,
उनसे कौन अधिक सम्पन्न,
पत्नी सहित विचरते हैं,
इनको सुलभ सुधा की धार।¹

आवश्यकता और अपरिहार्यता जग जाहिर है। माटी सपूत सीमा के प्रहरी जवान और सीमा का उदर भरने वाले किसान भारतीय संस्कृति के दो-दो जोड़े हैं, 1—1 ग्यारह हैं, जिनकी संप्रभुता पर प्रत्येक भारतीय नागरिक को शान्ति का श्वास लेने और इठलाने का गौरव प्राप्त है।

इस किसान की पीड़ा को न सरकार देख रही है और न ही इनके नीति नियंता। इन माफियाओं के यहाँ जब भी छापा पड़ता है, तब कितनी जमीनें, कितने प्लॉट कितने मकान इन्हीं किसानों की धड़कनों के छीने हुए भाग होते हैं। जिसके कारण किसानों का अन्न और उनके बच्चों का बचपन छिनता है।

पानी बनकर रक्त कृषक करते हैं यहाँ,
फिर भी अभागे भूख से दिन रात मरते हैं यहाँ।²

पूँजीपतियों द्वारा शोषण, सीधा—साधा किसान, कभी ठगा सा, कभी हताशा के भीषण अंधकार में झूलता, कभी बैंक कर्ज चुकाने को मजबूर, कितनी याचना, कितनी मिन्नतें, कितनी आरजू, बिलखते आँसू,

¹ साकेत का नवम सर्ग—मैथिलीशरण गुप्त पृ. 9

² भारत भारती—मैथिलीशरण गुप्त, पृ. 87

खून के घूंट पीता कृषक परिवार, कितना मजबूर, खोता नूर, चुसता भरपूर आत्महत्यायें सब कुछ त्रासदी भरा जीवन संघर्ष संत्रास, धैर्य, प्रेम, वात्सल्य, दरियादिल, बात-बात पर उत्सवी किसान, यांत्रिक युग में कितनी भी बढ़िया किस्म की खेती कर अन्न उपजा रहा हो, लेकिन बड़े किसान ही बड़े लाभ में हैं, यानि वही विषमता यहाँ भी होली-दिवाली मनाने को मजबूर। रामकाज कीन्हें बिना, मोहि कहां विश्राम की कहावत किसान पर चरितार्थ है। कृषकाय, होठों पर पपड़ी, चेहरों पे झुर्रियां, भिक्षुक सी वेशभूषा, दूसरों का पेट भरने वाला, भूखा फिर भी दरियादिल किसान का व्यक्तित्व विराट और संरक्षण में विरोधाभासी बना हुआ है। हो जाये अच्छी भी फसल पर लाभ कृषकों को कहाँ? आधुनिक किसान आज यांत्रिकता के सहारे मशीनों और उन्नत खाद-बीजों के माध्यम से समृद्ध खेती-बाड़ी का कार्य करते हुए अपनी पूर्व स्थिति से आगे हैं। उनके खेतों की हरियाली, नलकूपों/हैण्डपम्पों बांधों, नहरों के पानी से सिंचाई, ट्रैक्टर से खेत जोतना, थ्रेसर से फसल काटना, सालों की लंबी कहानी सिकुड़कर, सिमटकर, दिनों की बात हो गई। फिर भी क्या गाँव का किसान, मध्यम किसान उस बूते तक पहुँचा है? किसान की दुर्दशा में तारसप्तक के कवियों की पीड़ा भी बड़ी है। इन कवियों ने लाचार किसान के जीवन के अनेक चित्र अपनी कलम तूलिका से चित्रित किए हैं। यथा—

फिर मिट्टी में जीवन की आशा जागी है,
गलते हैं दकियानूसी मिट्टी के ढेले,
किन्तु आज तो/शस्य श्यामला इसका

× × ×

शुतुरमुर्ग की टांगों जैसा/नंगा नंगा।³

हिन्दी कवियों ने संस्कृति के धनी, धरती पुत्र के हृदय जोड़कर उनके शोषण/दमन के खिलाफ संघर्ष/सहयोग की बात की है, उतरे कंचन की बाली में, बरस पड़े मोती के धान।' शमशेर बहादुर सिंह भी इन शोषित किसानों के प्रति अपनी सहानुभूति देते हुए कहते हैं—सामान्य पूँजी का क्षत होवै। ऊँच-नीच का विधान नत होवै। साधिकार जन्नत उन्नत होवै। जो समाजवाद जय पुकारती किसान कमकर की भूमि है।⁵ इसी लघु जीवन से बहुजन जीवन बनता है। इस कर्मधारी किसान की विषय के लिए स्वस्थ जीवन के लिए कवि की धारणा है—

‘हिन्दी हम चालीस करोड़
क्यों बैठे हैं साहस छोड़?
देश हमारा हिन्दुस्तान
लाखों ही मजदूर किसान’⁴

असि, मसि, कृषि परम्परा में कृषि संस्कृति महत्वपूर्ण रही है। विज्ञान के बढ़ते कदम हैं। मीडिया, मशीन और मापदण्डों के समय में यंत्रों। संयंत्रों ने विकास के अनेक दावे किये हैं। प्रकृति पर निर्भर किसान के घरों में विज्ञान के चरणों ने ट्यूबवेल, ट्रैक्टर, थ्रेसर जैसी धन-धान्य पूर्ण बनाया है। किसान आज भी धर्म/जाति/कुरीतियों के भ्रमताल में पड़कर परतंत्र मानसिकता में जीकर छोटी-छोटी बातों में उलझकर झगड़ों आदि में फँसे हैं। किसान—न सिर पर टोपी न पाँव में पनहीं, घुटनों तक धोती, हाथ में लाठी, सत्तू प्याज—रोटी का भोजन, निःस्वार्थ जीवन, खेत के कीचड़ में सना गेहूँ और धान की पालियों से लहलहाती फसल, पुआल में, वृक्षों की शीतल छाया में ही सोना, लकड़ी—फूस के बने मकान नेपारी के रस्सी से बंधा द्वार पशुधन सेवा। सजग प्रहरी, कर्मभूमि खेत/त्याग तपस्या से मिट्टी से सोना उपजाने वाला—भारत की आत्मा किसान/किसान की शक्ति कृषि। किसान आधुनिक जीवन का विष्णु।

आज भी भारतीय किसान मानसून के भरोसे तो कभी पैसे के भरोसे रहता है। दोनों में से जो भी उसको कमी होती है वह अपने खेत के भीतर छिपे बीज को अंकुरित करने में परेशानी महसूस करता है।

³ समय देवता : नरेश मेहता दूसरा सप्तक पृ० 54

⁴ सत्यम शिवम सुन्दरम्—रामविलास शर्मा दूसरा सप्तक पृ. 247

निर्धनता से त्रस्त कृषकों के जीवन का आधार बादल ही है। निराला जी ने बादल राग कविता में लिखा है—

हे जीर्ण बाहू, हे क्षीर्ण शरीर/तुझे बुलाता कृषक अधीर।⁵

कालाबाजारी और भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ चुकी सरकारों की किसान-नीतियाँ दिन-प्रतिदिन कमजोर होती जा रही हैं। सत्तापक्ष घोषणाओं की भरमार करती है। विपक्ष नकार पर किसानों की जीवन में मचे हाहाकार को कौन समझ सकता है? सत्ता के दलाल/बिचौलिये किसानों के जीवन के रक्षक खाद, बीज आदि के संकट को लेकर कभी हुदहुद, नीलोफर तो कभी विदेशी आयात को जिम्मेदार ठहरा देते हैं। सत्ता परिवर्तन को भी जिम्मेदार कारक मान लेते हैं, परन्तु सच यह है कि समय पर इन्हें समुचित वितरण की अव्यवस्था ही किसानों पर चोट है। 'आदिम युग से ही जिज्ञासु मानव ने अपनी उदरपूर्ति के लिए जंगली कंदमूल फल के अलावा मांसाहारी शैली को अपनाया। जैसे-जैसे बुद्धि विकसित/तकनीकी विकसित। जमीन को खेती लायक बनाकर औषधीय पेड़ पौधे फिर अन्न अनाज कोदो, कुटकी, सांवा आदि के बाद रबी और खरीफ फसल के रूप में धान, जौ, मटर, चना, गेहूँ आदि की खेती मनुष्यों की भूख तृप्ति का साधन बनी है।'⁶ रामविलास शर्मा ने धरती-पुत्र किसान की कोई जाति/भाषा नहीं देखी है। वे उसे मानवीय धर्म की तुला में तौलते हैं और कहते हैं—

**धरती के पुत्र की
होगी कौन जाति, कौन मत, कहीं कौन धर्म?
धूलभरा धरती का पुत्र है,
जोतता है जो किसान इस धरती को,
मिट्टी के चिर संसर्ग में।**

सुभद्राकुमारी चौहान भी दीन शोषित किसानों के प्रति करुणा का भाव लिए कहती हैं —

**भूखें नंगे दीन बंधुओं पर लख अत्याचार,
दीन बंधु की आंखों पर फूटी करुणा की धार।**

इसी प्रकार किसानों की गाय कटते देख तो भारतेन्दु भी दुःखी हैं—

विधवा विलपे निज धेनु कटे, कोउ लागत हाय गुहार नहीं।

रक्त को पानी बनाकर कृषक खेती करते हैं और पूंजीवाद उसका शोषण कर उसके जीवन को अभिशप्त करता है। केशव चन्द्र मिश्र भी किसान की असहाय अवस्था का चित्रण करते हुए उसे रोटी न मिलने की चिंता पर चिंता व्यक्त करते हैं—

**एक दरिद्र कृषक है, जिसने किया खेत में दिन भर काम।
किन्तु पेट भर ही रोटी मिलना उसको है जय सीताराम।⁷**

किसानों की देख दुर्दशा/आँसू/पीड़ा/पर गुप्त जी हैरान हैं। मानव का ऐसा दमित चेहरा। वे विश्वास नहीं कर पाते। सोचते-कहते हैं—

कृषक न बनाते भले गधा और भिक्षुक बना देते।

बारिश की अनिश्चितता, सिंचाई का अभाव, खाद और बीज के साथ धोखेबाजी एक तरह से कर्ज के बोझ में डूबा महाजन और जमींदार के सूद लगान में डूबा किसान सूखी रोटी, गुड़ की डली या नमक की डली के लिए तरसता है। पैसे की आवश्यकता, अनाज बेचता किसान, सार्थक मूल्य न मिलने पर दरिद्र का दरिद्र बना रहा है।

धरती और किसान का अटूट रिश्ता है। वह अपनी जमीन से सर्वाधिक लगाव रखता है। वही उसका सब कुछ है। कृषक समाज के लिए खेती कोई धंधा नहीं बल्कि उनकी जीवन शैली है। किसान के लिए खेती कोई व्यापार नहीं है। वह तो उसकी रोजमर्रा की जिन्दगी का एक बड़ा हिस्सा है। वह सब कुछ

⁵ शर्मा, डॉ. रामविलास, संपा. राग विराग, पृ. 53

⁶ स्टार समाचार सतना दिनांक 19.11.14

⁷ द्विवेदी युगीन काव्य—डॉ. पूनम चंद तिवारी पृ. 240

खोकर किसान बना रहना चाहता है। खेती-किसानी सदैव से इस देश की प्राण, संस्कृति और सरोकार रही है। आज खेती-किसानी की उपेक्षा है। बढ़ता हुआ औद्योगिकीकरण खेती-किसानी को उगलना चाहता है। किसानों की भूमि उद्योगपति कोड़ियों के दाम खरीदने चाहते हैं। कर्ज में फंसा किसान आत्म हत्या को मजबूर हो रहे हैं। खेती-किसानी पर बात करना आज की बड़ी जरूरत है। किसान चेतना एवं किसान जीवन में बदलाव लाने के लिए हिन्दी कविता ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। कृषि और किसान के लिए समस्याओं का समाधान और उसके उत्थान के लिए इन कविताओं में कृषि और किसान का जीवन चित्र हो सकता है।

संदर्भ—

1. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत का नवम सर्ग, चिरगांव, चिरगांव प्रकाशन, 1988
2. गुप्त, मैथिलीशरण, भारत भारती, चिरगांव साकेत प्रकाशन, 1983
3. मेहता, नरेश समय देवता:दूसरा सप्तक, नई दिल्ली, भारतीय ज्ञान पीठ, संस्करण 1951
4. शर्मा, डॉ. रामविलास, सत्यम शिवम सुन्दरम्, दूसरा सप्तक, नई दिल्ली, भारतीय ज्ञान पीठ, संस्करण 1951
5. शर्मा, डॉ. रामविलास, संपा. राग विराग, पृ. 53 इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन, 1979
6. स्टार समाचार सतना दिनांक 19.11.14
7. द्विवेदी युगीन काव्य—डॉ. पूनम चंद तिवारी पृ. 240
8. शर्मा, डॉ. रामविलास, निराला की साहित्य साधना, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2013



कुबेरनाथ राय के निबंधों में सामाजिक समरसता

संगीता सिंह

सहायक प्राध्यापक, हिंदी

विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरार, ग्वालियर (मप्र)

भारतीय चिंतन के केन्द्र में मानव है। भारतीय संस्कृति के अनेक स्रोत रहें हैं। इसमें मुख्य रूप से प्राचीन रचनायें जैसे वेद, पुराण, धर्मसूत्र, उपनिषद्, महाकाव्य आदि। इसके अतिरिक्त समय-समय पर भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के विवरण ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अलग-अलग कालखण्डों में आर्यों विभिन्न रचनाओं ने भी जैसे अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, एवं शुक्रनीति ने भी इसमें महत्वपूर्ण योगदान दिया है। प्राचीन भारतीय चिन्तन शिलालेखों, स्तंभलेखों, गुफालेखों, एवमं ताम्रलेखों में भी परिलक्षित होता है। भारतीय चिन्तन जीवन को धर्म एवं राजनीति को एक साथ जोड़कर देखने पर बल है। इसमें आध्यात्मिकता पर झुकाव है तो वहीं वैज्ञानिक दृष्टि भी है। भारतीय चिन्तन में शासन एवं प्रशासन के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण रखा गया है। इसमें कठोर दण्ड की व्यवस्था है। और मानवीय आधारों पर भी दंड का विधान है। कुबेरनाथ राय जी आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोगों और शोधों से भी परिचित थे। सृष्टि के रहस्यों को, मनुष्य और उसके विकास की वैज्ञानिक दृष्टि की पूरी समझ थी उन्हें। साथ ही अपने समय के दीन - हीन, रोते-बिलखते लोकचित्त को भी देख रहे थे। भारतीय मनीषा ने जीवन के बारे में जो शाश्वत निष्कर्ष दिए हैं, उनके प्रति कुबेरनाथ राय जी के मन में आदर है। लेकिन वे भारतीय चिन्तन के पक्षधर हैं। वे ज्ञान-विज्ञान के नए आलोक में अपने प्राचीन शास्त्र-ज्ञान का परीक्षण करते हैं। भारतीय परंपरा के प्रति उनका आदर भाव उनके मनोलोक को संकीर्ण नहीं बनाता बल्कि एक विश्व दृष्टि देता है। उनके निबंधों में भारतीय संस्कृति की झलक तो मिलती ही है साथ ही विज्ञान के प्रति उनकी व्यावहारिक दृष्टि भी देखने को मिलती है। 'मधु माधव' निबंध में वे लिखते हैं 'इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि औद्योगिक विकास के साथ-साथ बौद्धिकता का दायरा बढ़ता जाएगा और रसबोध का क्षेत्र घटता जाएगा' (पृष्ठ २२)। वे प्रकृति के अन्यान्य प्रेमी हैं। हम कह सकते हैं कि कुबेरनाथ राय जी देश-काल की सीमाओं से ऊपर उठकर मानव संस्कृति की बात करते हैं। संस्कृति, उनके अनुसार संपूर्ण समष्टि मानव के कल्याण के लिए है, वह ऐसी निर्मात्री शक्ति है जो सड़ी-गली चीजों को छोड़ती जाती है और आवश्यक को ग्रहण करती है।

भारतीय अवधारणा में नगरीय सभ्यता, कला शिल्प और भक्ति योग जैसे तत्त्वों को द्रविड़ों की देन माना है। कुबेरनाथ राय कहते हैं कि 'आर्यों की अग्नि उपासना अर्थात् यज्ञ का रूपांतर हुआ 'हवन' में निषादों और द्रविड़ों का स्नान प्रेम बना 'तीर्थ'। कुबेरनाथ राय जी के निबंधों के चिन्तन के केन्द्र में संस्कृति और प्रकृति है। मानवसभ्यता को सुंदर बनाने की साधना का नाम ही उनकी दृष्टि में संस्कृति और प्रकृति का मिलाजुला संगम है। भारतीयता को प्राप्त करने की चेष्टा ही 'प्रिया नीलकण्ठी' के निबंधों की सृजन-प्रेरणा है। इस रूपान्तरण में ग्राम-संस्कृति के सूखते

रस-बोध का स्थान यन्त्र-युग की बौद्धिकता लेती जा रही है। जिसने आज के व्यक्ति को अभिशप्त और निर्वासित जीवन जीने के लिए विवश किया है। यह सत्य है कि औद्योगिक संस्कृति के विकास के साथ-साथ बौद्धिकता का दायरा भी बढ़ता है। किन्तु ग्रामीण जीवन की उल्लास-साधना इतनी हेय और उपेक्षणीय नहीं है कि इसे सूखने दिया जाए। २ 'प्रिया नीलकंठी' शीर्षक निबंध संग्रह में 'गूलर का फूल' निबंध के माध्यम से जहाँ उन्होंने सनातन संस्कृति की घायल अवस्था का वर्णन किया है वहीं बेजोड़ प्रकृति चिंतन भी देखने को मिलता है 'भगवान सूर्य नारायण अपनी पीत अरुण आभा से इस धरती को राग-मय कर रहे थे। धीरे धीरे दबे पाँव श्यामली उतरने लगी। पक्षियों ने थोड़ी देर दुःख सुख की कथा एक दूसरे से कहकर रैन बसेरा लिया।'३ (पृष्ठ 08)

जिससे पता चलता है कि कुबेरनाथ राय जी प्रकृति के कितने बड़े उपासक हैं। आचार्य कुबेरनाथ राय के निबंधों में लोक तत्त्व में बहुत सहज ढंग से उतरते हैं। अपनी जमीन से जुड़ाव उन्हें बहुत आत्मीय निबंधकार और सच्चा भारतीय बनाती है। कुबेरनाथ राय जी आधुनिक विश्व-चिन्तन- का प्रयोग वे भारतीयता की बनावट और बुनावट के रेशों को उभारने और उसके कच्चे पक्के धागों की पहचान के लिए करते रहे हैं। वे भारतीयता के विभिन्न पहलुओं को केवल विश्लेषित ही नहीं करते उनका संश्लेषण भी करते हैं। वे भारतीयता को अपनी समग्रता में व्यक्त करते हैं। कुबेरनाथ राय जी ने अपने निबंध सनातन नीम के माध्यम से भारतीय संस्कृति में नीम के वृक्ष की महिमा का गान किया है उन्होंने बताया है कि किस प्रकार नीम के पेड़ पर हमारे पूज्य देवताओं का वास होता है। भारतीय संस्कृति में नीम का पेड़ पूजनीय माना जाता है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण किस प्रकार नीम उपेक्षित हो गया। विदेशी चिकित्सा पद्धति के कारण हमारे पारम्परिक आयुर्वेद के नुस्खे जिसमें विभिन्न प्रकार की जड़ी बूटीयों के साथ नीम बहुत ही जरूरी हुआ करता था। उसका चलन धीरे धीरे घटता गया। वेदों में जिसे देवता रूप में पूजा जाया करता था। वह आज हमारी अज्ञानता के कारण प्रेतों का स्थान बन गया।

नीतेश के विचित्र विचार को हास्यपूर्ण और विवेकहीन बताते हुए कुबेरनाथ राय जी अपने निबंध डूबता हुआ देवयान में लिखते हैं 'ईश्वर की मृत्यु का अर्थ होगा अतिमा की मृत्यु सौंदर्य स्नेहा करुणा दया एवं पुरुषार्थ आदि मूल्य जो अब तक जीवन को इस शून्य देश में आधार प्रदान कर प्रतिष्ठित किए थे अतिमा पर ही निर्भर हैं।'४(पृष्ठ 38) भारतीय संस्कृति, परम्परा व लोक तथा ग्रामीण संस्कृति से ओत-प्रोत जीवन्त, सरस, सहज जीवन का परिदृश्य है। प्रकृति की पूजा होती है। भारतीय संस्कृति में कण कण में देव बसते हैं। इस प्रकार इनके निबंधों में एक तरफ़ यदि भारतीय संस्कृति तथा लोक संस्कृति का गौरव एवं वैभव छिटका है, तो दूसरी तरफ़ आधुनिकता की चकाचौंध व बनावटीपन से युक्त रिक्तता से भरे शहरी जीवन का चित्र देखने को मिलता है। किन्तु ध्यातव्य है कि सर्वत्र भारतीय संस्कृति, परम्परा तथा लोक संस्कृति की पृष्ठभूमि तथा परिप्रेक्ष्य में ही लेखक आधुनिक जीवन की विसंगतियों को उभारता है या कहिए सांस्कृतिक संदर्भ में आधुनिक परिवेश राय जी के निबंधों में उजागर हुआ है। ईश्वर को अस्वीकृत करके बुद्धि को स्वामिनी और कामिनी बनाया यह मनुष्य संभव होता है प्रभु और पिता के नियंत्रण से ऊब गया था।

वस्तुतः राय जी के निबंधों में "कसक का कारण है जन-जीवन में धीरे-धीरे शहरी मनोवृत्ति का विकास। अपनी जड़ों और संस्कारों से कटने की पीड़ा उनके निबंधों का मुख्य स्वर है।

पेड़ भारतीय संस्कृति में कितना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। आखी का पेड़, पैशाची ;जरथूस्त और मैं, में राय जी ग्रामीण परिवेश का चित्रण करते हुए लिखते हैं-

जेठ वैशाख के महीने में आठ बजे सुबह से छः शाम तक लूं बहती है आग का दरिया आसमान से उतरकर धरती पर वन्या की तरह बहने लगता है। वातावरण का संगीत उदास और धू धू, हू हू हो उठता और कभी-कभी यह हू हू एक लंबी रेखा में खींचा हुआ दूर तक चला जाता है शाम होने दो घड़ी रात तक गर्म हवा चलती रहती है फिर

धीरे-धीरे रात ठंडी होने लगती है। तब खोलते दिमाग में रात की शीतलता के साथ-साथ आँखी की तर और तीखी सुगंध धीरे-धीरे प्रवेश करने लगती है। ५ (पृष्ठ 44)

राय जी का सम्पूर्ण जीवन बिकलता से भरा महसूस होता है। वे भारतीय संस्कृति के प्रहरी की भांति सामान्य जनलोक में सनातन संस्कृति की झलक देखना चाहते थे। वे चाहते थे श्रीराम की मर्यादा सा समाज जिसमें ऊँच नीच से उठकर एक माला के मोती सा समाज जिस प्रकार निषाद राज श्रीराम के नाव का खिचईया मात्र नहीं है वह श्रीराम के जीवन का अद्भुत उदाहरण है कि प्रभु राम के लिए कोई छोटा या बड़ा नहीं है।

वे ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता महसूस करते हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को उसकी जरूरत भर का अन्न, वस्त्र और शिक्षा मिल जाए और उसे जितने की जरूरत है उससे अधिक संग्रह करने का अवसर न मिले। जब सामूहिक रूप से ऐसी कोई व्यवस्था हो जाएगी तभी मनुष्य का ध्यान छोटी-छोटी चीजों से हटकर बड़ी चीजों की ओर उन्मुख होगा। लेकिन इसी निबंध में वे यह भी महसूस करते हैं कि आज जब हम सामूहिक शिक्षा, सामूहिक सुरक्षा आदि की ओर अग्रसर होने का बाध्य हो गए हैं तो

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कुबेरनाथ राय जी के प्रस्तुत निबंधों में सांस्कृतिक विभिन्नता का सुंदर समन्वय हुआ है। आज धर्माधिष्ठित लोग संस्कृति को अधिक महत्व देते हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से लोग एकत्र नहीं हैं। हर एक जाति धर्म एवं संप्रदाय की संस्कृति अलग अलग है। वैदिक संस्कृति, बौद्ध संस्कृति, ईसाई संस्कृति, इस्लाम संस्कृति और उनमें विद्यमान अनेक सांप्रदायिक संस्कृति हैं। भारतीय समाज संस्कृति दृष्टि से भी नायाब होता जाता है। एक संस्कृति के लोग दूसरी संस्कृति के लोगों का आदर करते हैं। अतः इस दृष्टि से सांस्कृतिक भेद होने के बाद भी सब भारतीय एक हैं। निबंधकार कुबेरनाथ राय ने सांस्कृतिक समन्वय स्थापित करने का महत्वपूर्ण प्रयास है। आज समाज को गतिशील बनाना है तो सांस्कृतिक मतभेद नष्ट होने चाहिए। मानवतावादी संस्कृति का पालन सभी लोगों को करना आज आवश्यक है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि कुबेरनाथ राय जी के निबंधों में भारतीय संस्कृति के बहुत ही सुंदर दर्शन होते हैं। बौद्धिकता भी है। लेकिन उतना ही लालित्य है। इस दृष्टि से इन ललित निबंधों में भारतीय संस्कृति का सुंदर और सुगठित रूप देखने को मिलता है।

सन्दर्भ सूची -

१. प्रिया नीलकंठी, कुबेरनाथ राय, भारतीय ज्ञानपीठ 18, इंस्टिट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली – 110003 पृष्ठ. 22
२. वही पृष्ठ. 08
३. वही पृष्ठ. 08
४. वही पृष्ठ. 38
५. वही, 44

मोब. 9977819671

Gmail ID - jaitwarsangeeta@gmail.com



मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री: सत्ता, स्वायत्तता और संघर्ष

डॉ. जूलिया एम्मानुएल

सहायक आचार्या एवं विभागाध्यक्षा,

हिन्दी स्नातकोत्तर एवं शोध विभाग, निर्मला कॉलेज, मूवात्तूपुजा, केरल-पिन 686661

शोध-सार

साहित्य केवल समाज का दर्पण नहीं, बल्कि उसकी विसंगतियों को उजागर करने वाला एक सशक्त माध्यम भी है। समाज के बौद्धिक और नैतिक विकास में साहित्यकार की भूमिका निर्णायक होती है। साठोत्तरी हिंदी महिला लेखन में मृदुला गर्ग का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिन्होंने हिंदी कथा साहित्य को मनोवैज्ञानिक गहराई और वैचारिक तीक्ष्णता प्रदान की। उनकी कहानियाँ स्त्री की पीड़ा का मात्र करुण आख्यान नहीं हैं, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था को चुनौती देने वाली स्त्री-चेतना की अभिव्यक्ति हैं। प्रस्तुत शोध-आलेख में उनकी 'तीन किलो की छोरी' और 'खरीदार' कहानियों के माध्यम से स्त्री-अनुभव के भिन्न सामाजिक, आर्थिक और मानसिक आयामों का विश्लेषण किया गया है। 'खरीदार' की नीना शहरी, शिक्षित और आर्थिक रूप से सशक्त स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि 'तीन किलो की छोरी' की शारदाबेन ग्रामीण, श्रमशील और सीमित संसाधनों में जीवन जीने वाली स्त्री है। इन दोनों पात्रों के माध्यम से मृदुला गर्ग स्त्री-चेतना की बहुआयामी और विरोधाभासी संरचना को उद्घाटित करती हैं। यह अध्ययन देहवाद, आर्थिक स्वायत्तता, पारंपरिक भूमिकाओं के विखंडन तथा सामाजिक संरचनाओं के नारीवादी विश्लेषण को केंद्र में रखता है।

बीज शब्द : मृदुला गर्ग, स्त्री-विमर्श, नारीवादी आलोचना, आर्थिक स्वायत्तता, देह-राजनीति, पितृसत्ता, साठोत्तरी हिंदी कथा साहित्य

प्रस्तावना

मृदुला गर्ग के साहित्य में नारी की आंतरिक और बाह्य दुनिया के द्वंद्व, सामाजिक दबाव और आत्म-अन्वेषण की गाथा मुखर होती है। उनकी रचनाएँ नारी को केवल पीड़िता के रूप में नहीं, बल्कि एक सक्रिय, विद्रोही और स्वनिर्णय लेने वाले व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती हैं। 'खरीदार' कहानी में नीना का चरित्र आधुनिक, शिक्षित, आर्थिक रूप से स्वतंत्र स्त्री का प्रतिनिधित्व करता है, जो पुरुषों के वर्चस्व को चुनौती देती है। वहीं 'तीन किलो की छोरी' शारदाबेन के माध्यम से ग्रामीण, आर्थिक रूप से विपन्न परिवेश में स्त्री की स्थिति और उसके संघर्ष को दर्शाती है। दोनों ही कहानियाँ नारीवाद के विभिन्न पहलुओं—जैसे कि देह की राजनीति, आर्थिक स्वावलंबन, सामाजिक मान्यताओं का प्रतिरोध—को उजागर करती हैं।

‘खरीदार’ कहानी: आर्थिक स्वायत्तता और देह का स्वामित्व

‘खरीदार’ कहानी आधुनिक शहरी जीवन की पृष्ठभूमि में रची गई है। नीना, कहानी की नायिका, एक सफल प्रशासनिक अधिकारी है, जो आर्थिक और सामाजिक रूप से पूरी तरह स्वतंत्र है। वह अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेती है। वह पुरुषों के वर्चस्व को न केवल चुनौती देती है, बल्कि उन्हें अपनी इच्छानुसार ‘खरीदने’ का सामर्थ्य भी रखती है। वह विवाह जैसी पारंपरिक संस्था को अनिवार्य नहीं मानती है। कहानी में वह स्वयं स्वीकार करती है कि वह संबंधों में ‘खरीदार’ है। यह स्थिति पारंपरिक पितृसत्तात्मक संरचना को उलट देती है, जहाँ सामान्यतः पुरुष सत्ता के केंद्र में होता है।

नीना का चरित्र इस बात का प्रतीक है कि आधुनिक युग में नारी अब पुरुष की अनुगामी नहीं, बल्कि स्वयं निर्णय लेने वाली और अपनी इच्छाओं की प्राथमिकता तय करने वाली है। महादेवी वर्मा ने ‘स्त्री का अर्थ स्वातंत्र्य का प्रश्न’ निबंध में यों लिखी थी “आधुनिक परिस्थितियों में स्त्री की जीवनधारा ने जिस दिशा को अपना लक्ष्य बनाया है उनमें पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता ही सबसे अधिक गहरे रंगों में चित्रित।”¹ अतः नीना का चरित्र महादेवी वर्मा के उस स्त्री-विमर्श का व्यावहारिक धरातल है, जहाँ आर्थिक स्वतंत्रता मात्र एक साधन नहीं, बल्कि जीवन की पूर्णता की अनिवार्य शर्त है। वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और सामाजिक संबंधों के मध्य स्वयं निर्णय लेकर समकालीन नारी की स्वायत्त चेतना को रेखांकित करती है। किंतु मृदुला गर्ग इस सशक्तिकरण को बिना प्रश्न किए स्वीकार नहीं करती। नीना के भीतर गहरी असुरक्षा, अहं और भावनात्मक रिक्तता भी है। वह पुरुष को ‘खरीद’ कर अपने जीवन में स्थान देती है, पर यह सत्ता उसे स्थायी संतोष नहीं देती। यहाँ स्त्री सत्ता में है, पर यह सत्ता मानवीय संबंधों को वस्तु में बदल देती है। इस कहानी में स्त्री स्वतंत्र तो है, पर पूर्ण नहीं। नीना का अकेलापन और आत्मसंघर्ष यह संकेत देता है कि आर्थिक स्वतंत्रता अपने आप में स्त्री की मुक्ति की गारंटी नहीं है।

‘तीन किलो की छोरी’ कहानी: ग्रामीण नारी का संघर्ष और सामाजिक यथार्थ

‘तीन किलो की छोरी’ कहानी ग्रामीण भारत की सामाजिक-आर्थिक विसंगतियों और स्त्री जीवन के कठिन यथार्थ को उजागर करती है। ग्राम सेविका शारदाबेन का चरित्र ग्रामीण स्त्री की आर्थिक मजबूरी, सामाजिक उपेक्षा और निरंतर संघर्ष को दर्शाता है। कहानी में नवजात शिशु का वजन ‘तीन किलो’ होना एक प्रतीक बन जाता है— एक ओर जहाँ यह जीवन के प्रति आशा का संकेत है, वहीं दूसरी ओर लिंग आधारित भेदभाव और आर्थिक विपन्नता की क्रूर सच्चाई को भी दर्शाता है।

“तीन किल्लो। पूरी तीन किल्लो। वाह री छोरी, तू तो औसत से भी जादी निकली।”

ग्रामीण समाज में लड़की का जन्म अभी भी बोझ माना जाता है। तीन किलो की स्वस्थ बच्ची होना भी तब तक अर्थपूर्ण नहीं, जब तक वह ‘छोरा’ न हो। शारदाबेन स्वयं स्त्री होते हुए भी इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था का हिस्सा है। परंतु वह इसके विरुद्ध अपनी सीमाओं के भीतर प्रतिरोध भी करती है। शारदाबेन की नौकरी उसे सीमित आर्थिक स्वतंत्रता देती है, जो उसके परिवार और विशेषकर उसके बेटे के भविष्य को बदल देती है। यहाँ स्त्री सत्ता के केंद्र में नहीं है, बल्कि सत्ता की एजेंट है। फिर भी यही सीमित सत्ता उसके आत्मसम्मान का आधार बनती है। यह कहानी ग्रामीण समाज में लिंगानुपात, बालिका के प्रति दृष्टिकोण, आर्थिक शोषण और सामाजिक कुरीतियों जैसे मुद्दों को उठाती है।

‘खरीदार’ और ‘तीन किलो की छोरी’ दोनों ही कहानियाँ नारी के संघर्ष और सशक्तिकरण को अलग-अलग सामाजिक परिवेशों में प्रस्तुत करती हैं। जहाँ ‘खरीदार’ शहरी, शिक्षित और आर्थिक रूप से संपन्न वर्ग की स्त्री की कहानी है, वहीं ‘तीन किलो की छोरी’ ग्रामीण, आर्थिक रूप से विपन्न और सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग

की स्त्री की दास्तान है। दोनों ही कहानियों में नारी की आर्थिक स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण विषय है। नीना के लिए आर्थिक सत्ता उसे पुरुषों पर वर्चस्व स्थापित करने का साधन है, जबकि शारदाबेन के लिए आर्थिक आजादी उसके और उसके परिवार के अस्तित्व की लड़ाई है।

नीना ऐ.ए.एस पास है जो पहले सहायक कमीश्रर थी और फिर गृहमंत्रालय में स्युक्त सचीव बन जाती है। इन मौकों पर उसके व्यक्तित्व में असाधारण रूप से पौरुष चमकता है और अहं से उसका व्यक्तित्व भर जाता है। नारी होते हुए भी वह पुरुषों से भी अधिक कर्मकुशल है –

“ललचाई नज़रों से भी पुरुषों ने उसे कभी नहीं देखा, अब आग्रह्य दृष्टि से देखना भी बन्ध होने लगा है। समझने लगे है कि वह विवेकशील है, कर्मकुशल है, स्त्री है तो क्या ? उसे काम करते समय उसके आदेशों का पालन करना होता है। उसको बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता, बनने की इच्छा नहीं होती।”

‘तीन किलो की छोरी’ में शारदाबेन का जीवन-संघर्ष इस कटु यथार्थ को उजागर करता है कि केवल कमाने भर से स्त्री की सामाजिक प्रतिष्ठा सुनिश्चित नहीं हो जाती; पितृसत्तात्मक मानसिकता के रहते उसकी हैसियत दोयम ही बनी रहती है। वह अपनी कमाई से बेटे की पढ़ाई का खर्च उठाती है, फिर भी घर के भीतर सम्मान और अधिकार उससे कोसों दूर हैं। पति उसकी कमाई को उसकी ‘अकड़’ का कारण मानते हुए हिंसा पर उतर आता है। “सौ रुपल्ली का भूत चढ़ गया सिर पर, हरामजादी।”³ इससे भी अधिक पीड़ादायक स्थिति तब सामने आती है जब नन्हा-सा बेटा भी पिता की नकल करते हुए माँ को नौकरी छोड़ने का आदेश देता है, जिससे स्पष्ट होता है कि पितृसत्ता की जड़ें अगली पीढ़ी में कितनी गहराई तक पैठ चुकी हैं। “छोड़ परे साली नौकरी। कल ही जाकर छुट्टी करा। हमें नहीं चाहिए तेरे सौ रुपये।”⁴ इस प्रकार शारदाबेन का चरित्र यह रेखांकित करता है कि आर्थिक आत्मनिर्भरता स्त्री-मुक्ति की आवश्यक शर्त तो है, किंतु सामाजिक चेतना में परिवर्तन के बिना वह सम्मान और सुरक्षा की गारंटी नहीं बन पाती। दोनों कहानियाँ नारी के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव की माँग करती हैं और पितृसत्तात्मक ढाँचे की आलोचना प्रस्तुत करती हैं।

मृदुला गर्ग के साहित्य में नारी विमर्श का एक जटिल आयाम यह है कि वे स्त्री के शोषण में स्वयं स्त्री की भूमिका को भी उजागर करती हैं। इस कथा में मनुबेन पितृसत्ता की एक क्रूर पैरोकार बनकर उभरती हैं, जो अपनी पोती के अस्तित्व को ही नकार देती हैं। उनका यह कथन सुन्न कर देने वाला है।

“मरने दे हरामजादी को... तीन किलो! तीन किलो! दूध है जो डीपो पर बेच आएँ... हमें पता था तीसरी भी छोरी जनेगी कमजात। डाल परे कमबख्त को।”⁵ पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की उपयोगिता केवल उसकी ‘उत्पादकता’, वह भी पुत्रोत्पादकता या ‘बाज़ार मूल्य’ या बेचने योग्य वस्तु तक सीमित है। तीसरी लड़की का जन्म एक ‘आर्थिक क्षति’ के रूप में देखा जाता है।

‘खरीदार’ और ‘तीन किलो की छोरी’ को साथ पढ़ने पर स्पष्ट होता है कि मृदुला गर्ग स्त्री को एक ही रूप में नहीं देखतीं। नीना और शारदाबेन स्त्री के दो अलग ध्रुव हैं। नीना के पास आर्थिक और सामाजिक शक्ति है, पर वह नैतिक और भावनात्मक द्वंद्व से ग्रस्त है। शारदाबेन के पास शक्ति सीमित है, पर उसके जीवन में श्रम, करुणा और सामूहिक जिम्मेदारी का भाव अधिक प्रबल है।

नीना की समस्या आधुनिक शहरी अकेलेपन और उपभोक्तावादी मानसिकता से जुड़ी है, जबकि शारदाबेन की समस्या अस्तित्व और जीविका से। दोनों ही स्त्रियाँ पितृसत्ता से टकराती हैं, पर उनके संघर्ष के रूप अलग हैं। मृदुला गर्ग की भाषा दोनों कहानियों में भिन्न है। ‘खरीदार’ की भाषा शहरी और आत्मविश्लेषणात्मक है, जबकि ‘तीन किलो की छोरी’ की भाषा लोकबोली और संवादप्रधान। यह भाषिक भिन्नता भी स्त्री के भिन्न सामाजिक ध्रुवों को रेखांकित करती है।

निष्कर्ष

मृदुला गर्ग की कहानियाँ 'खरीदार' और 'तीन किलो की छोरी' नारीवादी विमर्श के दो अलग-अलग ध्रुवों को प्रस्तुत करते हुए भी एक सूत्र में बँधी हुई हैं—वह सूत्र है नारी की मुक्ति, सम्मान और स्वायत्तता की खोज। इन कहानियों के माध्यम से लेखिका ने यह दर्शाया है कि नारी की लड़ाई केवल पुरुषों के विरुद्ध नहीं, बल्कि उन सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संरचनाओं के विरुद्ध भी है जो उसे दोगुने दर्जे का जीवन जीने के लिए विवश करती हैं। 'खरीदार' में नीना का आत्मविश्वास और 'तीन किलो की छोरी' में शारदाबेन का संघर्ष, दोनों ही नारी के अदम्य साहस और जीवन-शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। मृदुला गर्ग का साहित्य इस बात का प्रमाण है कि नारीवादी चेतना केवल शहरी, शिक्षित वर्ग तक सीमित नहीं है, बल्कि ग्रामीण और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों में भी सक्रिय रूप से मौजूद है। मृदुला गर्ग का साहित्य इस बात का साक्ष्य है कि नारी अब केवल 'भोग्या' या 'माता' नहीं है, बल्कि वह एक 'स्वतंत्र चेतना' है। इन कहानियों के माध्यम से लेखिका ने संदेश दिया है कि आर्थिक स्वावलंबन ही वह कुंजी है जो पितृसत्ता के तालों को खोल सकती है। इन कहानियों का महत्व इसी में निहित है कि वे नारी के बहाने सम्पूर्ण मानवीय मूल्यों और सामाजिक न्याय के प्रश्न को उठाती हैं, और पाठकों को एक बेहतर, समतामूलक समाज के निर्माण के लिए प्रेरित करती हैं।

संदर्भ

1. वर्मा, महादेवी, स्त्री का अर्थ स्वातंत्र्य का प्रश्न, सं. कालिया, ममता, महिला लेखन के सौ वर्ष ,लोकभरती प्रकाशन ,प्रयागराज, 2023, पृ. 25
2. गर्ग, मृदुला ग्लेशियर से, प्रभात प्रकाशन , 1980, पृ .86
3. गर्ग, मृदुला , तीन किलो की छोरी, कालिया, ममता, महिला लेखन के सौ वर्ष ,लोकभरती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023 पृ. 302
4. वही
5. वही
6. वही

ईमेल: juliya.emmanuel@gmail. com

मोबाइल: 9496291939



‘विमल मित्र’ के उपन्यास ‘चार आँखों का खेल’ का सामाजिक अध्ययन

सुशीला बाणी

हिंदी शोधार्थी,

एस.एस.जे.विश्वविद्यालय अल्मोड़ा

‘विमल मित्र’ का सामान्य परिचय

बांग्ला उपन्यासकार ‘विमल मित्र जी’ का जन्म 18 मार्च 1912 ईस्वी में कोलकाता के सम्भ्रांत परिवार में हुआ। बांग्ला साहित्य तथा हिंदी साहित्य को गौरव के शिखर पर पहुँचाने का श्रेय जिन साहित्यकारों को दिया जाता है, उनमें विमल मित्र का नाम भी सम्मानपूर्वक लिया जाता है। मित्र जी ने स्वतंत्र लेखन कार्य किया। उन्होंने एक साक्षात्कार के दौरान कहा भी कि “सरकारी नौकरी एक दासता है, और मैं इस दासता को स्वीकार नहीं कर सकता।” विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने अपने सिद्धांतों के अनुसार ही कार्य किया। बांग्ला तथा हिंदी साहित्य में उन्होंने कई उपन्यास तथा कहानियाँ लिखी। इनके प्रसिद्ध उपन्यास साहब बीबी गुलाम, मुजरिम हाजिर है, खरीदी कोठियों के मोल, बेगम मेरी विश्वास है। साहित्य का यह चमकता सितारा इस जगत को 2 दिसम्बर 1991 को विदा कर देता है।

‘चार आँखों का खेल’ उपन्यास का सामाजिक अध्ययन

उपन्यास जिसे सम्पूर्ण मानव जीवन का यथार्थ चित्र कहा जाता है। यदि बात करें विमल मित्र की तो उन्होंने अपने उपन्यासों में मानव जीवन को तथा इस समाज के यथार्थ चित्र को उकेरा है। हिंदी साहित्य में मित्र जी के चर्चित सामाजिक उपन्यासों में ‘चार आँखों का खेल’ भी पाठकों के द्वारा बहुत पसंद किया गया है। जिसमें एक आँगल समुदाय की कहानी है। इस कहानी की वस्तु बिहार राज्य के चक्रधरपुर की है। नौकरी के दौरान लेखक जब चक्रधरपुर में रहते थे, तो उनके पड़ोस में डीसा परिवार रहता था। वह परिवार एक समय में आँगल समुदाय के प्रतिष्ठित परिवारों में गिना जाता था। समय के साथ-साथ ऐसी घटनाएं घटती हैं, कि उस परिवार का अंत उनके सामने-सामने हो जाता है। इस उपन्यास में मुख्य पात्र मिसेज डीसा है जो पति के मृत्यु उपरांत अपने बेटे की उम्र वाले लड़के फ्रेडी से प्रेम करने लगती है। यहीं से डीसा का जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। मित्र जी ने इस उपन्यास में तत्कालीन समाज को चित्रित किया है। यह पूरा घटनाक्रम लेखक के आँखों के सामने घटित होता है। जिसे लेखक अपनी शैली में प्रस्तुत करता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। किसी ने सत्य ही कहा है कि समाज मनुष्य के जीवन का दर्पण होता है, जो उसके द्वारा किए गए कार्यों को उसे स्मरण कराता रहता है। इस समाज में उसके द्वारा ही कुछ नियम बनाये गए हैं। इनकी व्यवस्था स्वयं मनुष्य करता है। चार आँखों का खेल उपन्यास में हम देखते हैं कि समाज कई प्रकार के लोगों से निर्मित

होता है। कुछ अच्छे, कुछ बुरे, पर उनमें धीरे-धीरे सामंजस्य बैठ ही जाता है। ‘चार आँखों का खेल’ उपन्यास में परिवार में आजीविका प्राप्त कर घर को सुचारू रूप से चलाने का कार्य मिस्टर डीसा तथा मिसेज डीसा करते हैं। एक दिन मिस्टर डीसा की ड्यूटी के दौरान आकस्मिक मृत्यु की सूचना डीसा परिवार को मिलती है। जिससे पूरा डीसा परिवार टूट जाता है। उनकी मृत्यु से मिसेज डीसा काफी हद तक आहत होती है। वह कुछ समय के लिए चक्रधरपुर छोड़कर खड़कपुर चली जाती है। मिसेज डीसा खड़कपुर अपने अकेलेपन से राहत पाने के लिए जाती है। इसी बीच वहां वह मिस्टर डीसा के भतीजे फ्रेडी के प्रति आकर्षित हो जाती है। यह आकर्षण ही अंततः उनके परिवार के विघटन का कारण बनता है। इस आकर्षण से परिवार में रह रहे उनके बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ता है, परंतु अपनी मां की खुशी के लिए वह शांत रहते हैं। फ्रेडी भी कहीं ना कहीं से अपने परिवार से अकेला होता है, तो मिसेज डीसा का यह आकर्षण उसे सहानुभूति प्रदान करता है। जिसे वह उस समय स्वेच्छा से स्वीकार कर लेता है।

समय के साथ फ्रेडी में बदलाव आना शुरू हो जाता है। वह एक दिन एक दूसरी लड़की नैसी से प्रेम करने लगता है। फ्रेडी का नैसी के साथ चले जाना मिसेज डीसा बिल्कुल भी बर्दाश्त नहीं कर पाती है, और पागलों सी हरकतें करने लग जाती है। इससे परिवार का माहौल काफी तनावपूर्ण रहता है, इसी तनाव के चलते एक दिन चार्ली की हत्या हो जाती है। आरोपी फ्रेडी होता है, परंतु उसका गुनाह मिसेज डीसा अपने ऊपर ले लेती है। डीसा फ्रेडी को रिहा करवा देती है। मिसेज डीसा को अंततः पछतावा होता है कि उसने क्या कर दिया। वो कहती भी है कि-

“मैंने तो पहले ही कहा है कि मैं इंसान नहीं हैवान हूँ। अपने स्वभाव के चलते बहुत दुःख पाया है मैंने। पर किसी भी तरह अपने स्वभाव को बदल नहीं सकी। आत्महत्या भी नहीं कर सकी। मैं नीच हूँ दुष्चरित्र हूँ। मैं पत्नी, माँ, आंटी होने योग्य नहीं हूँ।”¹

देखा जाए तो मनुष्य की एक छोटी सी गलती या कहें कि मनुष्य जब भी समाज में बनाए गए नियमों के विरुद्ध कोई भी कार्य करता है, तो उसका पतन निश्चय ही होता है। मित्र जी के इस उपन्यास में देखने को मिलता है कि हमारी एक गलती या कहें कि सब कुछ जानते हुए भी की गई भूल हमारे जीवन को अस्त-व्यस्त ही नहीं करती समाप्त भी कर देती है। मनुष्य यदि अपने भविष्य में होने वाली घटनाओं के प्रति जागरूक रहता तो शायद कभी भी उसे असंभावित घटनाओं का शिकार नहीं होना पड़ता।

जब भी मनुष्य अपनी इच्छाओं की प्राप्ति कर लेता है तो उसमें विकार आने शुरू हो जाते हैं। वह भूल जाता है कि वह भी दूसरों की भाँति ही एक सामान्य प्राणी है। चाहे मनुष्य कुछ भी प्राप्त कर ले उसे निर्वाह इसी समाज में करना होता है। मानवीय गुणों के साथ मनुष्य में पाश्चिक प्रवृत्ति भी होती है, परंतु वह उन पर नियंत्रण रखता है। जो मनुष्य स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख पाता है वह पाश्चिक प्रवृत्ति का शिकार हो जाता है। अंततः अपना ही अनिष्ट कर बैठता है। यह कहना बिल्कुल भी अनुचित नहीं होगा कि भारत के अलावा अन्य देशों में वर्ग संघर्ष नहीं है। विश्व के सभी देशों में वर्ग संघर्ष की घटनाएं देखने को मिलती हैं। मिसेज डीसा अपने स्तर से नीचे के लोगों से सम्पर्क में रहना बिल्कुल भी नहीं चाहती-

“फ्रेडी- नैसी के बारे में इस तरह की बात मत करो आंटी वो मेरी फ्रेंड है।

मिसेज डीसा- होने दो फ्रेंड उसका फादर रेलवे में किस पद पर है जानते हो।

फ्रेडी- तुम शायद पहचानती नहीं उसे आंटी उसका फादर तो यार्ड फोरमैन है।

मिसेज डीसा- नहीं और पहचानने की जरूरत भी नहीं है मुझे। नॉन गैजेटेड रैंक के लोगों के साथ मिलना जुलना मैं नहीं चाहती तुम यहाँ से चले चलो फ्रेडी।”²

दूसरी ओर हम देखते हैं कि हमारे समाज में भी कुछ लोग दूसरों का दुख दर्द कम करने के बजाय उसमें अपना मनोरंजन ढूंढते हैं। जब डीसा परिवार दर्द में होता है तब कोई भी उनका हाल जानने उनके पास नहीं जाते। तारक बाबू जैसे लोग बस नई खबर का इंतजार करते हैं और रोज कोर्ट जाकर अपना दिन व्यतीत करते। जब डीसा और फ्रेडी के बारे में लोगों को पता चलता है तो उनकी एक ही बात पर चर्चा होती। अंततः सबका एक ही वाक्य होता कि इनके समाज में तो ऐसा होते रहता है। यह सब घटनाएं इन लोगों के लिए साधारण बात है-

“सचमुच ऐसा लगता था जैसे उन दिनों चक्रधरपुर के लोगों की नींद उड़ गयी थी। जहाँ जो मिलता चाहे ड्राइवर से ड्राइवर हो अथवा गार्ड से गार्ड बस यही चर्चा शुरू हो जाती है। फ्रेडी के केस का क्या हुआ। जैसे फांसी हो जाने से सबको एक अद्भुत खुशी मिल जाएगी अर्थात् बहुत लोग चाहते थे कि केस लंबा चलता रहे और यह रोमांच बना रहे, कौतूहल जागता रहे, नित्य प्रति केस ज़रा और जटिल हो जाये। अपने को उन से उच्च समझने वालों की कुछ और निंदनीय बातें सुनने को मिले।”³

अमूमन देखा गया है कि घर की अर्थव्यवस्था जिस व्यक्ति पर निर्भर होती है उसके अचानक चले जाने पर कई समस्याएं परिवार में उत्पन्न हो जाती हैं। एक समय था जब डीसा परिवार में हर दिन पार्टियाँ होती थीं। घर का सारा काम नौकर करते थे। मिस्टर डीसा के जाने के बाद मिसेज डीसा घर के कुछ-कुछ काम स्वयं करने लग जाती है। घर में कुछ नौकरों को भी छुट्टी दे देती है। घर का सामान स्वयं लाती है-

“बेचारी मेम साहब जब तक जॉन जिन्दा था उन्हें इस तरह प्राविजन खरीदने खुद नहीं जाना पड़ा कभी भी। तब तो टेलीफोन कर देती थी स्टोर में और वह स्वयं साइकिल पर पहुंचा देते थे। महीने की आखिरी में पे में से बिल चुका दिया जाता था। जॉन की मृत्यु के बाद टेलीफोन नहीं रहा। रेलवे में परिवार का कोई नौकरी नहीं करता था।”⁴

‘चार आँखों का खेल’ उपन्यास का पूरा घटनाक्रम एक स्त्री की भोग प्रवृत्ति का ही परिणाम होता है। इस कहानी की मुख्य पात्र डीसा चाहती तो अपने पति की मृत्यु के उपरांत सम्मान पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकती थी। यदि उसे विवाह करने की इच्छा थी तो अपने समुदाय के किसी भी हम उम्र व्यक्ति से कर सकती थी। डीसा ऐसे व्यक्ति के प्रति आकर्षित होती है, जो उससे उम्र में काफी छोटा होता है। डीसा अपनी वासना की तृप्ति उस व्यक्ति में ढूंढने लगती है तथा उसकी यही वासना उसके विनाश का कारण बनता है। हम अपने चारों ओर देखेंगे तो हमें अनेक डीसा मिलेंगी, जो सिर्फ अपने बारे में सोचती हैं। ऐसे लोगों के उठाये गये कदमों से उनका पूरा परिवार अस्त-व्यस्त ही नहीं होगा बल्कि समाज पर भी बुरा असर देखने को मिलता है।

उपन्यास के पात्र फ्रेडी की बात करें तो भोग लालसा उसमें भी होती है। अपनी उम्र से बड़ी स्त्री के साथ शारीरिक सम्बन्ध बनाना उसकी भोग लालसा को दर्शाती है। जब उसकी नौकरी लग जाती है तो वह नेन्सी के साथ शादी कर चला जाता है। उसके चरित्र से स्पष्ट होता है कि वह कामुख प्रवृत्ति का व्यक्ति था। यदि वह चाहता तो एक परिवार को टूटने से बचा सकता था। वह सिर्फ अपने बारे में सोचता है। वहीं डीसा भले ही भोग वासना में लिप्त थी, परन्तु वह फ्रेडी में अपने पति की छवि देखने लगती है। पूरे उपन्यास का घटनाक्रम भोग वासना की लिप्तता का परिणाम है। डीसा की काम प्रवृत्ति जाग्रत नहीं होती तो कहानी का परिणाम कुछ अलग होता। एक खुशहाल परिवार इस तरह नहीं बिखरता।

निष्कर्ष

‘चार आँखों का खेल’ उपन्यास एक सामाजिक उपन्यास है। मित्र जी ने इसमें समाज की विषमताओं को ही नहीं प्रस्तुत किया, बल्कि एक स्त्री के वासना से युक्त प्रेम की पराकाष्ठा को भी प्रस्तुत किया है। मनुष्य सम्बन्धों में जकड़ा हुआ होता है। जिस दिन वह इन बेड़ियों से मुक्त होता है उस दिन समाज उसे तिरस्कृत भाव से देखता है। यही

हमारे इस उपन्यास में भी देखने को मिलता है। हमारे समाज में वर्ग भेद हमेशा से रहा है, जिसके चलते ना जाने कितने मासूमों को अपमानित होना पड़ता है। हम इस उपन्यास में देखते हैं कि आँगल समुदाय में कुछ स्त्रियां पति की मृत्यु उपरांत अपने छोटे-छोटे बच्चों को अकेले छोड़कर दूसरे पुरुष से विवाह कर लेती हैं। वे अपने नए जीवन में इस प्रकार मग्न हो जाती हैं और उनके बच्चे असहाय से इधर-उधर भटकते रहते हैं यही भटकाव फ्रेडी के जीवन में रहा। हमारे समाज में हमेशा से एक अपवाद देखा गया है कि हर कोई एक दूसरे पर आरोप प्रत्यारोप लगाते रहते हैं। चाहे वह किसी व्यक्ति के चरित्र को लेकर हो या किसी व्यक्ति के धर्म को लेकर। इस उपन्यास में जिस प्रकार की घटना होती है वह भले ही आँगल समुदाय की थी, परंतु ऐसी कितनी ही घटनाएं प्रत्येक समाज में आए दिन होती रहती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को यही लगता है कि यह हमारे समुदाय में नहीं होता। हर कोई अपने समुदाय की बुराइयों और कमियों पर पर्दा डालने की कोशिश करता है।

देखा जाय तो इस कहानी में नया मोड़ तब आता है, जब मिसेज डीसा अकेले होती है। मिस्टर डीसा की याद में दुखी होती है। उसी अकेलेपन में वह फ्रेडी के प्रति आकर्षित होती है, और सब कुछ भूल जाती है। उसका यह कदम इस कहानी के घटनाक्रम को ही बदल देती है। यदि उसे पता होता कि उसका यह निर्णय कितना भयानक होगा तो वह कभी इस ओर कदम नहीं बढ़ाती। मित्र जी इस उपन्यास के माध्यम से समाज को उसके वर्तमान में किये गए कार्यों का भविष्य में पड़ने वाले प्रभाव से रूबरू कराना चाहते हैं। उन्होंने दिखाया है किस प्रकार से परिवार टूटते हैं, मनुष्य का एक गलत निर्णय उसके पूरे परिवार को ही नहीं समाज को भी प्रभावित करता है।

सन्दर्भ सूची

1. 'चार आँखों का खेल' 'विमल मित्र' उपन्यास लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 1979, पृष्ठ संख्या-120
2. वही पृष्ठ संख्या-34
3. वही पृष्ठ संख्या-72
4. वही पृष्ठ संख्या-54

मोबाइल न.- 9012406665

Sushila.bani@gmail.com



THE ROLE OF SOFT SKILLS IN EFFECTIVE CROSS-LINGUISTIC TRANSLATION

Dr.R.REKHA ,

Assistant Professor, Department of BBA,

Dr.VIDHYA .P

Asso.Prof&Head,Dept. Of. BCOM CS,

Dr SAJITHA J

Asst.Prof&Head,Dept of Other Languages,
Sri Ramakrishna College of Arts&Science

ABSTRACT

This paper explores the intersection of soft skills and translation practices across languages. While translation is often viewed as a technical linguistic process, this study argues that soft skills such as communication competence, cultural sensitivity, emotional intelligence, critical thinking, and adaptability play a crucial role in achieving accuracy and contextual equivalence. The paper adopts a theoretical approach, drawing from translation studies, applied linguistics, and soft skills research to demonstrate how non-technical competencies enhance translation quality and intercultural communication.

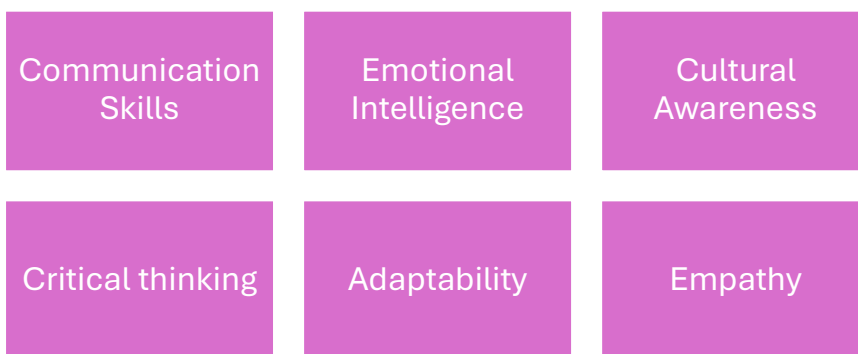
KEY WORDS:Communication,Emotional Intelligence,critical thinking,translation,softskills.

1.INTRODUCTION

Translation is not merely the substitution of words from one language to another; it is a complex act of meaning-making influenced by cultural, emotional, and interpersonal factors. In multilingual and multicultural contexts, translators must go beyond linguistic proficiency and employ soft skills to convey intent, tone, and cultural nuances. This paper highlights the growing relevance of soft skills in translation in academic, professional, and digital communication contexts.

2.CONCEPT OF SOFT SKILLS

Soft skills refer to a set of interpersonal, cognitive, and emotional competencies that enable effective interaction and problem-solving. Key soft skills relevant to translation include



These skills complement hard linguistic skills and significantly influence the translator's decision-making process.

3.TRANSLATION AS A HUMAN-CENTERED ACTIVITY

Translation involves interpretation, negotiation of meaning, and audience awareness. Human judgment is essential when dealing with idioms, metaphors, culturally bound expressions, and pragmatic meanings. Soft skills help translators:

3.1 Interpret authorial intent

Interpreting authorial intent involves understanding the purpose, viewpoint, and underlying message of the source text. Soft skills help translators capture implied meanings beyond literal wording.

3.2 Maintain tone and register

Maintaining tone and register ensures that the level of formality, style, and emotional effect of the original text is preserved in the target language. This requires sensitivity to context and audience expectations.

3.3 Avoid cultural misrepresentation

Avoiding cultural misrepresentation demands awareness of cultural norms, values, and symbolic meanings. Soft skills enable translators to prevent stereotypes and ensure respectful cross-cultural communication.

This section establishes translation as an inherently human-centered and socially embedded practice.

4.ROLE OF SOFT SKILLS IN CROSS-LINGUISTIC TRANSLATION

4.1 Communication Skills

Effective translators must understand both explicit and implicit messages. Strong communication skills help in producing translations that are coherent, audience-appropriate, and purpose-driven.

4.2 Cultural Sensitivity and Intercultural Competence

Cultural awareness enables translators to bridge cultural gaps and prevent misinterpretation. Soft skills support ethical translation practices by respecting cultural identities.

4.3 Emotional Intelligence

Emotional intelligence allows translators to recognize emotions embedded in texts such as literary works, political speeches, and media discourse, ensuring emotional equivalence in the target language.

4.4 Critical Thinking and Decision-Making

Translation often involves choosing between multiple possible equivalents. Critical thinking enables translators to evaluate context, purpose, and audience expectations.

5. SOFT SKILLS IN TRANSLATION EDUCATION AND TRAINING

Traditional translation training focuses heavily on grammar and vocabulary. Integrating soft skills development into translation pedagogy can:

5.1 Improve translation accuracy

Developing soft skills helps translators understand context, intent, and cultural nuances, leading to more precise and meaningful translations. This reduces errors caused by literal interpretation and miscommunication.

5.2 Enhance professional competence

Soft skills such as communication, adaptability, and ethical awareness strengthen a translator's ability to work effectively with clients and diverse texts. These skills contribute to overall professionalism and credibility in the translation field.

5.3 Prepare students for real-world translation challenges

Training in soft skills equips students to handle practical issues like time constraints, cultural sensitivity, and ambiguous texts. This preparation bridges the gap between academic learning and professional translation practice.

This section advocates curriculum reform that includes communication training, intercultural studies, and reflective learning.

6. IMPLICATIONS FOR PROFESSIONAL TRANSLATION PRACTICE

In professional domains such as legal, medical, literary, and media translation, soft skills are essential for:

6.1 Client interaction

Effective client interaction requires clear communication to understand expectations, purpose, and target audience of the translation. Strong interpersonal skills help translators build trust and deliver satisfactory outcomes.

6.2 Ethical decision-making

Ethical decision-making enables translators to maintain accuracy, confidentiality, and cultural respect while handling sensitive content. Soft skills support responsible judgment when facing conflicting interpretations or ethical dilemmas.

6.3 Managing ambiguity and time constraints

Translators often encounter unclear source texts and strict deadlines that demand flexibility and composure. Soft skills such as adaptability and stress management help maintain quality under pressure.

Soft skills contribute to the translator's credibility, adaptability, and long-term success.

CONCLUSION

The paper concludes that soft skills are indispensable in the translation process. They enable translators to go beyond linguistic transfer and achieve meaningful, culturally appropriate, and context-sensitive communication. Recognizing and integrating soft skills into translation theory and practice can significantly enhance cross-linguistic understanding in a globalized world.

REFERENCES

1. **Bassnett, S. (2014).** *Translation studies* (4th ed.). Routledge. Routledge is a leading academic publisher in humanities. This book is a foundational text in translation studies and supports theoretical discussions on cultural and human aspects of translation.
2. **Chesterman, A. (2016).** *Memes of translation: The spread of ideas in translation theory* (Rev. ed.). John Benjamins. John Benjamins is a highly reputed publisher specializing in linguistics and translation studies. The book discusses translator decision-making and ethics, closely linked to soft skills.

3. **Hurtado Albir, A. (2017).** Translation competence and translation training. *The Interpreter and Translator Trainer*, 11(1), 1–13.
<https://doi.org/10.1080/1750399X.2016.1278167>. This peer-reviewed journal focuses on translator education and competence, making it ideal for discussing soft skills in translation training.
4. **Pym, A. (2012).** *On translator ethics: Principles for mediation between cultures*. John Benjamins. This work highlights ethical decision-making and intercultural mediation, which depend strongly on soft skills such as empathy and cultural sensitivity.
5. **Kelly, D. (2005).** *A handbook for translator trainers*. St. Jerome Publishing. This book emphasizes translator competence development, including interpersonal and communicative skills essential for effective translation practice.
6. **House, J. (2015).** *Translation quality assessment: Past and present* (2nd ed.). Routledge. Routledge publications like this explore pragmatic and discourse-level equivalence, reinforcing the need for soft skills in quality translation.
7. **Katan, D. (2014).** *Translating cultures: An introduction for translators, interpreters and mediators* (2nd ed.). Routledge. This book strongly links intercultural competence and communication skills with translation, directly supporting the role of soft skills.
8. **Goleman, D. (1998).** *Working with emotional intelligence*. Bantam Books. Though not a translation journal, this influential work on emotional intelligence provides a theoretical foundation for understanding emotional awareness in translation tasks.
9. **Vlachopoulos, D. (2020).** Soft skills development in higher education. *Journal of Education and Learning*, 9(3), 1–9. This journal supports interdisciplinary research on skill development and is useful for connecting soft skills theory with translation education.
10. **Bielsa, E., & Bassnett, S. (2009).** *Translation in global news*. Routledge. This book demonstrates how translators rely on judgment, adaptability, and communication skills when handling cross-cultural media texts.



जनजातीय क्रांति के महानायक : बिरसा मुंडा

डॉ. शकुन्तला प्रजापति

सहायक प्राध्यापक, हिंदी

पी.एम.सी.ओ.ई. शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश :

भारतीय जनजाति समाज का इतिहास सदैव से ही गौरवशाली रहा है। उन्होंने कभी भी अंग्रेजों की दासता स्वीकार नहीं की। जब-जब अंग्रेजी शासन ने अपनी सत्ता का विस्तार करना चाहा, तब तब जनजातीय समाज की चुनौती का सामना करना पड़ा। संथाल क्रांति, भील क्रांति, कोल क्रांति एवं उलगुलन क्रांति आदि स्वतंत्रता संग्राम में जनजातीय भागीदारी को दर्शाती है।

भारत देश के इतिहासकारों की विदेशोन्मुखी मानसिकता के कारण इतिहास तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया गया है। स्वतंत्रता संग्राम एवं उसके पश्चात कुछ साहित्यकारों ने अलग-अलग जनजातियों के स्वतंत्रता संग्राम में योगदान का उल्लेख किया है। स्वतंत्रता की अमृत काल के दौरान कुछ नए क्रांतिकारी उभर कर इतिहास में दर्ज हुए और कुछ क्रांतिकारियों के योगदान को नए सिरे से अंकित किया गया। इतिहासकारों एवं लेखकों ने जनजातीय क्रांति के महानायकों में धरती आबा भगवान बिरसा मुंडा को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। बिरसा, मुंडा की त्याग, समर्पण एवं राष्ट्रभक्ति से संपूर्ण भारतवर्ष उनका कृतज्ञ है। ऐसे में जनजातीय वर्ग द्वारा श्रद्धापूर्वक उनको भगवान के रूप में याद एवं नमन किया जाना स्वाभाविक है।

मुख्य कुंजी शब्द : बिरसा, जनजातीय, धर्मांतरण, जन्म, परिवेश, अलख, सामाजिक क्रांति

प्राचीन काल से भारतवर्ष समृद्ध एवं गौरवशाली देश में अग्रणी था। यहाँ पर प्राकृतिक संसाधनों की भरमार एवं जीवनोपयोगी सामग्री की सहज उपलब्धता के कारण देशवासी आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सशक्त थे। ऐसे में अनेक दूसरे देशों की कुदृष्टि भारत पर पड़ती रही है। यवन, शक, हूण, मुगल एवं अंत में अंग्रेजों ने हमारे देश पर शासन किया। पराधीनता की जंजीरों में जकड़े देशवासी आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक शोषण का शिकार होते रहे। शोषण से मुक्त होने का संकल्प लेकर राष्ट्र प्रेमी समय-समय पर क्रांति की मशाल जलाते रहे। शोषणकारी यह भली-भाँति जानते थे कि भारतवासियों के ज्ञान एवं संस्कृति को नष्ट किए बिना उन पर शासन नहीं किया जा सकता है। दमनकारियों के इस उद्देश्य के खिलाफ अनेक महापुरुषों ने हुंकार भरी, जिन्हें भारतीय जनमानस आज भी श्रद्धा के साथ नमन करते हैं। भारतीय स्वतंत्रता समर में रणबाँकुरों ने सहज ही अपने प्राणों की आहुति दे दी। इनमें कुछ को तात्कालिक इतिहासकारों द्वारा अत्याधिक प्रतिष्ठा प्रदान की गई। अधिकांशतः क्रांतिवीरों को इतिहास के पन्नों में स्थान नहीं मिला या फिर उनके योगदान को कम आँका गया।

स्वतंत्रता संग्राम में समाज के उच्च वर्ग के साथी, मध्यम एवं निम्न वर्ग के क्रांतिकारी कंधे से कंधा मिलाकर साथ चले और देश को पराधीनता के बंधन से मुक्त कराया। आधुनिक भारत जब क्षीण होते जीवन मूल्यों को बचाए रखने के लिए परंपरा एवं परंपरागत की ओर मुड़ मुड़ कर देख रहा है। परंपरा के मंथन से अमृत काल की संकल्पना को साकार करने का प्रयास किया जा रहा है। स्वतंत्रता रणबाँकुरों के संघर्ष और बलिदानों को स्मरण करते हुए निखिल महेश्वरी लिखते हैं कि “भारत ने जो स्वतंत्रता की लंबी लड़ाई लड़ी, चाहे वह क्रांति के माध्यम से हो या कांग्रेस के अहिंसा के मार्ग से, इसे हमने अनगिनत बलिदानों के बाद प्राप्त किया है इसलिए हम सभी का दायित्व बनता है कि वर्तमान पीढ़ी को, अपने पूर्वजों के उस संघर्ष को स्मरण कराते रहें। स्वतंत्रता के पश्चात जिन परिस्थितियों से हम गुजरे, उन्हें भी आज की तरुणाई को बताना ही होगा।”¹ ऐसे में हम बार-बार इतिहास के पन्नों को झाँक रहे हैं, जिसके कारण कुछ उपेक्षित क्रांतिकारियों के योगदान को जानने एवं उन्हें यथोचित स्थान प्रदान करने का प्रयास अनवरत जारी है।

पीढ़ी दर पीढ़ी उच्च वर्ग के क्रान्तिकारियों का अतिशयोक्तिपूर्ण यशोगान होता रहा, जिसके कारण आधुनिक समाज उनके योगदान की स्मृतियों को सँजोए हुए हैं। जनजातीय वर्ग सदैव समय और समाज के हाशिए पर ही रहा है। यही कारण कि इतिहास में भी उन्हें यथोचित स्थान नहीं मिला। इन्हीं महापुरुषों में एक सशक्त नाम बिरसा मुंडा का है। जनजातीय समाज से संबंधित होने के कारण बिरसा मुंडा द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन में दिया गया योगदान और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। आदिवासी क्रांतिकारियों में बिरसा मुंडा का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। उनके क्रांतिकारी साथियों एवं जनमानस ने उन्हें भगवान बिरसा मुंडा की उपाधि प्रदान की। उन्होंने मातृभूमि, प्राकृतिक संसाधनों एवं आत्म सम्मान की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर किया। अंग्रेजों ने भारतीय समाज के जातीय एवं क्षेत्रीयता के बंटवारे की खाई को गहरा करके देशवासियों एवं भारतभूमि पर शासन किया। बिरसा ने सभी मिथकों को तोड़ते हुए ‘हे मातृभूमि तेरी जय हो, सदा विजय हो’ की कामना को साकार रूप देने में जिस वीरता का परिचय दिया वह सदैव वंदनीय रहेगा। इतिहास के पन्नों में बलिदानी महापुरुषों के शिखर पर उनका नाम स्वर्णिम अक्षरों में जगमगाता रहेगा।

बिरसा का जन्म 15 नवंबर 1875 ई. में सुगना मुंडा एवं कर्मी मुंडा के घर वृहस्पतिवार के दिन हुआ, इस दिन के कारण ही उनका नाम बिरसा रखा गया। ज्योतिषी ने इस बालक को पराक्रमी एवं बुद्धिमान बताया और कहा यह आगे चलकर समस्त हिन्दू समाज का नेतृत्व करने वाला होगा परंतु उस समय की तात्कालिन सामाजिक परिवेश में गाँव के जमींदार किसान या आदिवासियों से अत्यधिक कर वसूलते और कर न चुकाने की स्थिति में उनकी जमीन हड़प लेते। इन परिस्थितियों में मुंडा समुदाय के लोग अपने बच्चों को लेकर दर-बदर भटकने को मजबूर हो जाते हैं।

बिरसा के माता-पिता भी उलिहातू गाँव छोड़कर बंबा नामक गाँव में जा बसते हैं। विवश मुंडा समुदाय जमींदारों के यहाँ रात-दिन काम करके अपना जीवन-यापन करते हैं परंतु कदम-कदम पर उनका शोषण किया जाता है। जमींदारों के शोषण से मुक्त कराने एवं उनको सम्मानजनक जीवन जीने का लालच देकर ईसाई मिशनरियाँ धर्मांतरण में लगी हुई थी और कई परिवार धर्मांतरण कर लेते हैं। बिरसा भी विवश होकर शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से बिरसा से डेविड बन जाता है। छात्रावास में रहकर पढ़ाई के दौरान बिरसा मल्लयुद्ध एवं तीरंदाजी का अभ्यास कर निपुणता प्राप्त करता है। पढ़ाई के दौरान ईसाइयों द्वारा भारतीय संस्कृति एवं धर्म की आलोचना करने पर कई बार बिरसा उग्र हो जाता है। चाईबासा मिशनरी कॉलेज में बिरसा शिक्षा प्राप्त करने को डेविड बन तो जाता है लेकिन वह अंतर्मन से अभी भी एक राष्ट्र भक्त हिन्दू ही था। जमींदारों के शोषण से मुक्ति एवं अपनी जमीन वापस पाने की लालसा में वह ईसाई बना था परंतु कुछ होता नजर नहीं आ रहा था। जिसके कारण उसके मन में घोर असंतोष था। यही असंतोष सभी मुंडा जनजाति के लोगों में व्याप्त था। हिन्दी साहित्य के ओजस्वी कवि

आचार्य देवेन्द्र देव ने अपने महाकाव्य में बिरसा मुंडा के संघर्ष, अपमान एवं जनजातियों के शोषणपूर्ण दशा और उनकी मनःस्थिति को व्याख्यायित करते हैं कि

“हड़पी आदिवासियों की थी
भूमि जमींदारों ने।
अपमानित भी किया खूब
उनके थानेदारों ने।
बातें की थीं पादरि ने
जख्मों को सिलवाने की।
छिनी ज़मीने भू-पतियों से
वापस दिलवाने की।
इसी शर्त पर सबको था
क्रिस्तानी गया बनाया।
इसी लोभवश दलितों ने था
नया धर्म अपनाया।”²

जमींदारों और ईसाई मिशनरियों की मिलीभगत से मुंडा आदिवासियों का जीवन-यापन कठिन और दयनीय होता जा रहा था। मुंडा समुदाय एक नायक की खोज में थे जो उनके विद्रोह को सही दशा एवं दिशा प्रदान कर सके। उसी समय चाईबासा में ईसाइयों की एक बड़ी सभा बुलाई गई जिसमें उनके मुख्य पादरी ने मुंडाओं को कृतघ्न, धोखेबाज एवं बेईमान कहकर संबोधित किया। समाज के लिए अपशब्दों को सुनकर बिरसा ने उनका प्रतिरोध किया तथा ईसाइयों को ठग और धोखेबाज की संज्ञा दे डाली। इससे सभी ईसाई भयभीत हो गए। विद्रोह की चिंगारी अब आग में बदल चुकी थी। इसके पश्चात बिरसा ने अपने अंतर्मन की बात सभी के समक्ष खुलकर कह डाली और अपने क्रांतिकारी तेवर से सबको स्तब्ध कर दिया। उसने कॉलेज छोड़कर अपने गाँव लौटने का निर्णय लिया। सभी साथियों ने उसको भावभीनी बिदाई दी।

विद्रोह की ज्वाला को अपने अंदर लिए मुंडाओं को जब यह बात पता चली तो उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। वे सभी उत्सव मनाने लगे क्योंकि अब उन्हें क्रांति की अलख जलाने वाला अपना नायक मिल गया था। वह हिन्दुत्व की धर्म ध्वजा का वाहक बन गया था। बिरसा ने हिन्दू धर्म ग्रंथों एवं वेदों का अध्ययन कर उसमें निहित ज्ञान को आत्मसात् किया और मातृभूमि के प्रति समर्पित होकर ईसाइयों से लोहा लेने का दृढ़ निश्चय किया। चलकद के महासम्मेलन में बिरसा ने नारा दिया- “अबुआ दिशोम, अबुआ राज” अर्थात् अपना देश, अपना शासन के द्वारा क्रांति का शंखनाद किया। महासम्मेलन में अपने समाज के द्वारा ब्राह्मणों, महाजनों, जमींदारों एवं सामंतों के लिए बेगार नहीं किए जाने का निर्णय किया। उन्होंने सरकार से मुंडाओं को की जमीन वापस करने की मांग की तथा अन्य समुदाय की भाँति मुंडाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएँ एवं अन्य नागरिक अधिकार दिए जाने की पुरजोर पैरवी की। बिरसा ने सरकार से धर्मांतरण तथा हिंदू देवी-देवताओं का अपमान रोकने का आह्वान किया। निखिल महेश्वरी ने ‘राष्ट्रीयता के अमृत पुष्प’ पुस्तक में बिरसा के द्वारा आदिवासी समुदाय को उनके अधिकारों से जागरूक करने के प्रयास को उल्लेखित करते हुए लिखते हैं कि “स्वतंत्रता आंदोलनों एवं जनजातीय समाज के वे ईसाइयों द्वारा हो रहे धर्मांतरण का विरोध कर जनजातीय समाज को अपने धर्म, संस्कृति एवं परंपराओं पर दृढ़ रहने के संदेश दे गए। उन्होंने सामाजिक सुधार, स्वच्छता एवं शिक्षा के लिए समाज को जागरूक किया। बिरसा ने आर्थिक सुधार में शोषण से मुक्ति एवं बेगारी प्रथा के विरुद्ध आंदोलन

किया, जिसके कारण जमींदारों, जागीरदारों के घरों एवं खेती में कार्य करने वाले लोग आना बंद हो गए।”³ इस प्रकार महासम्मेलन में बिरसा के इस उद्बोधन ने मुंडा समुदाय को सामाजिक क्रांति के लिए प्रेरित किया।

चलकद आंदोलन की इस घटना के पश्चात बिरसा को आभास हो गया कि अंग्रेज घात लगाकर हमला करेंगे और ऐसा ही हुआ। बिरसा को अंग्रेजी सैनिकों ने पकड़ लिया। मुंडा वीरों ने अपने नायक को छुड़ाने के लिए युद्ध किया, कई सैनिक मारे गए परंतु बिरसा को मुक्त नहीं करा पाए। बिरसा पर मुकदमा चलाया गया, लेकिन पुलिस द्वारा लगाए गए आरोप सिद्ध न होने पर उन्हें कारागार से रिहा कर दिया जाता है।

बिरसा कारागार से वापस आने के बाद क्रांति को नया रूप देते हैं। वे मंदिरों में अपने समाज के लोगों का प्रवेश सुनिश्चित करते हैं। जिन्हें ब्राह्मण वर्ग द्वारा अस्पृश्य मानकर मंदिर में प्रवेश पर रोक लगा रखी थी। उन्होंने जगन्नाथपुरी मंदिर में प्रचलित बलि प्रथा को बंद करवाया। बिरसा ने पौराणिक एवं आयुर्वेदिक ग्रंथों का अध्ययन करके ज्ञान प्राप्त किया था, जिसके कारण अपने जनजातीय समाज में फैले अंधविश्वास एवं रूढ़ियों का पुरजोर विरोध किया एवं अपने उपदेशों के माध्यम से धार्मिक कुरीतियों के प्रति लोगों को जागृत किया एवं अनेक रोगों से ग्रसित आदिवासियों को आयुर्वेद उपचार से निरोग करते हुए ढोंगियों के कुचक्र से बचने का आह्वान किया, जिसके कारण जनजातीय लोग बिरसा को ‘भगवान’ मानने लगे।

बिरसा का अपने लोगों के प्रति समर्पण और त्याग की भावना तथा शोषण के खिलाफ विद्रोह करने के साहस को देखते हुए जनजातीय समुदाय एकजुट होने लगा। भारतीय संस्कृति में ही आत्मसम्मान और संगठन शक्ति की संकल्पना विद्यमान है, जिसके कारण भारतीयों में डटकर विकट परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति होती है। इस संदर्भ में डॉ. सी. पी. गुप्ता लिखते हैं कि “भारतीय संस्कृति की संपन्नता, समृद्धता और सर्वग्राह्यता का ही यह प्रतिफल था कि इस संस्कृति ने विदेशी आक्रान्ताओं को झंझावात के रूप में समझ कर कुछ क्षण के लिए सिर झुका दिया और जैसे ही झंझावात निकला वह पुनः उसी गौरव के साथ खड़ी हो गई और आज भी टिकी हुई है।”⁴ भारतीय संस्कृति में रचे-बसे बिरसा ने स्वतंत्रता आंदोलन को नए सिरे से प्रारंभ करने के लिए जनजातीय संगठन को मजबूत किया। संगठन में लोगों की संख्या बढ़ाकर उन्हें पृथक-पृथक दायित्व सौंपे। इस दौरान बिरसा ने डोबरी नामक स्थान की ओर प्रस्थान किया, उस स्थान पर केवल आदिवासी ही प्रवेश या निवास करते थे। वहीं उन्होंने ईसाइयों के पर्व के दौरान चर्च पर हमला करने की योजना बनाई। हमले में सभी अंग्रेजों को मार दिया गया एवं उनके वाहनों में आग लगा दी गई। इस घटना से अंग्रेजी हुकूमत की नींव हिल गई।

बिरसा हिन्दू धर्म के रक्षक एवं अपने समाज का उन्नायक बनकर उभरे। वे महिलाओं और बच्चों के प्रति स्नेह भाव रखते थे, वहीं दुश्मनों के लिए काल के समान ब्रज की तरह थे। आधुनिक हिन्दी साहित्य में महाकाव्य के प्रणेता आचार्य देवेन्द्र देव बिरसा मुंडा की वीरता का बखान करते हुए लिखते हैं

था नहीं सम्राट कोई वीर बिरसा,
एक छोटी जाति का सिरमौर था वह।
आकलन कोई करे, कैसा भी चाहे,
अपने ढंग का, किन्तु, रण-थंभौर था वह।⁵

बिरसा के वीरतापूर्ण कार्यों से प्रेरित होकर अन्य मुंडा वीर भी अंग्रेजों पर आक्रमण कर उन्हें मारने के लिए एकजुट हो गए। इस प्रकार क्रांति का स्वरूप विस्तार लेता गया। बिरसा जमींदारों के आँख की किरकिरी बना हुआ था। जमींदार समय-समय पर बिरसा की मुखबिरी करते रहते और अंततः अंग्रेजों ने बिरसा को गिरफ्तार कर लिया गया, जहाँ बंदीगृह में संदिग्ध हालत में उन्होंने अंतिम सांस ली।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बिरसा बाल्यावस्था से ही ओजस्वी थे। पारिवारिक एवं सामाजिक परिस्थितियों ने उन्हें क्रांतिकारी बनने पर विवश किया। उन्होंने बुद्धि और बल से अंग्रेजों के छक्के-छुड़ा दिए। संगठन की शक्ति को पहचानकर उन्होंने समस्त हिन्दू समाज को एक साथ अंग्रेजों के विरुद्ध खड़े होने का साहस दिया। जीवनपर्यंत क्रांति की मशाल थामे जननायक के रूप में आगे बढ़ते रहे। जल, जंगल और जमीन के संरक्षण के लिए अपने लोगों को प्रेरित करते रहे। अंततः मातृभूमि के श्रीचरणों में अपना सर्वोच्च बलिदान देकर इतिहास के पन्नों में अमरत्व को प्राप्त किया।

संदर्भ सूची

1. निखिल माहेश्वरी, राष्ट्रीयता के अमृत पुष्प (2022), म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ सं. 3
2. आचार्य देवेन्द्र देव, बिरसा मुंडा (2021), रंजन पब्लिकेशन, बरेली, पृष्ठ सं. 97-98
3. निखिल माहेश्वरी, राष्ट्रीयता के अमृत पुष्प (2022), म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ सं. 44
4. डॉ. सी. पी. गुप्ता, बिरसा मुंडा और आजादी की लड़ाई, यूपीए नेशनल ई जर्नल, वाल्यूम-8, इशू-3, आई. एस. एस. एन. 2455-4375, पृष्ठ सं. 2-3
5. आचार्य देवेन्द्र देव, बिरसा मुंडा (2021), रंजन पब्लिकेशन, बरेली, पृष्ठ सं. 190

मो नं 9977358559

मेल आईडी, shakunpnt@gmail.com



निर्गुण कवि रैदास के काव्य में मानव मूल्यों की सामाजिक चेतना

भरत लाल बंशकार

शोधार्थी (पी-एच. डी. हिन्दी),

बरकत उल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल

सारांश — निर्गुण भक्ति धारा के प्रमुख संत कवि रैदास का काव्य मानव-मूल्यों की सामाजिक अभिव्यक्ति का सशक्त दस्तावेज है उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से जातिगत भेदभाव, सामाजिक असमानता और धार्मिक आडम्बरों का विरोध करते हुये समानता, करुणा, श्रम सम्मान, स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा जैसे मूल्यों की स्थापना की। रैदास का काव्य शोषित और वंचित वर्ग की चेतना जागृत करता है तथा एक आदर्श, न्यायपूर्ण और मानवीय समाज की कल्पना करता है यह शोध पत्र रैदास के काव्य में निहित मानव मूल्यों की विस्तृत विवेचना करता है।

बीज शब्द— रैदास, निर्गुण काव्य, मानवमूल्य, सामाजिक समानता, श्रम की गरिमा, वेगमपुरा।

भूमिका — निर्गुण भक्ति आन्दोलन मध्य भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक, धार्मिक और नैतिक जड़ताओं के विरुद्ध एक सशक्त जन आन्दोलन था इस आन्दोलन का उद्देश्य ईश्वर भक्ति के माध्यम से मानव मात्र की मुक्ति और सामाजिक समानता की स्थापना करना था संत रैदास इस आन्दोलन के ऐसे प्रतिनिधि कवि हैं जिन्होंने भक्ति को केवल आध्यात्मिक साधना तक सीमित न रखकर सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया है रैदास का जन्म एक तथाकथित निम्न जाति में हुआ था जिसके कारण उन्होंने समाज में व्याप्त ऊँच-नीच और छुआछूत को प्रत्यक्ष रूप से भोगा। इसी अनुभव ने उनके काव्य को मानवीय संवेदना और सामाजिक चेतना से भर दिया।

(1) **रैदास का मानवतावादी दृष्टि कोण** — रैदास का काव्य मूलतः मानव केन्द्रित है वे ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं मानव को उसका प्रत्यक्ष रूप उनके अनुसार मानव मात्र के समान है और किसी भी प्रकार का भेदभाव अधार्मिक है वे कहते हैं—

“जो हम सहरी सो मीत हमारा।”

इस पंक्ति में मानव एकता और भाईचारे का भाव निहित है रैदास के लिए मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है।

(2) **सामाजिक समानता का मूल्य** — रैदास ने जाति प्रथा का तीव्र विरोध किया वे समाज में व्याप्त ऊँच-नीच को मानवता के विरुद्ध मानते हैं उनका काव्य स्पष्ट रूप से सामाजिक समानता की माँग करता है—

“जाति-पांति पूछे नहीं कोई,
हरि को भजे सो हरि को हाई।”

यह कथन मानव मूल्यों के रूप में समान अधिकार और समान सम्मान की भावना को स्थापित करता है रैदास का यह दृष्टिकोण उस समय अत्यंत क्रांतिकारी था।

(3) **श्रम की गरिमा और मानव सम्मान** – रैदास स्वयं श्रम जीवी थे उन्होंने श्रम का अपमान नहीं, बल्कि साधना का माध्यम माना। उनका जीवन और काव्य श्रम सम्मान का प्रतीक है—

“कहे रैदास खालस चमारा।”

यह पंक्ति आत्म स्वीकृति और आत्म सम्मान का अद्भुत उदाहरण है रैदास ने यह सिद्ध किया कि मानव का मूल्य उसके कर्म और चरित्र से निर्धारित होता है न की उसकी जाति से।

(4) **धार्मिक आडम्बरों का विरोध** – संत कवि रैदास ने बाह्य आडम्बरों और रुढ़ धार्मिक कर्मकांडों के विरोधी थे वे आंतरिक शुद्धता और नैतिक जीवन को ही सच्चा धर्म मानते हैं—

“मन चंगा तो कठौती में गंगा।”

यह पंक्ति मानव मूल्य के रूप में नैतिक चेतना और आत्मशुद्धि को प्रतिष्ठित करती है।

(5) **मानव स्वतंत्रता और भयमुक्त जीवन** – संत कवि रैदास का काव्य मानव को भय शोषण और बन्धनों से मुक्त जीवन जीने की प्रेरणा देता है। वे ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जहाँ मानव स्वतंत्र और सुरक्षित हो।

(6) **बेगमपुरा – आदर्श मानवीय समाज की अवधारणा** – रैदास की बेगमपुरा की संकल्पना उनके मानव मूल्य चिन्तन की चरम अभिव्यक्ति है –

“बेगमपुरा सहर को नाउँ
दूख अंदोह नहीं तिहि ठाउँ।”

यह ऐसा समाज है जहाँ –

- कोई दुख नहीं
- कोई भय नहीं
- कोई डर नहीं
- कोई भेद नहीं

यह मानव मूल्यों पर आधारित एक आदर्श, न्यायपूर्ण और समतामूलक समाज की कल्पना है।

(7) **रैदास काव्य की समकालीन प्रासंगिकता** – आज भी जब समाज जाति वर्ग और आर्थिक विषमता से ग्रस्त है, रैदास का काव्य, मानवता, सामाजिक न्याय और समानता का मार्गदर्शन करता है उनके मानव मूल्य आधुनिक, लोकतांत्रिक और संवैधानिक मूल्यों में पूर्णतः समाय है।

निष्कर्ष – संत कवि रैदास का निर्गुण काव्य मानव मूल्यों की सामाजिक चेतना का सशक्त स्वर है। समानता, श्रम सम्मान करुणा, स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा उनके काव्य के केंद्रित तत्व हैं। उन्होंने भक्ति को मानव कल्याण से जोड़ कर साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया रैदास का काव्य आज भी मानवता, सामाजिक समरसता और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए प्रेरणा स्रोत है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची –

1. रैदास – रैदास पदावली – संपा. परशुराम चतुर्वेदी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी – पृष्ठ-35, 52, 78-91 112-120।
2. रैदास – संत रैदास वाणी- डॉ. चन्द्रधर शर्मा – साहित्य भवन इलाहाबाद।
3. कबीर बीजक – संपा. श्याम सुन्दर दास – नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी।
4. निर्गुण भक्ति – बच्चन सिंह – राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली।
5. संत रैदास – जीवन काव्य और दर्शन – डॉ. चन्द्रधर शर्मा – साहित्य भवन इलाहाबाद।
6. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास – डॉ. नगेन्द्र – पृष्ठ- 312, 335, 360, 378।
7. हिन्दी संत साहित्य – राम कुमार वर्मा – साहित्य भवन, इलाहाबाद।



आचार्य क्षेमेन्द्र की दृष्टि में कल्कि अवतार एवं उसकी समीचीनता

मितीश दुबे

शोधछात्र,

डॉ० विद्याधर सिंह

निर्देशक,

संस्कृतविभाग, जम्मू विश्वविद्यालय

भारतवर्ष संस्कृत साहित्यकारों एवं कवियों की उत्कृष्ट भूमि है। वैदिक एवं संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में कश्मीर का महत्वपूर्ण योगदान है। महाकवि आचार्य क्षेमेन्द्र 10वीं 11वीं शताब्दी कश्मीर के असाधारण ग्रंथकार थे। उनके पिता का नाम प्रकाशेन्द्र था। क्षेमेन्द्र ने अपनी शिक्षा प्रसिद्ध शाही दार्शनिक और साहित्य शास्त्री अभिनव गुप्त से प्राप्त की, परंतु कालांतर में सोम आचार्य का उनके जीवन पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने सभी मतों को छोड़कर वैष्णव धर्म को अपनाया और अपने अंतिम साथ समय तक वह धर्म के अनुयायी बन रहे। 'बृहत्कथामंजरी' में यह स्पष्ट किया है। क्षेमेन्द्र की रचनाएं विविध और व्यापक हैं। वे संस्कृत साहित्य में व्यंग्य और परिहास कथाओं के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं :-

बृहत्कथामंजरी, भारतमंजरी, रामायणमंजरी, दशावतारचरित आदि।
दशावतारचरित (परिचय)

आचार्य क्षेमेन्द्र द्वारा रचित "दशावतारचरित" एक महत्वपूर्ण काव्य है, जिसमें भगवान विष्णु के 10 अवतार मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, और कल्कि का क्रमबद्ध वर्णन है। प्रत्येक अवतार की कथा को काव्य रूप में प्रस्तुत किया गया है जिसमें उनके उद्देश्य लीलाओं और विश्व कल्याण के योगदान को दर्शाया गया है।

कल्कि अवतार

भगवान विष्णु के अवतार क्रम में दसवां और महत्वपूर्ण अवतार कल्कि अवतार है, यह अवतार कलयुग के अंत में प्रकट होंगे जो धर्म की पुनर्स्थापना और अधर्म के विनाश के लिए होगा।

संस्कृत हिंदी कोष के रचयिता – वामन शिवराम आपटे ने कल्कि शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार की है 'कल्क' धातु (जिसका अर्थ होता है दोष अशुद्ध पाप या अंधेरा) से 'णिच्' तथा 'इन्' प्रत्यय करने पर कल्कि शब्द निष्पन्न होता

है। कल्कि को इस संदर्भ में अर्थ हुआ “कलक् का नाश करने वाला या अशुद्धि या अंधकार को समाप्त करने वाला”। संक्षेप में कल्कि का अर्थ है पाप का विनाशक या शुद्धता लाने वाला।

विभिन्न पुराणों में भी कल्कि अवतार का उल्लेख प्राप्त होता है विष्णु पुराण पुराण भागवत पुराण अग्नि पुराण मत्स्य पुराण कल्कि पुराण आदि।

कल्कि पुराण प्रथमांश द्वितीय अध्याय में कल्कि अवतार का समय वैशाख शुक्लद्वादशी बताया गया है। आनंद रामायण के अनुसार “माघ शुक्ल तृतीया तु कल्किनः सा तिथिः स्मृतः” धात माघ शुक्ल तृतीया तिथि कल्कि अवतार का समय है।

पंचांग दिवाकर एवं मार्तंड पंचांग आदि के अनुसार कलियुग के 821 वर्ष शेष रहने पर कल की अवतार शंभल (संभल) ग्राम में विष्णुयशा ब्राह्मण के घर होगा। विष्णु पुराण के अनुसार श्रौत और स्मार्त धर्म का अत्यंत हास हो जाने तथा कलियुग के व्यतीत होने पर संभल निवासी श्रेष्ठ विष्णु यश के घर संपूर्ण संसार के रचयिता, चराचर गुरु, आदिमध्यांतशून्य ब्रह्ममय, आत्म स्वरूप भगवान वासुदेव अपने अंश अष्टैश्वर्य युक्त कल्कि रूप से संसार में अवतार लेकर असीम शक्ति और महात्म्य से संपन्न हो सकल मलेच्छ, दस्यु, अत्याचारी तथा दुष्टों का विनाश करेंगे और प्रजा को अपने धर्म में नियुक्त करेंगे।

हरिवंश पुराण में कहा गया है

कल्किर्विष्णुयशानामशम्भले ग्रामेकद्विजः

सर्वलोक हितार्थाय भूयश्चोत्पत्स्यते प्रभुः ।

‘महाभारत’ में कहा गया है- ‘जब कलियुग में पापों की अत्यधिक वृद्धि हो जाएगी तो एक महान् शक्तिशाली बालक पैदा होगा, जो ‘विष्णुयशा कल्कि’ कहलाएगा।

वह स्वेच्छया अस्त्र-शस्त्र प्राप्त करके दुष्टों का नाश एवं धर्म की स्थापना करेंगे

‘महाभारत’ के वनपर्व में युगान्तकालिक कलियुग की दुरावस्था एवं कल्कि अवतार का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

‘अग्निपुराण’ में भी कल्कि अवतार का वर्णन मिलता है। यहाँ उनका उद्देश्य मलेच्छों का नाश करके चतुर्वर्णों में यथोचित मर्यादा स्थापना तथा सभी आश्रमों एवं सद्धर्म मार्ग पर प्रजा का प्रतिष्ठापन करना कहा गया है।

दशावतारचरितम् का संक्षिप्त कथानक एवं अन्य ग्रन्थों में वर्णित....

एषलोकहितार्थाय प्रादुर्भावोमहात्मनः ।

कल्की विष्णुयशा नामशम्भल ग्रामसंभवः॥“

कल्कि पुराण में कल्कि अवतार का विस्तृत वर्णन किया गया है।

भागवतपुराण’ में कल्कि को विष्णुयशा का पुत्र कहा गया है और उनके अवतरित होने का प्रयोजन दष्टों का नाश कर धर्म की स्थापना करना बताया गया है।

विभिन्न पुराणों में वर्णित कल्कि अवतार की कथा में मूलतः कोई भेद नहीं है।

साहित्यिक साक्ष्यों में कल्कि से संबंधित राजाओं के नाम मिलते हैं। नाम की समानता के आधार पर जैन एवं बौद्ध साहित्य में भी कल्कि नाम वाले एक व्यक्ति का उल्लेख हुआ है। श्री के०वी० पाठक ने जैन ग्रंथों के आधार पर इस कल्कि को अत्याचारी कहा है, क्योंकि इसने जैनों पर कर लगाया था। इसे ‘चतुर्मुखी कल्कि’ एवं ‘कल्किराज’ नाम से पुकारा गया है। किन्तु वास्तव में उसे कल्कि अवतार नहीं कहा जा सकता है।

कविचन्द्रवरदाई ने कल्कि का कवल रूप माना है तथा सभी कष्टों के शमनार्थ उनकी शरण लिया है-

‘कवि चंद कष्ट मेटनकलू, कौलरूप तेरे सरन

जैन ग्रंथों में कल्काचार्य नाम के एक ब्राह्मण का उल्लेख मिलता है। पौराणिक कल्कि से इस कल्काचार्य का कुछ साम्य दृष्टिगत होता है, पर वह भी अवतार नहीं है। क्योंकि ये कल्काचार्य बुद्धि से ब्राह्मण, पराक्रम से क्षत्रिय सदृश थे। इनका जन्म मध्य प्रदेश की धारा नगरी में हुआ था जबकि विष्णु के अवतार-कल्कि का जन्म पुराण के अनुसार सम्भल ग्राम में होना बताया गया है।

इस (कल्कि) अवतार के सम्बन्ध में हरिवंश का कथन है कि इनका एवं इनके अनुयायियों का कर्मक्षेत्र गंगा तथा यमुना के बीच का प्रदेश (अन्तर्वेदी) होगा। अतः इस अन्तर्वेदी में ही कहीं संभल के होने का अनुमान किया जाना चाहिए।

महाकवि क्षेमेन्द्र ने कल्कि के पिता का नाम एवं कल्कि के अवतार स्थान का स्पष्टतया उल्लेख नहीं किया है।

मर्त्यभूमिं परित्यज्य सदाचारविवर्जिताम् । जग्मुः कलापिग्रामाख्यं दिव्यदेशं महर्षयः ॥ अवदन्मुनयस्तत्र मार्कण्डेयं चिरायुषम् । भगवन्कलिकालोऽयं कलुषः प्रत्युपस्थितः ।

आचार्य क्षेमेन्द्र ने कल्कि अवतार की पूर्व भूमिका रूप में कलियुग का जो वर्णन किया है वह महाभारत से प्रभावित ज्ञात होता है। ये वर्णन उनकी समकालीन सामाजिक परिस्थितियों से काफी प्रभावित है।

इतिहासानुशीलन से ज्ञात होता है कि राजा कलश (11वीं शती का पूर्वार्ध) का शासन बहुत अव्यवस्थित था। सर्वत्र प्रजा में लूट-मार और अन्याय का बोलबाला था। राजा भी पाप-पुण्य में भेद नहीं समझते थे। कल्हण की ‘राजतरंगिणी’ के अनुसार धूर्तों के वचनों से विमोहित होकर कलुषित हृदय राजा कलश दोषों को गुण, पाप को सत्कर्म, लज्जाकारक नर्मवाचन को योग्य वाक्य, प्रजापीड़न को उचित कर्तव्य, निर्लज्जता को तेजस्विता, अभ्यागमन को रसिकता, खलपुरुषों द्वारा दत्त गालियों को शांतिपूर्वक सहने को सरलता मानते।

महाकवि क्षेमेन्द्र ने कल्कि अवतार (कल्क्यवतार) के स्थान पर ‘कर्क्यवतार’ शब्द का प्रयोग किया है, यथा-

देवः पायादपायात्त्रिभुवनभवनस्तम्भभूतः स युष्मा-नायुष्मान्यस्य भक्त्या प्रभवति पुरुषः स्वर्गमार्गेऽपवर्गे। मत्स्यः कूर्मो वराहः पुरुषहरिवपुर्वात्मनो जामदग्न्यः काकुत्स्थः कंसहन्ता स च सुगतमुनिः कर्किनामा च विष्णुः ।

तथा च

इति श्री व्यासदासापराख्यक्षेमेन्द्रविरचिते दशावतार चरिते कर्क्यवतारो दशमः।

‘कर्क्यवतार’ शब्द का प्रयोग भगवान् विष्णु के कर्किकुल में अवतार ग्रहण करने के कारण प्रयुक्त हुआ है अथवा कर्कि (केकड़े) रूपी अल्प जीव से पुनः सृष्ट्युत्पत्ति की ओर संकेत किया गया है-यह विचारणीय है।

संतदादूदयाल ने कलियुग में संतों को ही अवतार माना है। संत ही परमार्थी परमेश्वर और अवतारी-ईश्वर का कार्य करते हैं।

दुःखरूपी सागर से उबरने का इस कलिकाल में भगवन्नाम जप-संकीर्तन ही एकमात्र उपाय है। विष्णु पुराण भी इस संदर्भ में सहमत है :-

अत्यन्तदुष्टस्य क्लेशमेको महान् गुणः। कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं ब्रजेत् ॥

कृतयुग में ध्यान-साधना से, त्रेता में दीर्घ व्ययसाध्य यज्ञ से, द्वापर में (महनीय साधनों की सहायता से) अर्चना से जो फल प्राप्त होता है वही कलियुग में केशव-संकीर्तन से होता है। साधन की लघुता की दृष्टि से कलियुग में इष्टदेव के नाम-जप संकीर्तन से मानव-जन्म सफल एवं धन्य हो जाता है।

ध्यायनकृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ।

यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ सङ्कीर्त्य केशवम् ॥

तत्त्वार्थरामायणकार डोंगरे जी महाराज का भी ऐसा ही विचार है-

राम नाम कलि अभिमत दाता। हितपरलोक लोकपितु माता। नहिं कलि करम न भगति विवेकू। रामनाम अवलम्बन एकू॥

अंततः कल्कि अवतार अभी हुआ नहीं है, भविष्य में होने वाला है। इसका कोई प्रामाणिक आधार नहीं मिलने के कारण उसका स्पष्ट स्वरूप बता पाना संभव नहीं है, केवल अनुमान एवं भविष्यवाणी या विभिन्न शास्त्रों में उपलब्ध उल्लेखों के आधार पर कहा जा सकता है कि अधर्म की चरम सीमा पर पहुँच जाने पर धर्म की स्थापना के लिए भगवान् विष्णु दसवें अवतार (कर्कि अथवा कल्कि अवतार) के रूप में अवतरित होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रामायणमञ्जरी
2. भारतमञ्जरी
3. बृहत्कथामञ्जरी
4. दशावतारचरित = विष्णु के दस अवतारों का वर्णन
5. महाभारत
6. कल्कि पुराण
7. भविष्यपुराण
8. सुवृत्तिलक
9. समयमातृका
10. कलाविलास
11. विष्णु पुराण
12. भागवत पुराण
13. पद्म पुराण
14. गीता गोविंद -जयदेव
15. हरिवंश पुराण
16. कवि चंदबरदाई – पृथ्वीराज रासो

मो० -8082955404

ईमेल-mitish28620@gmail.com



मीमांसा दर्शन में यज्ञ विधान शांखायन ब्राह्मण के आलोक में

नीरज जम्वाल ,

शोधछात्र,

संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय

प्रो. रामबहादुर शुक्लः

निर्देशक

वैदिक ज्ञान परम्परा को मूलतः समझने में दर्शनशास्त्र एक महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित करते हैं। मीमांसा दर्शन वैदिक दर्शन की छह प्रमुख आस्तिक दर्शनों में से एक है। मीमांसा दर्शन के रचयिता महर्षि जैमिनी को माना जाता है। मीमांसाशास्त्र मुख्यतः जैमिनी ऋषि द्वारा रचित जैमिनी सूत्र पर आधारित है। यह शास्त्र द्वादश अध्यायों में विभक्त है जिस कारण से इसे द्वादशलक्षणी¹ भी कहते हैं। अध्यायों की विषय वस्तु इस प्रकार है – धर्मप्रमाणम्, धर्माधर्मभेद, शेषशेषविभावः, कृत्वर्थपुरुषार्थभेदेन प्रयुक्तिविशेषः, श्रुत्यर्थपाठनादिक्रमभेदः, अधिकारविशेष, सामान्यातिदेश, विशेषातिदेश, ऊह, बाध, तन्त्र प्रसंग। जैमिनी सूत्र में “अथातो धर्मजिज्ञासा”² से ग्रन्थ का आरम्भ होता है। जिससे यह स्पष्ट करते हैं कि मीमांसा का मुख्य विषय है धर्म, जिसकी भाष्यकारों एवं टीकाकारों ने व्याख्या की है वह धर्म वैदिक विधियों याज्ञिक प्रक्रियाओं तथा अपूर्व उत्पन्न करने का साधन है। मीमांसा दर्शन में सर्वप्रथम धर्म का अर्थ करते हुए “यागदिरेव धर्मः”³ प्राप्त होता है अर्थात् यागादि ही धर्म है। मीमांसकाचार्य लोगक्षिभास्कर का अर्थसंग्रह में धर्म का लक्षण इस प्रकार प्रतिपादित है, कि¹

(वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवद् अर्थो धर्मः)⁴ अर्थात् जो वेद द्वारा प्रतिपादित हो प्रयोजन वाला हो और अर्थ वाला हो उसी को धर्म कहा जाता है। यागविधान का उदय कब और हुआ यह कहना कठिन है। यद्यपि ब्राह्मणग्रन्थों⁵ में याग सम्पादन विधियों का ही सविस्तार विवेचन प्राप्त होता है, किन्तु वह भी स्वयं में पूर्ण नहीं हैं। अवश्य ही कोई मौखिक परम्परा रही होगी, जिसके आधार पर परम्परा से विभिन्न शाखाओं में निहित याग प्रक्रिया के विवेचन को समझा और

1 मीमांसादर्शनम् (तर्कपादः) डॉ उमाशंकर शर्मा

2 जैमिनीसूत्र 1.1

3 अर्थसंग्रह

समझाया जाता होगा। शनैः शनैः यागविज्ञान में समृद्धि होती गयी होगी, तद्विषयक अनेक समस्याएँ उठी होगी, जिसका समाधान होता रहा होगा और मौखिक परम्परा द्वारा प्रभूत यागविज्ञान अनेक पीढ़ियों से सक्रान्त हुआ होगा। मौखिक परंपरा के ह्रस्वोन्मुख होने के भय से उस कर्मकाण्डविषयक ज्ञानराशि को, जो ग्रंथ का आकार देने का प्रयास हुआ, वही स्मृति साहित्य है। स्मृति साहित्य से तात्पर्य है कि यागविज्ञान का उद्भव यगानुष्ठान की आज्ञा या प्रेरणा वेदों के शब्दों से ही प्राप्त होती है। यथा -

चत्वारि श्रृंगास्त्रयोऽस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासोऽस्य ।

त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविवेश।⁶

इस मन्त्र के महत्त्व में निरुक्तकार यास्क लिखते हैं कि (एष हि महान् देवो यज्ञः) अर्थात् ये यज्ञ ही महान् देव है। इसके अतिरिक्त शुक्लयजुर्वेद में (अयम् यज्ञो भुवनस्य नाभिः)⁷ आदि वेद की कण्डिकाओं में, यज्ञ विधान का प्रमुख रूप से वर्णन है। मन्त्रों की याग परक व्याख्या किंचिद् ब्राह्मण ग्रंथों से भी संबंधित है।¹²

यथा शतपथब्राह्मण में दर्शपूर्णमासयाग का संदर्भ में यज्ञ की महत्ता पर विवेचन प्राप्त होता है कि यज्ञ करने वाला अमरत्व को प्राप्त करता है और अजेय बनता है⁸

वैदिक परम्परा में यज्ञ न केवल धार्मिक अनुष्ठान है, बल्कि यह पर्यावरण शुद्धिकरण का एक प्राचीन वैज्ञानिक तरीका भी माना जाता है। यज्ञ में प्राचीन आम की लकड़ी, घी, गुगल, कपूर आदि की आहुति दी जाती है, जिससे उत्पन्न धुआं वातावरण को शुद्ध करता है। कई वैज्ञानिकों ने इसके पर्यावरणीय लाभों की पुष्टि की है, जो निम्नलिखित है -

वायु शुद्धिकरण – यज्ञ के धुएं में फाइटोनसाइड्स (phytoncides) और अन्य एंटीमाइक्रोबियल यौगिक निकलते हैं, जो हवा में मौजूद बैक्टीरिया, फंगस वायरस को बहुत अधिक प्रतिशत तक कम कर देते हैं⁹।

SO₂ (सल्फर डाइआक्साइड), NO₂ (नाइट्रोजन डाइऑक्साइड), PM 2.5 और PM 10 जैसे प्रदूषकों का स्तर घटता है।

घी और आम की लकड़ी जलने से फॉमिक एल्डिहाइड गैस उत्पन्न होती है, जो हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट करती है।

मिट्टी और कृषि लाभ

यज्ञ की राख में पोटैशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम प्रचुर मात्रा में होता है, जो प्राकृतिक खाद का काम करता है, और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है तथा फसलों की पैदावार बढ़ाने में और कीटों से बचाव करने में सहायता प्रदान करता है।³

ब्राह्मण ग्रन्थों को वैदिक साहित्य की दूसरी कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। संहिता ग्रन्थों में मन्त्रों की व्याख्या तथा विनियोग करने के कारण इन्हें ब्राह्मण संज्ञा प्रदान की गयी है। ऋग्वेद के दो ब्राह्मण प्राप्त होते हैं ऐतरेय एवं

4 अर्थसंग्रह-धर्म लक्षणविचार

5 उत्सृज्यां नोत्सृज्यामिति मीमांसन्ते ब्रह्मवादिनः तैत्तिरीय संहिता 7.5.7.1 तैत्तिरीय ब्राह्मण ब्राह्मण

6 निरुक्त 13-8/ ऋग्वेद 9-58-1

7 शु०य०मा०सं० अ-23 मं०62

8 शतपथब्राह्मण 2.2.2 8-4

9 नेशनल बायोटैकनोलॉजिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट के अध्ययन के अनुसार

शांखायन । शांखायन ब्राह्मण को कौषीतकि¹⁰ ब्राह्मण भी कहते हैं। इसमें कुल तीस अध्याय है। इसका मुख्य विषय सोमयाग है किन्तु, इसमें अग्निहोत्र, दर्शपौर्णमास तथा चातुर्मास्य आदि ईष्टियों का वर्णन भी प्राप्त होता है। मीमांसा दर्शन में यज्ञ को कर्मकांड का मूल मानते हैं। जैमिनी के मीमांसा सूत्रों में यज्ञ को (स्वर्गकामो यजेत्)¹¹ जो स्वर्ग की कामना करता है वह यज्ञ करे, जैसे विधानों से जोड़ा गया है। यज्ञ धर्म की प्राप्ति और अपूर्व (अदृष्ट शक्ति) उत्पन्न करने का साधन है, जो फल (जैसे स्वर्ग या अन्य इच्छित वस्तु) प्रधान करता है। मीमांसाशास्त्र में नित्य (जैसे- अग्निहोत्र), नैमित्तिक (विशेष अवसरों पर, जैसे पुत्रकामेष्टि) काम्य (इच्छित फल के लिए, जैसे राजसूय में विभाजित किया गया है। मीमांसा यज्ञ की व्याख्या नियम निर्धारित करती करती है, जैसे अन्विताभिधान (शब्दों का संयुक्त अर्थ) और नियोग (विधि की शक्ति)। उपलब्ध सभी ब्राह्मणों में शांखायन ब्राह्मण यज्ञीय पद्धतियों का प्रचुरता से वर्णन करता है इसमें मुख्यतः पाँच यज्ञों का वर्णन है। मीमांसा तथा शांखायन ब्राह्मण दोनों ही नित्य, नैमित्तिक, काम्य श्रौत यज्ञों का उल्लेख करते हैं। उदाहरणस्वरूप अग्निहोत्र तथा सोम यज्ञ दोनों में समानता को प्रदर्शित करता है। “अग्निहोत्रं जुहोति स्वर्गकामः”¹² तथा “सोमेन यजेत्”¹³ । मीमांसा शास्त्र की इन याग विधियों से स्पष्ट है कि ये अपूर्व फल उत्पन्न कर स्वर्ग या मोक्ष को प्रदान करने का मार्ग प्रशस्त करती है। सोम याग का वर्णन काम्य याग के रूप में वर्णित है जो विशेष कामना का फल दायक है। मीमांसा शास्त्र में जो सोमयाग है वह मूलतः शांखायन ब्राह्मण में सोमयाग वर्णित सोमयाग का प्रारूप है।⁴

शांखायन ब्राह्मण में सोमयाग सप्तम अध्याय से तीसवें अध्याय तक वर्णित है।

(त्रयो वे यज्ञे कामा¹⁴) इस सूत्र की व्याख्या में शांखायन ब्राह्मण में वर्णित यज्ञ की वस्तुतः तीन कामनाएँ होती हैं। प्रथम इसकी पूर्णता में, द्वितीय न्यूनता में, तृतीय अधिकता में, अर्थात् यज्ञ की पूर्णता स्वर्ग को देने वाली, न्यूनता अन्न की प्राप्ति है, अधिकता प्रजाति के लिए है, एवं मीमांसा शास्त्र का (यजेत् स्वर्गकामः)¹⁵ यह विधि वाक्य शांखायन ब्राह्मण के इस सूत्र से पूर्णतः संबंधित है। (पुरुषो वे यज्ञः)¹⁶ शांखायन ब्राह्मण में पुरुष सूक्त में वर्णित विराट् पुरुष को ही यज्ञ का स्वरूप माना है। यज्ञ कर्म से प्रधान होने वाले अभीष्ट फल का दायक है। मीमांसा शास्त्र में यज्ञ की महत्ता कर्मानुष्ठान विधियाँ विस्तृत वर्णित हैं। मीमांसको ने वेद विहित कर्म उनकी व्याख्या करते हुए उनके ब्राह्मण ग्रन्थ तथा लौकिक पद्धति से मीमांसा शास्त्र में यज्ञानुष्ठान को एकत्रित किया है। शांखायन ब्राह्मण में प्रतिपादित प्रतीकात्मक पदों का मीमांसासूत्र के भाष्य में शबर मुनि ने अपने शाबरभाष्य में उन प्रतीकों में विद्यमान विधि तथा यज्ञ प्रक्रियाओं को विस्तार से स्पष्ट किया है। अंततः यह ज्ञात होता है कि मीमांसा-शास्त्र और शांखायन ब्राह्मण का एक अद्वितीय संबंध है जो यज्ञ तथा उनके फल प्राप्ति का ही निर्देशन करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References/Bibliography)

10 वैदिक साहित्य एवं संस्कृति

11 अर्थसंग्रह विधि प्रकरण

12 मीमांसासूत्र

13 अर्थसंग्रह विधि प्रकरण

14 शांखायन ब्राह्मण 11 अध्याय

15 मीमांसार्थकौमुदी अर्थसंग्रहविधिप्रकरणम्

16 शांखायन ब्राह्मण 17-7-25

- अग्निपुराण- आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान ।
- अथर्ववेद - सम्पादक एवं व्याख्याकार प्रो. राम गोविन्द त्रिपाठी (सायण भाव्य)
- ऋग्वेद - भाष्यकार पद्मभूषण डा. श्री पाद दामोदर सातवलेकर ।
- ऋग्वेद संहिता - भाष्यकार सायण - आनन्द आश्रम मुद्रणालय पूना, प्रथम संस्करण, 1942 ।
- काशी की पांडित्य परम्परा - आचार्य बलदेव उपाध्याय, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
- चमत्कारचन्द्रिका - विश्वेश्वर पंडित, चौखम्बा ओरियन्टा लिया, वाराणसी ।
- जैमिनीय ब्राह्मण - वैदिक संशोधन मण्डल, पूना द्वितीय संस्करण ।
- जैमिनीसूत्र - व्याख्याकार डॉ सुरेश चंद्र मिश्र
- जैमिनीयमीमांसाभाव्यम् - व्याख्याकार, युधिष्ठिर मीमांसक, बत्ताह बहालगढ़, सोनीपत हरियाणा।
- निरुक्त - यास्काचार्य प्रणीत - आचार्य किशोरीदास वाजपेयी, वाणी प्रकाशन दिल्ली।
- पारस्करगृधसूत्र- ओम् प्रकाश पांड्येय, चौखम्बा वाराणसी।
- मीमांसा परिभाषा - डॉ शशिबाला।
- मनुस्मृति - सम्पादक हर गोविन्द शास्त्री, संस्कृत सीरीज वाराणसी ।
- महाभारत - व्यास रचित, व्याख्याकार जगदीश्वरानंद सरस्वती, विजय कुमार गोविन्दानन्दहासानन्द, दिल्ली।
- मुण्डकोपनिषद् - सम्पादक हरिकृष्णदास गोयनका, गीताप्रेस गोरखपुर ।
- शतपथ ब्राह्मण -स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती विजय कुमार गोविन्द राम दासानन्द, संस्करण 2003 ।
- श्रीमद् भागवत महापुराण - हिन्दी व्याख्या सहित, गीताप्रेस गोरखपुर ।

ग) कोश ग्रन्थ सूची

- अमरकोश - लेखक अमर लि सिंह, प्रकाशक चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी ।
- उपनिषद्वाक्यकोष - कर्नल जी. ए. जैकब, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली ।
- शब्दकल्पद्रुम - स्थार राजा राधाकान्त देव बहादूर, प्रकाशक - चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस वाराणसी।
- शब्दार्थ चिन्तामणि - सुखनन्दनाथ, 1942 ।
- संस्कृत हिन्दी शब्द कोश - वामन शिवराम आप्टे, नाग पब्लिशर्स 2012 ।



मधुकर गंगाधर की कहानी का साहित्यिक अवलोकन

डॉ० कल्पना सुधांशु

मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

मधुकर गंगाधर का जन्म पूर्णिया जिले के रुपौली स्थित झलारी गाँव में 1933 ई. में हुआ था। वे 29 वर्ष तक ऑल इंडिया रेडियो की सेवा से जुड़े रहे। डॉ० मधुकर गंगाधर (07 जनवरी, 1932–06 दिसम्बर 2020) हिन्दी के कथाकार एवं कवि थे। उन्होंने आकाशवाणी के पटना केंद्र में काम किया जहाँ वे फणीश्वरनाथ रेणु के सहयोगी थे। साथ ही इलाहाबाद में ऑल इंडिया रेडियो के निदेशक और दिल्ली आकाशवाणी में उप महानिदेशक थे। वे नई कहानी आंदोलन के प्रमुख कहानीकारों में से थे। हिंदी के यशस्वी लेखक फणीश्वरनाथ रेणु और कमलेश्वर के मित्र थे।

डॉ० गंगाप्रसाद विमल, डॉ० मधुकर गंगाधर के कहानीकार के बारे में कुछ इस तरह कहते हैं—20वीं शताब्दी की अधिकांश लड़ाईयाँ कहानी की सरहद पर लड़ी गई हैं। इस लड़ाई का सचेत स्वर स्वतंत्रता के बाद की कहानी में उभरता है। सचेत इसलिये कि कहानी मानवीय संस्कृति की विशाल सम्पदा का एक छोटा सा कारण है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय परिवेश को हम समुद्र में पड़े समूह के समानार्थक रख सकते हैं। जहाँ भारतीय जनसमाज प्रजातंत्र, परसंस्कृतिकरण, बेरोजगारी, असमानता, पूंजीवादी दवाब, साम्राज्यवादी आकांक्षाएँ और भी न जाने कितने बिंदु हैं जिनके बीच से अहर्निश गुजरता है। ठीक ऐसे समय में कुछ नए लेखकों ने मानव संबंधों के नए आयामों का अंकन किया। इस में यशपाल, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, मोहन राकेश, कमलेश्वर, रेणु, मार्कण्डेय, राजेन्द्र अवस्थी, मन्नु भन्डारी, विजय चौहान, निर्मल वर्मा आदि बहुत से नाम हैं। उन्हीं के समान्तर अपेक्षाकृत कुछ नए युवा स्वरों में जो कुछ नाम उस समय चर्चा में रहे उनमें मधुकर गंगाधर का नाम उस दृष्टान्त की तरह है, जो पीढ़ियों के चिन्तन, उनकी दृष्टि और उनके सरोकार में भिन्नता स्पष्ट करता है।

“प्रेमचन्द की कहानी “कफन” और मधुकर गंगाधर की कहानी “ढिबरी” दो कथाकारों की दृष्टि, उनकी पक्षधरता, उनके सम्पूर्ण चिन्तन को दो धरुवों के रूप में स्थापित कर देती है।”¹ मधुकर गंगाधर का साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी है। उन्होंने कहानियों के साथ-साथ उपन्यास, नाटक, रेडियो रूपक, संस्मरण

आदि भी लिखे हैं। उनका नाटक “भारत भाग्य विधता” भारतीय लोकतंत्र और उसके राजनेताओं के असली चरित्र को उजागर करता है। लेकिन इस सब के बीच उनके कवि को नहीं भूला जा सकता। उनका कवि रुमानी न होकर यथार्थवादी है।

गंगाधर और उनके दौर के कवियों ने कल्पनायें नहीं बल्कि देश एवं भोगा हुआ यथार्थ लिखा है। जैसे “गाँव” शीर्षक से कविता में धूमिल का अनुभव निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त हुआ है:—

“चेहरा—चेहरा डर लटका है
घर—बाहर अवसाद है,
लगता है यह गाँव नरक का
भोजपुरी अनुवाद है”

गाँव का ऐसा ही अनुभव मधुकर गंगाधर का भी है:—

“कई दिनों की भूशी, बूढ़ी गाय
कीचड़ में धँस गई है,
मेरे गाँव की गर्दन,
अंधे घड़ियाल के मुँह में,
फँस गई है।”

मधुकर गंगाधर का कवि खामोश होकर सिर्फ यथार्थ को देखता, सहता और कविता में रहता है।

“मेरी आँखों गोलियों की तरह चमक उठी हैं
और मैं बन्दूक की तरह तन गया हूँ।
लगता है, कुतुब मीनार पर मनहूस कुत्ता रोता है
नक्सल वाड़ी के सिवा पूरा मुल्क सोता है।”²

मधुकर गंगाधर के जीवन पर प्रकाश डालते कई लेख भी बहुत रोचक हैं, जिनमें डॉ० बलदेव वंशी का लेख “सांस्कृतिक, पारिस्थितिकी और मधुकर गंगाधर” एक ऐसा लेखक है जो कोई अंतरंग मित्र ही लिख सकता है। “एक शहर बनता हुआ गाँव” शीर्षक में प्रो० कमला प्रसाद “बेखबर” जिस शिलन्दडेपन वाले आशिक मिजाज मधुकर गंगाधर को सामने रखते हैं वह उन लोगों के लिए बिल्कुल नया है जो एक अक्खड़ और सख्त गंगाधर को जानते हैं। इस लेख में उनके जीवन के कई प्रेम—प्रसंगों का विस्तार से सिलसिलेवार कहा जाना और अंत में उनका अपनी पुरानी कार के प्रति प्रेम उनकी जीवन शैली को दर्शाता है, जिसमें वह गाँव और शहर के बीच समन्वय बिठाते रहे। बाहरी तौर पर वह एक उच्च पदस्थ अधिकारी रहे पर मन में एक गाँव सदा बसा रहा।

संकलन के बीच—बीच में उनकी कविताओं की पंक्तियाँ पढ़कर अच्छा लगता है। एक रचनाकार के रूप में, एक मित्र, पिता, पुत्र, पति एवं एक साफ दिल इन्सान के रूप में मधुकर गंगाधर जैसे अग्रज साहित्यकार की छवि को संपादक ने जिस प्रकार सबके सामने रखा है वह प्रशंसनीय है। आज की पीढ़ी के सामने हमारे पुराने साहित्यकारों के रचनाकर्म एवं उनके जीवन पर इस प्रकार के संकलन, बीते समय की साहित्यिक एवं सामाजिक परिस्थितियों की एक झाँकी देखने के लिये अतीत की ओर एक झरोखा खोल देते हैं, जिससे झाँकते हुए हम फिर उस समय को कुछ देर के लिए जीने लगते हैं, जब रेणु, नागार्जुन जैसे रचनाकार मधुकर जी के साथ सड़कों पर चलते, बतियाते दिखते हैं।

हिन्दी की नई कहानी के दौर में कई श्रेष्ठ कथाकार दत्तचित्त होकर काम कर रहे थे। चर्चित कथाकार मधुकर गंगाधर का पदार्पण संयोग से उन्हीं दिनों हुआ। एक मेहतरानी के जीवन पर लिखी कहानी से सन् 1954-55 में कथा लेखन में उनका प्रवेश हुआ। 'नई कहानी' तब तक आकार ग्रहण नहीं कर पाई थी। उस पीढ़ी के तमाम कथाकार, जो बाद के दिनों में अपनी-अपनी जिम्मेदारी के साथ हिन्दी कहानी के प्रमाण बने, अपनी-अपनी क्षमता और अपने-अपने कौशल के साथ रचनाशील थे। देश स्वतन्त्र हो चुका था पर हिन्दी कथाकार उस दौर की कई समस्याओं से जूझ रहे थे। घृणा और स्वीकार की खींचातानी ने उनके मनोभावों को अजीब-सी उलझन में डाल रखी थी। उस अवधि को चित्रित करते हुए राजेन्द्र यादव ने लिखा कि "युगों की पराधीनता के बाद किसी देश का स्वतन्त्र होना ही अपने आप में बहुत बड़ी घटना है, फिर अपने यहाँ तो इस घटना के साथ ही देश का विभाजन भी जुड़ा है। शरणार्थियों और विस्थापितों के वे काफिले जुड़े हैं जो भूखे-प्यासे, खून से लथपथ एक देश से दूसरे देश में आए, वे सारी हत्याएँ और नृशंसताएँ भी जुड़ी हैं जो दोनों देशों के लोगों को भुगतनी पड़ी, लाखों लोगों के अतीत की जलती चिताएँ जुड़ी हैं जहाँ पिछला सब कुछ, सभी कुछ भस्म हो गया ...अच्छा भी और बुरा भी...तेजी से विघटित होते जीवन-मूल्यों के भूकम्प जुड़े हैं।

इन सारी परिस्थितियों के साथ-साथ इनसे उद्भूत और स्वतन्त्र रूप से संचालित अन्य असंख्य समस्याएँ उन दिनों जबरन चुभने वाले काँटों की तरह समकालीन कहानीकारों की आँखों में, मन-प्राण में चुभ रही थीं। सब कुछ गँवाकर स्वाधीन हुआ भारत नया जीवन बसा रहा था। संसार के वैज्ञानिक, तकनीकी, सांस्कृतिक, सामाजिक, बौद्धिक, नैतिक उत्थान से लालायित मन और विकासोन्मुखी प्रतिभा उछाल मार रही थी। सन् 1956 तक पहला चुनाव हो चुका था। मगर स्वाधीन देश भारत में स्वाधीनता का कोई ठोस स्वरूप नहीं दिख रहा था। और, वह समय मधुकर गंगाधर के कथाकार मन को बेरहमी से कुरेद रहा था। गोया, उनकी रचना दृष्टि को ठोक-ठोककर मजबूत कर रहा हो और आखिरकार उसने मजबूत करके ही दम लिया।

कहानी लेखन को परिभाषित करते हुए स्वयं मधुकर गंगाधर ने कहा कि 'कहानी प्रसव का क्षण है, गर्भाधन का उपाख्यान या बालक के नामकरण का समारोह नहीं।' ³ इस बात की व्याख्या कथाकार ने स्वयं अपने एक साक्षात्कार में भी और अपनी महत्वपूर्ण कहानी 'ढिबरी' में भी बड़ी सूक्ष्मता से की है। कथाकार के इस स्पष्टीकरण और कहानी के माध्यम से इसके प्रमाण देने की कला पर कई कारणों से विश्वस्त हुआ जा सकता है। मधुकर गंगाधर की यह कहानी 'ढिबरी' कई स्तरों पर अपना भेद खोलती है। परत-दर-परत खुलती हुई यह कहानी हर बार अपना नूतन चेहरा दिखाती है।

कहानी एक महिला की प्रसव-वेदना से प्रारम्भ होती है और बच्चे के जन्म का संकेत मात्र देकर चुप हो जाती है। पूरी कहानी में पाठक-वर्ग गोपनीयता और स्पष्टता के सूत्र तलाशने में लगे रहते हैं। पाठकों के इस मानसिक कसरत से कहानी, या कहें कि लेखक बेफिक्र रहते हैं। उन्हें पाठकों यह सूचना देना आवश्यक नहीं लगता कि—ठाकुर वंश में पैदा हुआ सचीत एक मुसहरनी के साथ रह रहा है, क्यों रह रहा है? उस मुसहरनी सोनी के प्रसव समापन में इतनी परेशानी हुई है, क्यों हुई है? गाँव की सामन्ती प्रथा से इतना टक्कर लिया गया, क्यों लिया गया?...वह नवजात शिशु बेटा है या बेटी? ... सारी बातें गोपनीय हैं। पाठक जूझते रहें। गोपनीयता और स्पष्टता से जूझते पाठकों के रुचिपूर्ण मानसिक कसरत को लेखक 'कहानी कला' कहते हैं। कहानी एक औत्सुक्य के साथ समाप्त होती है, जो इसकी पहली पंक्ति से ही पैदा होती है।

कहानी का दूसरा अर्थ प्रतीकार्थ में खुलता है। प्रतीक-योजना की सहज स्वीकार्यता कविताओं में लम्बे समय से थी, कहानियों में प्रतीक-विधन का चलन नया-नया हुआ था। इस नए उपादान से कहानी में अर्थोत्कर्ष दिया जाने लगा था। इस विषय में राजेन्द्र यादव राय हुई कि “कहानी को प्रतीकों ने निश्चय ही सार्थक कलात्मकता और सांकेतिकता प्रदान की है। अन्तर्जगत् के लक्ष्यहीन बहते यथार्थ को लक्ष्य और बहिर्जगत् की लक्ष्योन्मुख दौड़ती वास्तविकता को गहराई दी है। यथार्थ—कथानक—पहले गढ़ा जाता था, फिर उसकी प्रतिक्रिया में विश्रुखिल हो गया—अब उसे सार्थक गठन देने का श्रेय भी प्रतीकों को ही दिया जाएगा। दिलचस्प है कि राजेन्द्र यादव की इस स्थापना से काफी पहले मधुकर गंगाधर के यहाँ और उस दौर के कई कहानीकारों के यहाँ प्रतीकों की मौजूदगी बेशुमार है। हाँ इतना तय है कि प्रतीकों में अर्थ खोलने का कौशल पुख्ता किए बगैर यदि कहानीकार इस पर हाथ साफ करने लगते हैं तो वे प्रतीक पाठकों तक पहुँच नहीं पाते, लिहाजा कहानी चू-चू का मुरब्बा बनकर रह जाती है। निस्सन्देह मधुकर गंगाधर का यह कौशल पुख्ता है और उनकी कई कहानियों पर प्रतीक विधन के हवाले से बात की जा सकती है।

राजेन्द्र यादव की धरणा है कि नई पद्धतियों के अनुसार “वस्तुतः कहानी में प्रतीक, बिम्ब इत्यादि भाषा और शब्दों के स्तर पर नहीं, विषय बोध और उसे ध्वनित भर सकने वाले शिल्प के धरातल पर आते हैं। कहानी की सांकेतिकता शब्दों, या ध्वनि, लहजे की सांकेतिकता नहीं, विषय के प्रस्तुतीकरण, संघटन, कोण, निर्वाह और सब मिलाकर प्रभाव की सांकेतिकता होती है। उसमें वातावरण का संगीत नहीं, प्रभाव का संगीत होता है। विषय बोध से भी पहले कथाकार की समस्या अपने अस्तित्व-बोध की है, उसके प्रति उसके एप्रोच की है—जीवन और परिवेश के प्रति उसकी धरणा और दृष्टिकोण की है। कहानी तो उन सबका परिणाम और प्रतिफलन ही हो सकती है।⁴

इस लिहाज से, शब्दों, पंक्तियों और भाषा-प्रयोगों के आधार पर मधुकर गंगाधर की ‘ढिबरी’ कहानी किसी भी तरह कहानी राजनीतिक होने का संकेत नहीं देती। किन्तु एकदम से सामाजिक लगने वाली यह कहानी जब प्रतीकों के सहारे अपना अर्थ खोलती है तो प्रतीत होता है कि पर्याप्त त्याग, निष्ठा, सहनशीलता, बलिदान आदि से प्राप्त ‘स्वाधीनता’ का अभी संकेत ही मिला है, जैसा कि उस बच्चे के जन्म के पश्चात् ‘चेहों’ का एक स्वर उभरता है। अभी इसका कोई स्वरूप तय नहीं हुआ है अथवा स्पष्ट नजर नहीं आ रहा है। अर्थात् राष्ट्रीय स्वतन्त्रता को कहानीकार ने कई मायने में इस ‘ढिबरी’ कहानी में प्रतीकित किया है। ‘बैल का विद्रोह’ जैसी अन्य कई कहानियों की समीक्षा भी इस तरह की जा सकती है।

लेकिन, मधुकर गंगाधर की ‘कहानी कथा’, ‘कथा मानस’ और ‘कथा भूमि’ का वैशिष्ट्य इन साँचों और फार्मूलों से नहीं निकाला जा सकता। अप्रैल 1959 के ज्ञानोदय में उनके नए संग्रह ‘तीन रंग: तेरह चित्र’ की समीक्षा करते हुए राजकमल चौधरी ने लिखा, “मधुकर गंगाधर ने इस कथा संग्रह की कहानियों द्वारा सामान्यतः भारतीय गाँवों और विशेषतः बिहार के एक इलाका विशेष के गाँवों का ईमानदार और सबल चित्र उपस्थित किया है।...ये कहानियाँ सिर्फ इतनी-सी बात कहती हैं कि देश के गाँव अभी मरे नहीं हैं और बड़ी-बड़ी मशीनों की मुर्दनी ने उन्हें अभी तक •रीद नहीं लिया है। कि अभी भी गाँवों में धान के खेत लहलहाते हैं, आम की डालों पर कोयल कूकती है, गली में खेलते बच्चों के शरीर से धूल झाड़ती हुई माताएँ खिलखिला उठती हैं।” अर्थात् भारतीय कथा-साहित्य में ग्राम्य-जीवन की जो लम्बी परम्परा अपने

पूरे वजूद के साथ स्पष्ट होती रही है, वह मधुकर गंगाधर के यहाँ पूरी तरह अपनी मान-मर्यादा के साथ मौजूद है।⁵

‘ग्राम्य जीवन’ और ‘लोक-तत्त्व’ का सम्बन्ध बहुत भिन्न नहीं है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध बीतते न बीतते हिन्दी कहानियों के विविध रंग अपने पूरे फलक के साथ स्पष्ट होने लगे थे और वहाँ ‘ग्राम्य जीवन’ और ‘लोक-तत्त्व’ का बखूबी उपयोग होने लगा था। अभिप्राय यह नहीं कि ग्राम्य जीवन हिन्दी कहानी के लिए अछूत क्षेत्र था, प्रेमचन्द के यहाँ ग्राम्य जीवन का बहुरंग अपनी तरह से स्पष्ट है। बाद के दिनों में ‘ग्राम्य-जीवन’ और ‘लोक-तत्त्व’ अनूदित रूप में नहीं, मूल रूप में आने लगा था। कुछ आलोचकों ने कहना प्रारम्भ कर दिया कि “जो कहानीकार इतने जागरूक चिन्तक और पैनी सामाजिक दृष्टि वाले नहीं हैं, उन्होंने अछूते जीवन क्षेत्रों का सहारा लेकर पाठकों को अपनी ओर खींचने की कोशिश की है। अपने-अपने अंचल या जनपद के लोक-जीवन को कहानी में ले आने की प्रवृत्ति इसी का परिणाम है। पर ऐसा सोचने वाले विद्वानों की नीयत शायद साफ नहीं थी। साहित्य तो लोक-जीवन के उन परिदृश्यों का इतिहास होता है, जिसकी व्याख्या इतिहासकार नहीं कर पाते हैं। इतिहास तो तत्कालीन सामन्तों, राजाओं और प्रशासकों के जीवन और रहन-सहन की जानकारी देता है। आम जनता के जीवन-बसर की जानकारी तो साहित्य के माध्यम से मिलती है। यदि ‘कीर्तिलता’ और ‘कीर्तिपताका’ नहीं लिखी गई होती, तो शायद उस काल के आम-जनजीवन से रू-ब-रू होना आज असम्भव हो जाता। परवर्ती काल के साहित्यकारों ने इस आवश्यकता को ज्यादा तल्खी से समझा। हिन्दी में फणीश्वर नाथ रेणु, नागार्जुन, राजकमल चौधरी, मधुकर गंगाधर प्रभृति ने इसी आवश्यकता की पूर्ति की। बंगला में देवेश राय, तमिल में सुख समुत्तिरम, मलयालम में एम. मुकुन्दन आदि-आदि कई रचनाकार तमाम भारतीय साहित्य में गिनाए जा सकते हैं, जिन्होंने अछूते जीवन क्षेत्रों को अपने सृजन संसार में सम्मानपूर्वक स्थान दिया और उन रचनाओं से सामान्य जनजीवन के विविध रंग साहित्य में भरे। इस तरह के रचनात्मक प्रयोग से न केवल साहित्य में विषय वैविध्य आया बल्कि साहित्य समृद्ध भी हुआ। मधुकर गंगाधर के कथा संसार पर नजर डालते हुए इस सम्पन्नता का अहसास होता है।⁶

अपने कथा-सृजन के सम्बन्ध में मधुकर गंगाधर का कहना है कि “हमारी कहानियाँ जन्मान्ध धृतराष्ट्र के लिए संजयी रिपोर्टाज नहीं, वह व्यास का रत्तरागी काव्य है...जब तक गाँव में था, गाँव की कहानियाँ लिखी। शहर में रहकर, यहाँ के जीवन, संघर्ष, मानसिकता से एकाकार होने पर शहर की कहानियाँ लिखता रहा हूँ। वस्तुतः मैं तो आदमी के संघर्ष और उसकी विजय की खोज में रहा हूँ—वह गाँव का परिवेश हो, शहर का परिवेश हो या कसबे का परिवेश। आज के भारत का प्रत्येक हिस्सा भौतिक और राजनीतिक रूप से चेतना के स्तर पर जुड़ा हुआ है।”⁷

जाँच-पड़ताल करके देखा जाए तो मधुकर गंगाधर का कथा लेखन इसी सिद्धान्त वाक्य का व्यावहारिक पक्ष है। जीवन संग्राम के कुरुक्षेत्र में ये वाकई धृतराष्ट्र की तरह संजय की आँखों के साथ नहीं, अपनी खुली आँखों के साथ घूमते रहे हैं और अपने पाठकों को उसके सूक्ष्मतर तन्तुओं के चित्र आपूरित करते रहे हैं। आम जनजीवन को मर्माहत करती कहानी ‘बैल का विद्रोह’ में राजनीतिक बहेलियों के सारे षडयन्त्र, सारी चालाकियाँ खुलकर सामने आती हैं। भोली जनता के रचनात्मक कदम उठकर भी उलझ जाते हैं। यह कहानी भारतीय राजनीति के उस रहस्य को उजागर करने का मुख्य-द्वार है, जिसमें वंचनाओं का रोमांचक जखीरा है। जनमत के व्यापारी जानते हैं कि उनका वजूद जनकृपा से है, इसलिए वे चाहेंगे

कि आम नागरिक को महत्त्व बेशक न दें, पर महत्त्व देने का नाटक और प्रचार अवश्य करें, ताकि भ्रम बना रहे।

मधुकर गंगाधर की कहानी 'खून' उनकी विलक्षण दृष्टि, ग्रामीण राजनीति पर सूक्ष्म पकड़ और मानवीय हरकतों का बेहतरीन उदाहरण है। आम नागरिक को यह कहानी समझा चुकी है कि भारतीय गणतन्त्र एक ध्येय है, यहाँ की न्यायिक प्रक्रिया एक धर्मान्धता है, 'पंचायत' का फैसला एक पाखण्ड है, जैसे कोई कामी जेठ अनुजवधू के सिर पर घूँघट डाले। मधुकर गंगाधर के सारे पात्र और पाठक भी ये बातें जान गए हैं। न्यायालय और पंचायतों से उनके पात्र का विश्वास उठ चुका है, वे अपना फैसला खुद करते हैं, खुद ही अपराधियों को दण्ड देते हैं। भारतीय दण्ड विधान पर निर्भर रहकर वे कुण्ठित और कमजोर नहीं होना चाहते। 'खून' का 'तेतर' 'अजोधिया' के खून का प्यासा है, दारोगा के सामने उसे पहचानने से मुकर जाता है, पर गुस्से में खूँरी लेकर उसे काटने आया तेतर, भयभीत देखकर उसके मुण्ड पर थूक फेंककर लौट आता है। कथा समाप्ति के बाद घटनाओं के इस पाठक एकाएक कई प्रश्नों से टकराने लगते हैं। क्या तेतर ने अजोधिया को डरपोक, औरत के प्रेम का आश्रित, रंगता हुआ कीड़ा समझकर छोड़ दिया? उस डरपोक कीड़े को मारकर उसे अपना पौरुष गन्दा नहीं करना था? या एक स्त्री की सिन्दूर पूरित माँग देखकर उसकी नैतिकता प्रबल उठी...? या एक व्यक्ति के साहस की हत्या को ही उसने अपने शत्रु की हत्या समझ ली...? मधुकर गंगाधर की कहानियाँ इन्हीं प्रश्न-गुच्छों के साथ समाप्त होती हैं और मानव जाति की विजय और भारतीय व्यवस्था के पाखण्ड की नग्नता का चित्र प्रस्तुत करती हैं।

'हिरना की आँखें' तथा 'कागभाख'—कहानियाँ प्राचीन लोक-कथा की बुनियाद पर खड़ी हुई हैं, पर कथाकार ने इनमें अजीब-सी नूतनता और चमत्कृत करने वाला एप्रोच भरा है। यहाँ उनकी कुछेक कहानियों की चर्चा के सहारे ही उनके कथाकौशल और उन कहानियों की सामाजिक उपादेयता पर बात की जा रही है। उनकी दृष्टि हरदम उन उद्देश्यों पर टिकी रहती है जहाँ से उनके पाठक चौंक उठते हैं, पूरे पाठ के दौरान मन्त्रमुग्ध रहते हैं, कथा समाप्ति प्रश्नों और सम्भावनाओं से घिर जाते हैं। विलक्षण भाषा, जनपदीय मुहावरों, लोकोत्तियों, लोकाचारों के चमत्कारपूर्ण उपयोग, लोक-जीवन के टोटकों के शोषण, पाखण्डों पर व्यंग्य-व्यवहार आदि के कारण ही सम्भवतः ऐसा हो सका है। 'हिरन की आँखें' में लछना, छबीला चौकीदार, महिन्नर बाबू, बसमतिया की माय, लोधू ...सब प्रसन्न हैं, बस एक बसमतिया दुखी और आहत है। यह कहानी प्रेम का त्रिकोण गढ़ती है या अर्थ का त्रिकोण गढ़ती है, आत्म-स्थापन का या आत्म-विजय का या फिर तात्कालिक लिप्सा के मूल्य पर नैतिकता भूलकर अराजकता का चित्र प्रस्तुत करती है—यह समझना जरूरी है।

मधुकर गंगाधर एक तरफ बड़े धीरज से कहानी कहने के आदी हैं, तो दूसरी तरफ तीव्र तरंगायित समुद्र की लहरों पर पाठकों को उछाल-उछालकर विहार कराते हैं। विषय-प्रसंग की बची-खुची अर्थ-छवियाँ, जिज्ञासाएँ उनके कथा-शिल्प में खुलती हैं, अर्थात् उनकी कहानियाँ भाव-बोध के फलक को विस्तार देती हैं। 'हिरना की आँखें' में स्पष्ट उल्लेख नहीं होने के बावजूद कहानी रचाव से कुछ जिज्ञासाएँ उठती हैं—क्या बसमतिया और लोधू के प्रेम प्रतिद्वन्द्वी का परोक्ष हो जाना ही लोधू की प्रसन्नता का कारण है? प्रेम सम्बन्ध बसमतिया और लोधू के बीच है, या बसमतिया और महिन्नर बाबू के बीच? जैसा बसमतिया के पिता समझते हैं, महिन्नर बाबू वाकई देवता हैं? बसमतिया के माँ-बाप को पता है कि महिन्नर बाबू क्यों देवता हैं और छबीला चौकीदार क्यों धन-सम्पन्न व्यक्ति हो गया...? 'उठे हुए हाथ', 'दाँत' जैसी कहानियाँ भी पाठकों को ऐसी ही जिज्ञासाओं से उद्वेलित करती हैं।

मधुकर गंगाधर को अपनी कहानियों में मारपीट, खून-खराबा, बन्दूक-पिस्तौल, लाठी-भाला आदि से कोई परहेज नहीं है। उनके पात्रों को भारत के नागरिक-पंचायत अथवा न्याय-पद्धति पर कोई आस्था नहीं है। उनके पात्र कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की अपनी व्यवस्था लागू करते हैं। आरक्षी और दण्डविधान के संचालन हेतु वे खुद को सक्षम समझते हैं। अपराधी को दण्ड देने के निर्णय में, और निर्णय को लागू करने में समय नहीं लगते। कत्ल तक का निर्णय और क्रियान्वयन बड़े आराम से करते हैं। उदाहरणस्वरूप कई कहानियाँ हैं—‘उठे हुए हाथ’ की ‘बसन्ती’ और ‘बसन्ती’ के बेटे के निर्णय से नैतिकता के सारे शास्त्र और न्यायालय के सारे अनुच्छेद विवर्ण हो उठते हैं। ‘फाँसी’ की ‘गीता’ का विवरण भारतीय न्यायिक पद्धति का निर्लज्ज नमूना है।

उनके ज्यादातर पात्र सामाजिक व्यवस्था से ऊबे हुए हैं। ऊबकर अपनी दयनीयता पर वे रोते नहीं, उस व्यवस्था को तिलांजलि देकर, अनुकूल व्यवस्था बनाते हैं और ऊब की स्थिति लाने वालों को दण्डित करते हैं, पाठकों को सन्देश देते हैं कि इस व्यवस्था से मुक्ति ही जीवन की सार्थकता होनी चाहिए। साहस मनुष्य को सब कुछ दे सकता है। वे आश्वस्त हैं कि इस समाज का मनुष्य भूखे शेर के पिंजरे में खड़े मनुष्य से अधिक असुरक्षित है। हथियार उठाए बगैर इस समाज में जीया नहीं जा सकता। स्थपित व्यवस्था पर आस्थावान होने का अर्थ है—घुट-घुटकर मरते हुए जीना, मर-मरकर मर जाना, आकाओं की नाजायज सन्तानों का बाप बनना, उनके तलुवे चाटकर भूख मिटाना, उनके थूक चाटकर प्यास भगाना। जाहिर है कि उनकी कहानियों का यह तेवर उनके राजनीतिक आग्रह का सूचक है। भारतीय गणतन्त्र और प्रशासनिक व्यवस्था की उनकी अपनी परिकल्पना है। पर इस धरणा के कारण समाज-व्यवस्था में नकार, स्वेच्छाचारिता, नृशंसता का जैसा परिदृश्य व्याप्त हुआ, जिस तरह की विकृतियाँ उत्पन्न हुईं, मधुकर गंगाधर यह देखते रहे हैं। उन प्रसंगों पर सम्भवतः उनकी कोई कहानी नहीं आई। नक्सली झण्डा ओढ़कर नरसंहार, डकैती, लूटपाट करने वालों के कुकृत्य पर नक्सलियों ने सुचिन्तित दृष्टि से विचार भी किया, ऐसा संकेत उनकी रचनाओं में कहीं नहीं है। स्वेच्छाचारिता समाज के इन्सानों को हैवान बनने की प्रेरणा देगी, इस बात से मुकरा नहीं जा सकता।

निष्कर्ष

किसी रचनाकार की रचनाओं की गिनती, उत्तम-मध्यम-अधम का वर्गीकरण कोई स्वस्थ विचार नहीं है। किसी रचनाकार ने अपने परवर्तियों को एक भी श्रेष्ठ रचना दे दी, तो समझा जाना चाहिए कि वह गुणमुत्त हो गया। इस अर्थ में मधुकर गंगाधर गुणमुत्त हैं। यद्यपि ‘चरित्र’, ‘गन्ध’, ‘वशीकरण’ जैसी कुछ कहानियों में उग्र और अनियन्त्रित क्रोध के कारण उन्हें अपेक्षित सफलता नहीं मिली है। वैयक्तिक शैतानियों से लहलुहान मानवता के चेहरे का चित्र उनकी कई कहानियों में पाठकों को उद्बलित करता है। उनमें मानवीय मूल्य के प्रति कहानीकार की गहन चिन्ता उनकी रचनात्मकता के प्रति आश्वस्त करता है। पर ‘चरित्र’ की व्याख्या, ‘गन्ध’ का आकर्षण, ‘वशीकरण’ का महत्त्व जितना है, उन्हें परिपक्व होने देने का इन्तजार उन्होंने नहीं किया। सम्भवतः इसी कारण कुछ पाठक विश्वसनीयता के क्षरण का शिकार हुए होंगे, और एक महत्त्वपूर्ण बात ग्रहण करने से वंचित रह गए होंगे। क्रोधवेश के कारण ऐसी कहानियाँ किशोरों की कुपित चर्चा बनकर रह गई। एक विराट् व्यंजना का सन्देश आना था, सो आया अवश्य, पर ऐसी कुछ कहानियों का अहित तो हो गया। इनमें कहानीकार अपने उद्देश्य पर एकाग्र नहीं हैं, डाल-डाल पर उछल उछलकर अपनी खीझ स्पष्ट करना चाह रहे हैं। फलतः बात ऊबाऊ हो गई है। उल्लेखनीय है कि मधुकर

गंगाधर की भाषा और रचनाशीलता में गाँव का वातावरण, रंग की तरह घुला हुआ है। गाँव के सहारे वे जब कभी अपने पाठकों के सामने आते हैं, कहीं अधिक आकर्षक, प्रिय, अनुभवी और अपने लगते हैं।

संदर्भ-सूची

1. मधुकर गंगाधर की कहानियाँ खंड-1 संगीता रघुवंशी, मुकुल प्रकाशन दिल्ली, संस्करण-2010
2. डॉ० मधुकर गंगाधर की साहित्य साधना, डॉ० वरुण कुमार तिवारी, मुकुल प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण-2013
3. डॉ० गौरीनाथ झा के निबंध, डॉ० गौरीनाथ झा, मुकुल प्रकाशन, दिल्ली प्रथम संस्करण, 2016
4. शब्द और कर्म मैनेजर पांडेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली परिवर्धित संस्करण 1997
5. डॉ० मधुकर गंगाधर की कहानी यात्रा, डॉ० वरुण कुमार तिवारी, मुकुल प्रकाशन दिल्ली संस्करण-2015
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल- हिन्दी साहित्य का इतिहास - अनुपम प्रकाशन
7. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी - साहित्य सहचर - लोकभारती प्रकाशन - इलाहाबाद

9135131333 , 9905806624

Email id- kalpnachunni18@gmail.com



छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक का वित्तीय समावेशन में योगदान

Dr. Deepa Dewangan

Assistant Professor Commerce,
Govt. Sukhram Nage Mahavidyalay Nagari, Dist.- Dhamtari C.G.

Pawan Kumar Tamrakar

H. O. D.
Department Of Commerce,
Assistant Professor,
Sant Gurughasis Govt. P. G. College

सारांश (Abstract):-

भारत में वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) एक ऐसा प्रयास है जिसके माध्यम से समाज के सभी वर्गों तक बैंकिंग और वित्तीय सेवाओं की पहुंच सुनिश्चित की जाती है छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक राज्य में वित्तीय समावेशन को साकार करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है यह शोध पत्र छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक द्वारा वित्तीय समावेशन के अंतर्गत किए गए प्रयासों, उपलब्धियों तथा चुनौतियों का विश्लेषण करता है।

प्रस्तावना :-

भारत में वित्तीय समावेशन का उद्देश्य समाज के अंतिम व्यक्ति तक औपचारिक बैंकिंग सेवाओं की पहुंच सुनिश्चित करना है ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले लोग पारंपरिक बैंकिंग संलग्न हैं। जिन्हें वित्तीय समावेशन के माध्यम से जोड़ा जा रहा है। इस दिशा में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, विशेषकर छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक, एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह शोध पत्र छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक के कार्यों, उपलब्धियों और चुनौतियों का विश्लेषण करता है।

वित्तीय समावेशन की अवधारणा –

वित्तीय समावेशन का तात्पर्य है उन सभी व्यक्तियों और व्यवसायों को वित्तीय सेवाओं की समुचित और सस्ती पहुंच प्रदान करना, जो अब तक बैंकिंग सेवाओं से वंचित हैं इसमें बचत, ऋण, बीमा, भुगतान सेवाएं और वित्तीय साक्षरता शामिल होती है। वित्तीय समावेशन के माध्यम से समाज के पिछड़े वर्गों को मुख्यधारा में लाया जा सकता है।

शोध का उद्देश्य:-

1. छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक की बैंकिंग सेवाओं की पहुंच का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक द्वारा शुरू की गई योजनाओं की समीक्षा करना।
3. वित्तीय समावेशन में बैंक की सफलता और विफलताओं का विश्लेषण करना।

4. नीति-निर्माताओं के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध की कार्यप्रणाली –

यह शोध मुख्यतः द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। बैंक की वार्षिक रिपोर्ट, वित्तीय समावेशन पर सरकारी प्रकाशन, रिजर्व बैंक की रिपोर्ट, NABARD तथा अन्य अनुसंधानों से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है।

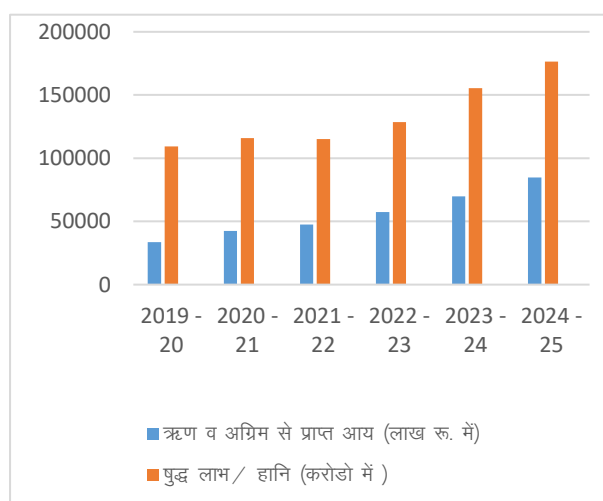
छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक का संक्षिप्त परिचय :-

(छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक की स्थापना 1 फरवरी 2013 को भारतीय स्टेट बैंक (SBI) के प्रायोजन में हुई थी। इसका मुख्यालय रायपुर में स्थित है और इसकी शाखाएं प्रदेश के सभी जिलों में फैली हुई हैं। इसका उद्देश्य ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बैंकिंग सेवाओं के माध्यम से सशक्त बनाना है।)

छ.ग. राज्य ग्रामीण बैंक की स्थापना 2 Sep. 2013 को की गई थी यह दो ग्रामीण बैंको- छ.ग. ग्रामीण बैंक व छ.ग. राज्य ग्रामीण बैंक को मिलाकर बनाया गया था इस बैंक का नेटवर्क ग्रामीण और अर्द्ध शहरी इलाकों में पकड़ को मजबूत किए हुए है। इन बैंकों का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाएं पहुंचाना, किसानों को कृषि ऋण, अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराना, स्वयं सहायता समूह (SHGS) को प्रोत्साहन देना, लघुउद्योग, हस्तशिल्प, पशुपालन और ग्रामीण विकास योजनाओं को बढ़ावा देना, केंद्र और राज्य सरकार की योजनाओं को ग्रामीण जनता तक पहुंचाना, बैंकिंग सेवाओं में बचत खाता, चालू खाता, सावधि जमा, किसान क्रेडिट कार्ड, लोन (कृषि ऋण, पशुपालन ऋण, स्वरोजगार ऋण), डिजिटल बैंकिंग (AEPS, मोबाइल बैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग), सरकारी योजनाओं का भुगतान (DBT, पेंशन, मनरेगा मजदूरी आदि) शामिल हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक में ऋण व अग्रिम की स्थिति

वर्ष	ऋण व अग्रिम से प्राप्त आय (लाख रु. में)	शुद्ध लाभ/ हानि (करोड़ों में)
2019 - 20	33572.58	109405.44
2020 - 21	42419.90	115910.23
2021 - 22	47536.68	115079.98
2022 - 23	57388.32	128499.29
2023 - 24	69710.22	155335.22
2024 - 25	84685.22	176533.25



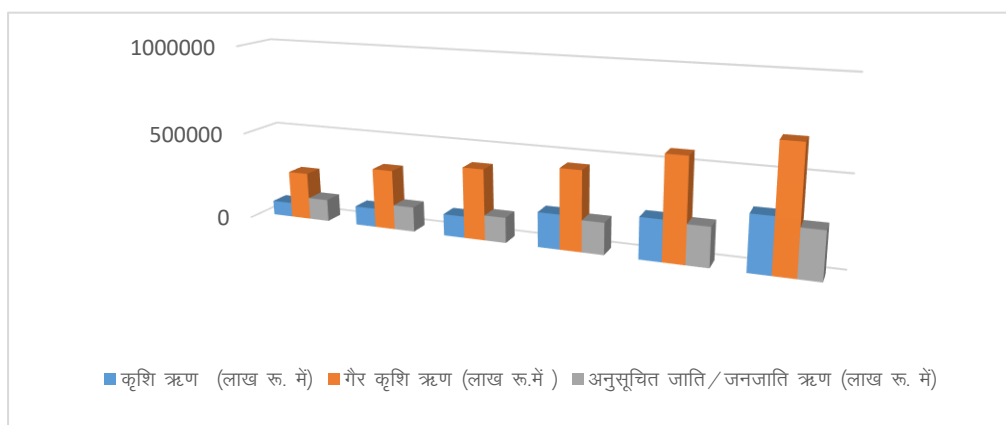
उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि बैंक की ऋण एवं अग्रिम से प्राप्त आय हर वर्ष बढ़ी है वर्ष 2019-20 में 3.35 लाख रु से वर्ष 2024-25 में 8.46 रु लाख तक पहुंची पाच वर्षों में लगभग 152 % की वृद्धि हुई इसी प्रकार शुद्ध लाभ व हानि भी 1.09 लाख रु से बढ़कर 1.76 लाख पहुंची यानी लगभग 61% की वृद्धि दर्ज की गयी इससे ज्ञात होता है कि छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक की वित्तीय स्थिति पिछले कुछ वर्षों में लगातार मजबूत और स्थिर बनी हुई है। बैंक की कुल जमा राशि में निरंतर वृद्धि यह दर्शाती है कि ग्राहकों का विश्वास और जुड़ाव बढ़ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों के विस्तार को प्रोत्साहन मिला है।

भविष्य में बैंक को कृषि, लघु उद्योग, स्वरोजगार और महिला स्व-सहायता समूहों को अधिक ऋण प्रदान करने पर बल देना चाहिए ताकि आर्थिक विकास को और बढ़ावा दिया जा सके।

कुल मिलाकर बैंक की प्रगति सकारात्मक, स्थिर और ग्रामीण विकास उन्मुख रही है यह संस्थान ग्रामीण जनता की जरूरत को पुरा करते हुए वित्तीय समावेशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

छ.ग.राज्य ग्रामीण बैंक द्वारा उपलब्ध कराए गए ऋणों की स्थिति

वर्ष	कृषि ऋण (लाख रु. में)	गैर कृषि ऋण (लाख रु. में)	अनुसूचित जाति/जनजाति ऋण (लाख रु. में)
2019 - 20	82187.58	268907.25	124645.38
2020 - 21	107356.10	337817.71	140045.00
2021 - 22	122182.38	398928.90	142073.75
2022 - 23	194567.59	447060.10	177213.08
2023 - 24	230154.96	573212.67	219317.54
2024 - 25	309790.50	689649.14	265873.99



उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कृषि ऋण वर्ष 2019-20 में 82187.58 लाख रु. था जो वर्ष 2024-25 में 309790.50 रहा। यह स्पष्ट करता है कि बैंक ने किसानों को फसल ऋण, कृषि उपकरण, सिंचाई और पशुपालन के लिए ऋण वितरित में भारी वृद्धि की है ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने में यह वृद्धि सकारात्मक है उसी प्रकार गैर कृषि ऋण वर्ष 2019-20 में 268907.25 से बढ़कर वर्ष 2024-25 में 689649.14 रहा है। इसमें व्यापार लघु उद्योग, सेवा क्षेत्र और स्वरोजगार योजनाएं शामिल हैं बैंक ने ग्रामीण युवाओं को स्वावलंबन और रोजगार सृजन के लिए अधिक ऋण देना शुरू किया है। वैसे ही अनुसूचित जाति/जनजाति ऋण वर्ष 2019-20 में 124645.38 रु से बढ़कर वर्ष 2024-25 में 265873.99 रु हो गया जो बताता है कि बैंक ने सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के सशक्तिकरण के लिए योजनाबद्ध रूप से वितरण बढ़ाया है इससे समावेशी विकास को बढ़ावा मिला है।

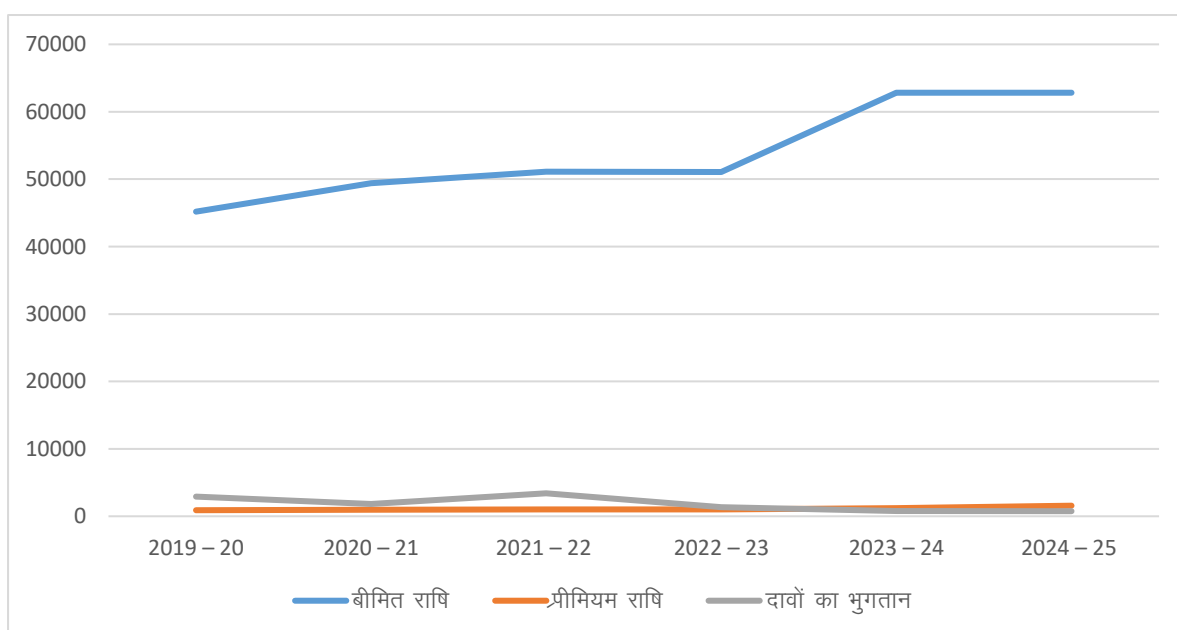
तीनों ही क्षेत्रों (कृषि, गैर कृषि Sc/St) में लगातार वृद्धि देखी गई है बैंक का ध्यान अब केवल कृषि पर नहीं बल्कि विविध आर्थिक गतिविधियों पर भी केंद्रित है यह नीति बैंक की वित्तीय पहुंच बढ़ाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

फसल बीमा की स्थिति

(लाख रु. में)

वर्ष	बीमित राशि	प्रीमियम राशि	दावों का भुगतान
2019 – 20	45184.66	897.86	2903.00
2020 – 21	49414.48	985.49	1838.93
2021 – 22	51100.30	1004.40	3407.15
2022 – 23	51084.98	1021.70	1369.19
2023 – 24	62828.30	1202.64	789.13
2024 – 25	62828.30	1570.20	750.42

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि छ.ग. राज्य ग्रामीण बैंक ने वर्ष 2019-20 से 2024-25 तक के छह वर्षों में अपने बीमा व्यवसाय में निरंतर वृद्धि की है। इस अवधि में बैंक की बीमित राशि 45184.66 लाख रु से बढ़कर 62828.30 लाख रु लाख हो गई अर्थात् लगभग 39% की वृद्धि दर्ज की गई। बैंक की प्रीमियम राशि भी 897.86 से बढ़कर 1570.20 तक पहुंचा जो बैंक की ऋण क्षमता और वित्तीय सुदृढ़ता को दर्शाता है वहीं दावों का भुगतान 2903 लाख रु. से घटकर 750.42 लाख रु रह गया यानी क्लेम का प्रतिशत 6.43% से घटकर केवल 1.19% हो गया जो कि लगभग 81% की कमी को दर्शाता है।



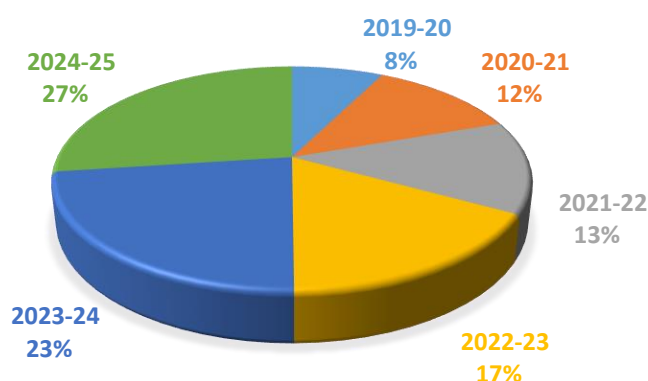
यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि बैंक ने अपने बीमा कारोबार में उत्कृष्ट जोखिम नियंत्रण और ग्राहक विश्वास को विकसित किया है।

कुल मिलाकर बैंक ने बीमा क्षेत्र में एक संतुलित, विश्वसनीय और प्रगतिशील संस्था के रूप में अपनी पहचान बनाई है जिससे न केवल व्यावसायिक वृद्धि हासिल की है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सुरक्षा और बीमा जागरूकता को भी मजबूती दी है।

मोबाइल बैंकिंग की स्थिति

वर्ष	मोबाइल बैंकिंग
2019-20	710463
2020-21	1165952
2021-22	1280138
2022-23	1608653
2023-24	2198730
2024-25	2588585

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि पिछले छह वर्षों (वर्ष 2019-20 से 2024-25) में छः राज्य ग्रामीण बैंक ने मोबाइल बैंकिंग के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति की है वर्ष 2019-20 में जहां मोबाइल बैंकिंग उपयोगकर्ताओं की संख्या मात्र 710463 थी वही 2024-25 तक यह संख्या बढ़कर 2588585 हो गई यानि बैंक ने डिजिटल बैंकिंग उपयोग में लगभग 2.6 गुना वृद्धि दर्ज हो गई है जो बैंक को निरंतर डिजिटल यात्रा और ग्राहक विश्वास को दर्शाती है।



इस अवधि में बैंक में अपने मोबाइल बैंकिंग प्लेटफार्म को अधिक उपयोगी सरल और सुरक्षित बनाया। ग्रामीण या शहरी क्षेत्रों में डिजिटल वित्तीय साक्षरता के प्रसार से लोगो में मोबाइल बैंकिंग की स्वीकार्यता बढ़ी। बैंक ने अपने कर्मचारियों (business correspondents) और शाखा स्तर पर ग्राहक को डिजिटल लेनदेन के प्रति प्रेरित किया जिसके परिणाम स्वरूप मोबाइल बैंकिंग का उपयोग केवल शहरो तक सीमित न रहकर गावों तक पहुंच गया।

छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक की समस्याएं एवं उनके समाधानों हेतु सुझाव

छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक कर चुनौतियां और समस्याओं से जूझ रहा है जिनके कारण इसका कार्य निष्पादन अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंच पा रहा है।

प्रमुख समस्याएं

1 कर्ज वसूली की समस्या

ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों की आय अथिरी होने के कारण ऋण की वसूली समय पर नहीं हो पाती प्राकृतिक आपदाएं फसल को नुकसान और बाजार मूल्य में गिरावट से ऋण वापसी की स्थिति कमजोर होती है।

कुछ मामलों में जानबूझकर भुगतान करने की प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है।

2 तकनीकी चुनौतियां

डिजिटल बैंकिंग की सुविधाएं (जैसे मोबाइल बैंकिंग इंटरनेट बैंकिंग) गांवों में सीमित स्तर पर ही उपयोग हो रही है।

नेटवर्क की समस्या और ग्रामीण ग्राहकों की तकनीकी जानकारी का अभाव भी बड़ा अवरोध है।

3 ग्राहक जागरूकता का अभाव

ग्रामीण उपभोक्ताओं में वित्तीय साक्षरता कम है

वे ऋण प्रक्रिया सरकारी योजनाओं और डिजिटल सेवाओं की जानकारी से वंचित रहते हैं।

4 सीमित शाखा एवं कर्मचारी समस्याएं

ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाओं की संख्या पर्याप्त नहीं है।

कई शाखाओं में स्टाफ की कमी होती है जिससे ग्राहकों को समय पर सेवाएँ नहीं मिल पाती।

कर्मचारियों पर कार्यभार अधिक होता है।

5 नियामक एवं नितिगत कठिनाइयां

विभिन्न सरकारी एवं नियामक संस्थाओं से जुड़े नियमों का अनुपालन ग्रामीण ग्राहकों तक पहुंचाना कठिन बनाता है।

कागज प्रक्रिया लम्बी होने से ऋण वितरण धीमा पाता है।

6 प्रतिस्पर्धा का दबाव

निजी बैंकों और माइक्रोफाइनेंस संस्थानों की आक्रामक नीतियों से ग्रामीण बैंक दबाव हो जाता है।

किसान और ग्रामीण ग्राहक अक्सर उन संस्थानों से ऋण ले लेते हैं जहां प्रक्रिया सरल होती है।

समाधान हेतु सुझाव

1 कर्ज वसूली सुधार के उपाय

- किसानों को फसल बीमा से जोड़ना ताकि प्राकृतिक आपदाओं की स्थिति में ऋण चुनौती पर असर न पड़े।
- स्व सहायता समूह और किसान उत्पाद संगठन के माध्यम से सामूहिक ऋण वसूली की प्रणाली लागू करना।
- समय पर भुगतान करने के वाले ग्राहकों को विशेष प्रोत्साहन (जैसे ब्याज में छूट) देना।

2 डिजिटल बैंकिंग को बढ़ावा

- ग्रामीण क्षेत्रों में CSC और बैंक मित्र माडल को और मजबूत करना।
- मोबाइल वैन बैंकिंग या डिजिटल शिविर आयोजित करके लोगों को लेनदेन में सक्षम बनाना।
- ग्राहकों को UPI मोबाइल एप और इंटरनेट बैंकिंग के उपाय का प्रशिक्षण देना।

3 वित्तीय साक्षरता अभियान

- गांव में वित्तीय साक्षरता शिविर लगाना।
- स्कूल कालेज और पंचायत स्तर पर बैंकिंग जागरूकता कार्यक्रम चलाना।
- स्थानीय भाषा और सरल शब्दों में योजनाओं की जानकारी देना।

4 शाखा विस्तार और कर्मचारी विकास

- ग्रामीण अंचलों में और अधिक शाखाएं खोलना।
- कर्मचारियों को स्थानीय संस्कृति एवं भाषा का प्रशिक्षण देना।
- कार्यभार को संतुलित करने हेतु आधुनिक तकनीक और डिजिटल साधनों का उपयोग करना।

5 नीतिगत सुधार

- ऋण प्रक्रिया को सरल और कागज रहित बनाना।
- ग्रामीण ग्राहकों के लिए विशेष योजनाएं तैयार करना। जैसे किसान क्रेडिट कार्ड पशुपालन ऋण महिला उद्यमिता ऋण।

6 प्रतिस्पर्धा का सामना

- निजी बैंकों की तरह त्वरित और सरल सेवा उपलब्ध कराना।
- ग्रामीण बैंक के ग्राहकों और लघु बीमा पेंशन और माइक्रो लोन जैसी अतिरिक्त सुविधाएं देना।
- स्थानीय स्तर पर भरोसेमंद छवि लगाना।

छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक ग्रामीण विकास और वित्तीय समावेशन का एक मजबूत साधन है। यदि बैंक अपनी कार्यप्रणाली में तकनीकी नवाचार, ग्राहक जागरूकता ऋण वसूली व्यवस्था और शाखा विस्तार पर विशेष ध्यान दें तो यह राज्य की अर्थव्यवस्था को और अधिक मजबूत बना सकता है सरकार और बैंक दोनों के संयुक्त प्रयास से यह संस्थान ग्रामीणों के जीवन स्तर में सुधार और आत्मनिर्भर भारत के लक्ष्य की पूर्ति में अहम भूमिका निभा सकता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि छ.ग. राज्य में ग्रामीण बैंक मुख्य रूप से कृषि और ग्रामीण विकास पर ध्यान देता है इसका ऋण वितरण मुख्य रूप से इन क्षेत्रों में होता है—

1 अल्पकालीन कृषि ऋण—किसानों को बीज खाद, कीटनाशक, सिंचाई व अन्य कृषि कार्यों के लिए यह ऋण अधिकतर किसान क्रेडिट कार्ड (KCC) के माध्यम से दिया जाता है

बैंक का लगभग 40–45% ऋण पोर्टफोलियो कृषि क्षेत्र को दिया जाता है

2 दीर्घकालीन कृषि ऋण टैक्टर, कृषि उपकरण, नलकूप, बागवानी, डेयरी, मत्स्य, पालन आदि के

3 लघु कुटीर उद्योग ऋण—ग्रामीण उद्यमियों को रोजगार के लिए

4 स्वयं सहायता समूह (SHGS) ऋण—महिला समूह और ग्रामीण स्वरोजगार योजनाओं को वित्तीय सहयोग

5 शैक्षिक व आवासीय ऋण—ग्रामीण विद्यार्थियों और परिवारों की आवश्यकताओं के लिए।

वित्तीय समावेशन में छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक ने ग्रामीण क्षेत्र में बैंकिंग सेवाओं को पहुंचाने में बड़ी भूमिका निभाई है। विशेषकर

1 जनधन योजना खाते—लाखों ग्रामीण परिवारों के बैंक खाते खोले गए। इनमें सीधे सरकारी योजनाओं की राशि (DBT) आता है।

2 किसान क्रेडिट कार्ड (KCC) वितरण—बड़ी संख्या में किसानों को कार्ड दिए गए, जिससे समय पर ऋण उपलब्ध हुआ।

3 महिला सशक्तिकरण—स्वयं सहायता समूहों को ऋण और बैंकिंग सुविधा दी।

4 डिजिटल बैंकिंग—ग्रामीणों को AEPS रूप कार्ड मोबाइल बैंकिंग व UPI जैसी सुविधाएं दी।

5 सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन — मनरेगा मजदूरी, वृद्धावस्था पेंशन, छात्रवृत्ति आदि सिर्फ लाभार्थियों को खाते में भेजी जाती हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक राज्य के ग्रामीण विकास और वित्तीय समावेशन में एक अहम भूमिका निभा रहा है यह बैंक किसानों को समय पर अल्पकालीन और दीर्घकालीन ऋण देकर उनकी कृषि उत्पादकता बढ़ाता है साथ ही ग्रामीण जनता को बचत और डिजिटल बैंकिंग से जोड़कर आर्थिक रूप से सशक्त बनाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography with Page Numbers)

1. भारतीय रिजर्व बैंक। भारत में ग्रामीण बैंकिंग व्यवस्था पर अध्ययन रिपोर्ट। मुंबई भारतीय रिजर्व बैंक प्रकाशन 2022 पृ. 45–62
2. भारत सरकार, वित्त मंत्रालय। ग्रामीण विकास और बैंकिंग प्रणाली। नई दिल्ली आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट 2023 पृ. 112–128
3. छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक। वार्षिक प्रतिवेदन (Annual Report), 2018–2024। रायपुर सी.आर.जी.बी. मुख्यालय पृ. 10–35।
4. राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) ग्रामीण बैंकिंग में वित्तीय समावेशन की भूमिका। मुंबई नाबार्ड प्रकाशन 2021 पृ. 78–95

5. शर्मा आर. के. ग्रामीण बैंकिंग प्रणाली और आर्थिक विकास। नई दिल्ली अटल पब्लिशिंग हाउस 2020 पृ. 52–69
6. तिवारी एस. पी. छत्तीसगढ़ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की भूमिका। रायपुर विश्वविद्यालय 2022 पृ. 101–120
7. जोशी मीना। भारत में वित्तीय समावेशन की दिशा में ग्रामीण बैंकिंग का योगदान। भारतीय आर्थिक जर्नल खंड 45 अंक 2 पृ. 33–49
8. पाण्डेय सुनील। ग्रामीण बैंकिंग चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ। लखनऊ आर्थिक दृष्टिकोण प्रकाशन 2019 पृ. 88–105
9. राय. अशोक छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक का सामाजिक–आर्थिक प्रभाव। दुर्ग विश्वविद्यालय 2023 पृ. 56–74
10. वेबसाइट स्रोत
<https://www.crgbbank.in> - छत्तीसगढ़ राज्य ग्रामीण बैंक की आधिकारिक वेबसाइट (देखा गया 10 अक्टूबर 2025)
<https://www.nabard.org> — नाबार्ड से संबंधित ग्रामीण बैंकिंग डेटा पृ. ऑनलाइन रिपोर्ट अनुभाग।
<https://www.rbi.org.in> — भारतीय रिजर्व बैंक की वार्षिक की रिपोर्ट 2024–25 पृ. 90–112



পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের দৃষ্টিতে বিশেষপদার্থ সুদীপ্ত মণ্ডল

গবেষক, সংস্কৃত বিভাগ, যাদবপুর বিশ্ববিদ্যালয়, কলকাতা, ভারত

সারসংক্ষেপ : বৈশেষিকদর্শন স্বীকৃত সপ্তপদার্থের অন্যতম হল 'বিশেষ'। বিশেষ পদার্থ হচ্ছে অন্ত্য অর্থাৎ নিত্য এবং তা কেবল নিত্যদ্রব্য বা কেবল এক একটি পরমাণুতে থাকে। কিন্তু রঘুনাথ শিরোমণি তাঁর পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থে বিশেষ পদার্থ আলোচনামধ্যে বলেছেন — প্রমাণ না থাকায় বিশেষ পদার্থান্তর নয়। প্রাচীনগণের মতে বিশেষ যেকোনো ব্যাবর্তক ধর্মান্তর ছাড়াই স্বতঃ ব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে সেরূপে পরমাণু প্রভৃতি নিত্য দ্রব্যগুলিও স্বতোব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে। পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের দৃষ্টিভঙ্গিতে বিশেষ পদার্থের যত্নকিঞ্চিত্ত আলোচনা পরিবেশনের একটা প্রচেষ্টা রইল বর্তমান প্রবন্ধে।

সূচক শব্দ : বিশেষ, বৈশেষিক, পদার্থ।

বিশেষ পদার্থের সাথে সম্বন্ধ বা সংসৃষ্ট একরূপ অর্থে 'সংসৃষ্টে' (পা.সূ — ৪/৪/২২) এই সূত্রানুসারে বিশেষ শব্দের উত্তর ঠক্-প্রত্যয় করে 'ঠস্যেকঃ' (পা.সূ — ৭/৩/৫০) এই সূত্রানুসারে ঠ্-কারের স্থানে 'ইক্' আদেশ করে এবং 'তদ্ধিতেষ্বচামাদেঃ' (পা.সূ — ৭/২/১১৭) এই সূত্রানুসারে 'আদি অচ্' এর অর্থাৎ 'বি'-ঘটক ই-কারের বৃদ্ধি ঐকার করে 'বৈশেষিক' শব্দ নিষ্পন্ন হয়। এর অর্থ হল বিশেষ পদার্থ সম্বন্ধ দর্শন।

বৈশেষিকদর্শন স্বীকৃত সপ্তপদার্থের অন্যতম হল 'বিশেষ'। কণাদ সূত্রানুসারে 'অন্যত্রান্ত্যোভ্যো বিশেষেভ্যঃ' (বৈ.সূ — ১/২/৬) 'অন্ত্য' অর্থাৎ নিত্য এবং নিত্যদ্রব্য মাত্রে থাকে; অর্থাৎ কেবল একৈক পরমাণুতে তা থাকে।

ধর্মবিশেষপ্রসূতাদ্ দ্রব্য-গুণ-কর্ম-সামান্য-বিশেষ-সমবায়ানাং পদার্থানাং
সাধর্ম্যবৈধর্ম্যভ্যাং তত্ত্বজ্ঞানান্নিঃশ্রেয়সম্' (বৈ.সূ — ১/১/৪) অর্থাৎ দ্রব্য, গুণ, কর্ম, সামান্য,
বিশেষ এবং সমবায়ের সাধর্ম্য ও বৈধর্ম্যরূপে তত্ত্বজ্ঞান, নিবৃত্তি ধর্মসম্বৃত, নিঃশ্রেয়স সেই

তত্ত্বজ্ঞানের প্রয়োজ্য। এই সূত্রে যে বিশেষ পদার্থের কথা বলা হয়েছে, সেই বিশেষ পদার্থ হচ্ছে অন্ত্য অর্থাৎ নিত্য এবং তা কেবল নিত্যদ্রব্য বা কেবল এক একটি পরমাণুতে থাকে।

আচার্য প্রশস্তপাদ তাঁর *পদার্থধর্মসংগ্রহ* গ্রন্থে বিশেষ পদার্থের লক্ষণ নির্দেশ করে বলেছেন — ‘নিত্যদ্রব্যবৃত্তয়োহন্ত্য বিশেষাঃ। তে খন্ডতন্তব্যাবৃত্তিহেতুত্বাদিশেষা এব।’^২ অর্থাৎ সমস্ত নিত্যদ্রব্যে যে ‘অন্ত্য’ পদার্থ থাকে তাকে বিশেষ বলে। অত্যন্ত ব্যাবৃত্তির অর্থাৎ নিজের আশ্রয় নিত্যদ্রব্যটিকে অন্য সমস্ত নিত্য দ্রব্য থেকে ব্যাবৃত্ত করার কারন হওয়ায় এটি বিশেষস্বরূপই।

শ্রীমদ্বিশ্বনাথন্যায়পঞ্চাননভট্টাচার্য বিরচিত *ভাষ্যপরিচ্ছেদ* গ্রন্থে বিশেষ পদার্থের লক্ষণ প্রসঙ্গে আমরা দেখতে পাই — ‘অন্ত্যো নিত্যদ্রব্যবৃত্তির্বিশেষঃ পরিকীর্তিতঃ’।^৩ অর্থাৎ অন্ত্যে ব্যাবর্তক সমূহের অবসানে — শেষে যে থাকে অর্থাৎ যার থেকে আর ব্যাবর্তক হয় না, চূড়ান্ত সূক্ষ্ম ব্যাবর্তক সেই ধর্মই হল বিশেষ।

তর্কসংগ্রহ গ্রন্থে বিশেষ সম্বন্ধে বলা হয়েছে — ‘নিত্যদ্রব্যবৃত্তয়ো বিশেষান্ত্বনন্তা এব।’^৪ অর্থাৎ বিশেষ নিত্যদ্রব্যবৃত্তি ; অতএব অনন্ত। *দীপিকা*-টীকায় বলা হয়েছে — ‘পৃথিব্যাদিচতুষ্টয়স্য পরমাণবঃ, আকাশাদিপঞ্চকং চ নিত্যদ্রব্যানি।’^৫

শিবাদিত্য মিশ্রের *সপ্তপদার্থী* গ্রন্থে বিশেষ প্রসঙ্গে বলা হয়েছে — ‘বিশেষান্ত্ব যাবন্নিত্যদ্রব্যবৃত্তিত্বাদনন্তা এব।’^৬ এই লক্ষণে ‘তু’ শব্দ ব্যবহারের তাত্পর্য বোঝাতে মাধব সরস্বতী *মিতভাষিণী* টীকামধ্যে বলেছেন — ‘বিশেষাণাং বিভাগাভাবে হেতুমাৎ বিশেষাস্ত্বিতি।’ সামান্যের মতো বিশেষের বিভাগ না থাকলেও বিশেষ কিন্তু অসংখ্য, যেহেতু বিশেষের আশ্রয় নিত্যদ্রব্যগুলি অপরিসংখ্যেয়। এখানে অনন্ত কথাটির তাত্পর্য হল অসংখ্য।

রঘুনাথ শিরোমণি এই বিশেষ পদার্থ স্বীকার করেননি। তিনি তাঁর *পদার্থতত্ত্বনিরূপণ* গ্রন্থে বিশেষ পদার্থ আলোচনামধ্যে বলেছেন — ‘বিশেষোহপি চ ন পদার্থান্তরং মানাভাবাত্। বিনাপি ব্যাবর্তকং ধর্মং পরেণাং বিশেষাণামিব নিত্যানাং দ্রব্যানামপি স্বত এব ব্যাবর্তকত্বাত্। যোগিনোহতিরিক্তং বিশেষমীক্ষন্তে। এবং তর্হি ত এব সশপথং পৃচ্ছন্তাঃ কিমেতেহতিরিক্তং বিশেষমীক্ষন্তে ন বেতি।’^৭ অর্থাৎ প্রমাণ না থাকায় বিশেষও পদার্থান্তর নয়। প্রাচীনগণের মতে বিশেষ যেরূপে ব্যাবর্তক ধর্মান্তর ছাড়াই স্বতঃ ব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে সেরূপে পরমাণু প্রভৃতি নিত্য দ্রব্যগুলিও স্বতোব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে।

তিনি বলেন, ন্যায়-বৈশেষিকমতে ব্যাবর্তক ধর্মান্তর ব্যতিরেকেও বিশেষ পদার্থের যেমন ‘স্বতোব্যাবৃত্তত্ব’ কল্পিত হয়েছে, নব্যমতেও বিশেষ পদার্থ কল্পনা না করে নিত্যদ্রব্যসমূহেরও ‘স্বতোব্যাবর্তকত্ব’ কল্পনা করলেই বিশেষ পদার্থ খণ্ডিত হবে। যদি বলা হয় — যদিও নিত্যদ্রব্যগত বিশেষ পদার্থ আমাদের প্রত্যক্ষযোগ্য নয়, তথাপি যোগিগণ নিত্যপরমাণু, আকাশ প্রভৃতির ন্যায় তদগত বিশেষ পদার্থও প্রত্যক্ষ করেন। সুতরাং বিশেষ পদার্থ প্রত্যক্ষসিদ্ধ হওয়ায় এর অপলাপ করা অযৌক্তিক, এরূপ আশঙ্কার উত্তরে শিরোমণি মহাশয় বলেন — যোগিগণের প্রত্যক্ষই যদি বিশেষের একমাত্র সাধক হয়, তাহলে দ্রব্য, গুণ, কর্ম, সামান্য ও সমবায়ের অতিরিক্ত বিশেষরূপ ভাবপদার্থ প্রত্যক্ষ করেছেন কি না, তা যোগিগণকে শপথপূর্বক জিজ্ঞাসা করা প্রয়োজন। এই বক্তব্যের অভিপ্রায় এই যে, **বিশেষ পদার্থ যোগীদেরও প্রত্যক্ষগম্য নয়।** শিরোমণি মহাশয়

যোগীদের প্রত্যক্ষেও সংশয় প্রকাশ করেছেন। পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের উপর রঘুদেব ন্যায়ালঙ্কার তাঁর পদার্থগুণব্যাখ্যা-টীকায় বলেছেন — ‘তথা চোপদর্শিতব্যাপ্তেরপ্রয়োজকতয়া শব্দবিষাণতুল্যৈব তর্করসিকানামিতি ভাবঃ। নন্বতিরিক্তবিশেষসিদ্ধির্যোগিনাং প্রত্যক্ষবলাদিত্যাশঙ্কতে”।^৮ অর্থাৎ তর্করসিকগণের স্বীকৃত বিশেষ পদার্থ শব্দবিষাণতুল্য সম্পূর্ণ অলীক পদার্থ। যোগীদের বিশেষ পদার্থ প্রত্যক্ষেও সংশয় রয়েছে।

রঘুনাথ বলেছেন যে, তাঁর পূর্বসূরিগণ যেমন বিশেষ পদার্থকে ব্যাবর্তক ধর্মাস্তর ব্যতিরেকেই স্বতোব্যাবৃত্ত বলেছেন, সেরূপ তাঁর বক্তব্য এই যে পরমাণু ইত্যাদি নিত্যদ্রব্যসমূহও ব্যাবর্তকাস্তরের অপেক্ষা না করেই স্বতোব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে। এক্ষেত্রে আপত্তি হতে পারে যে ঘটসমবায়িত্ব বিশিষ্ট ঘটসমবায়ী যে কপাল তা থেকে ব্যাবৃত্ত যে তন্তুসমবায়িত্ব বিশিষ্ট যে সমবায়ী পদার্থবিশেষ থেকে যে পদার্থটি ব্যাবৃত্ত হয়, তারা হচ্ছে পরস্পর অসমবেত শূন্যধর্মসমবায়ী একরূপ ব্যাপ্তি ঘটপটাদিতে অবধারিত হয়। পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের উপর রঘুদেব ন্যায়ালঙ্কারকৃত পদার্থগুণব্যাখ্যা-টীকায় আমরা দেখতে পায় — “ননু সমবায়িত্বে সতি সমবায়ি যদ্যন্তেযদ্যব্যবৃত্তং তত্পরস্পরাসমবেতসমবেতশূন্যধর্মসমবায়ীতিব্যাপ্তিঘটপটাদাববধারিতা। অত্র চ সত্তাদিকমাদায় সিদ্ধসাধনবারণায় পরস্পরাসমবেতেতি। একত্বাদিকমাদায় সিদ্ধসাধনবারণায় সমবেতশূন্যেতি। প্রমেয়ত্বাদিকমাদায় তদ্বারণায় সমবায়ীতি। অভাবে ব্যভিচারবারণায় হেতৌ সমবায়িত্বে সতীতি। ঘটপটসমবায়িত্ব-বিশিষ্টায়া অভাবব্যাবৃত্তেঃ কপালতন্ত্বাদৌ সত্ত্বেন হেতুসত্ত্বাত্ সাধ্যাসত্ত্বেন ব্যভিচারঃ স্যাদতো হেতৌ সমবায়ীতি। তথা চ তাদৃশব্যাপ্তিবলাত্ সজাতীয়নিত্যদ্রব্যয়োঃ পরস্পরাসমবেতসমবেতশূন্যধর্ম-সিদ্ধৌ অর্থাৎ অতিরিক্তবিশেষসিদ্ধিরত আহ”।^৯ এখানে সত্তাদিকে গ্রহণ করে সিদ্ধসাধনদোষের আশঙ্কা বারণের জন্য বলা হয়েছে ‘পরস্পরাসমবেতঃ’, একত্বাদিকে গ্রহণ করে সিদ্ধসাধনদোষের আশঙ্কা বারণের জন্য বলা হয়েছে ‘অসমবেত শূন্য’, প্রমেয়ত্বাদিকে গ্রহণ করে সিদ্ধসাধন দোষের আশঙ্কা বারণের জন্য বলা হয়েছে ‘সমবায়ী’, অভাবে ব্যভিচারদোষের আশঙ্কা বারণের জন্য ‘সমবায়িত্বে সতি’ বলা হয়েছে। ঘট পট সমবায়িত্ব বিশিষ্টকে অভাব থেকে ব্যাবৃত্ত করবার জন্য কপাল, তন্তু ইত্যাদিতে তাদৃশ ঘট পট সমবায়িত্ব থাকায় ‘হেতু সত্ত্ব সাধ্যাসত্ত্ব’ বশতঃ ব্যভিচারদোষ হতে পারে বলে হেতুতে ‘সমবায়ী’ বিশেষণটি দেওয়া হয়েছে। এভাবে সজাতীয় নিত্যদ্রব্যদ্বয়ের পরস্পর অসমবেত শূন্যধর্ম সিদ্ধির জন্য অতিরিক্ত ‘বিশেষ’ পদার্থ স্বীকৃত হয়েছে। একরূপ আপত্তির আশঙ্কা করেই শিরোমণি মহাশয় বলেছেন — ‘বিনাপি ব্যাবর্তকং ধর্মং পরেযাং বিশেষাণামিব নিত্যানাং দ্রব্যাণামপি স্বত এব ব্যাবর্তকত্বাত্’। রঘুনাথের বক্তব্য হল — যদি নিত্যদ্রব্যসমূহ স্বতঃই অর্থাৎ তাদাত্ম্যের দ্বারাই পরস্পরব্যাবৃত্ত হয়ে যায়, তবে অতিরিক্ত বিশেষ পদার্থ স্বীকারের আর কোনও প্রয়োজনীয়তা থাকে না। সুতরাং পূর্বে প্রদর্শিত ব্যাপ্তির আর কোনও প্রয়োজকতা থাকে না। অতএব অতিরিক্ত বিশেষ পদার্থ স্বীকৃত না হলেও পাকজরূপ, রস, গন্ধ, স্পর্শরূপ পরমাণুগত গুণবিশেষই এক পরমাণু থেকে অন্য পরমাণুর ব্যাবর্তক হতে পারবে।

পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের উপর বিশ্বনাথন্যায়পঞ্চাননকৃত পদার্থতত্ত্বাবলোকটীকায় বলা হয়েছে — “যত্তু গগনস্য শব্দসমবায়িকারণত্বে শব্দবত্ত্বমবচ্ছেদকং বাচ্যম্। তস্য চ শব্দাত্মকস্যানন্তস্যাবচ্ছেদকত্বে গৌরবাদতিরিক্তবিশেষসিদ্ধিরিতি তত্তুচ্ছম্।

একবৃত্তিকারণতায়ামবচ্ছেদকানপেক্ষণাত্। অপেক্ষ্যতাং বা তথাপি
কপালসংযোগাদিবত্ত্বদ্ব্যকৃত্বিস্য বাবচ্ছেদকদ্বৌচিত্যাত্। তত্রাতিরিক্তত্বং ন বিশেষসাধকং মূর্তস্য
শব্দবত্তে সর্বমিদমরণ্যরুদিতমেব।”^{১০}

যদি বিশেষ পদার্থ স্বীকার করা না হয় তাহলে ব্যাবর্তক ধর্ম ব্যতিরেকে পরমাণু প্রভৃতি
নিরবয়ব দ্রব্যসমূহের পরস্পর বৈলক্ষণ্য কি করে সম্ভব হবে ? এর উত্তরে শিরোমণি মহাশয় বলেন
— প্রাচীনগণের মতে পরমাণু প্রভৃতি নিত্যদ্রব্যসমূহের পরস্পরের ব্যাবর্তকরূপে স্বীকৃত
বিশেষপদার্থ ব্যাবর্তক ধর্মাস্তরের অপেক্ষা ব্যতীত যেকোন স্বতো ব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে, সেরূপ
নবীনমতে নিত্যদ্রব্যসমূহেরও স্বতোব্যাবর্তকত্ব স্বীকৃত হবে। ‘স্বতোব্যাবৃত্তত্ব’ এর লক্ষণ প্রসঙ্গে
দিনকর বলেছেন — ‘স্বতোব্যাবৃত্তত্বং চ স্বভিন্নলিঙ্গজন্যস্ববিশেষ্যকস্বসজাতীয়েতরভেদানুমিত্য-
বিষয়ত্বম্।’^{১১} সুতরাং নিত্যদ্রব্যের ব্যাবর্তক ধর্মাস্তরের অপেক্ষা না থাকায় ব্যাবর্তকরূপে বিশেষ
পদার্থ স্বীকার করা নিষ্প্রয়োজন। যদি বলা হয়, যেহেতু যোগসাধনার বলে যোগিগণ নিত্যদ্রব্যে
বিশেষ পদার্থ দর্শন করে থাকেন। এর উত্তরে রঘুনাথ বলেন যে, **অতীন্দ্রিয়দর্শিযোগিগণকে
ভালোভাবে জিজ্ঞাসা করা দরকার যে, তাঁরা নিত্যদ্রব্যে বিশেষ পদার্থ প্রত্যক্ষ করেন কি
না ?** অর্থাৎ বিশেষ পদার্থ যে যোগিগণের প্রত্যক্ষসিদ্ধ এ বিষয়ে কোনও প্রমাণ নেই। প্রমাণ না
থাকায় বিশেষও পদার্থান্তর নয়। প্রাচীনগণের মতে বিশেষ যেকোন ব্যাবর্তক ধর্মাস্তর ছাড়াই স্বতঃ
ব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে সেরূপে পরমাণু প্রভৃতি নিত্য দ্রব্যগুলিও স্বতোব্যাবৃত্ত হয়ে থাকে। অতএব বিশেষ
পদার্থ স্বীকৃত হতে পারে না।

সংকেতসূচি

ত. সং.	— তর্কসংগ্রহ
প. ত. নি.	— পদার্থতত্ত্বনিক্রপণ
প্রশস্ত.	— প্রশস্তপাদভাষ্য
পা. সূ.	— পাণিনীয় সূত্র
পৃ.	— পৃষ্ঠাসংখ্যা
বৈ. সূ.	— বৈশেষিকসূত্র
ভা. প.	— ভাষ্যপরিচ্ছেদ
সপ্ত.	— সপ্তপদার্থী
সম্পা.	— সম্পাদক

উল্লেখপঞ্জি

১. বৈ.সূ. — ১.১.৪

২. প্রশস্ত., ১ম খণ্ড, সম্পা. ব্রহ্মচারী মেধাচৈতন্য, পৃ. ২৩০

৩. ভা. প., সম্পা. সি শঙ্কররাম শাস্ত্রী, পৃ. ১১৯
৪. ত. সং., সম্পা. নিরঞ্জনস্বরূপ ব্রহ্মচারী, পৃ. ১৯
৫. তদেব, পৃ. ১৯
৬. সপ্ত., সম্পা. তপন শঙ্কর ভট্টাচার্য, পৃ. ৫৩
৭. প. ত. নি., সম্পা. পা.তি.গু. যতিরাজসম্পত্‌কুমারার্চ্য, পৃ. ৬৩
৮. তদেব, পৃ. ৬৪
৯. তদেব, পৃ. ৬৩-৬৪
১০. তদেব, পৃ. ৬৩
১১. ভা. প., সম্পা. সি শঙ্কররাম শাস্ত্রী, পৃ. ১১৯

Select Bibliography

- Annambhaṭṭa. *Tarkasaṁgrahaḥ* (With *Dīpikā* Commentary). Ed. Niranjanswarup Brahmachari. Kolkata: Sanskrit Book Depot, 2013 (Rpt., 2005 1st Pub.).
- Bhaṭṭācārya, Dīneśacandra. *Vaṅge Navyanyāyacarcā, Vāṅgālīr(a) Sārasvata Avadān(a)*. Vol-I. Kolkata: Vangiya Sahitya Parishad, 1414 B.S. (2nd ed., 1358 B.S. 1st ed.).
- Bhaṭṭācārya, Śrīmohana & Dīneśacandra Bhaṭṭācārya. *Bhāratīya Darśana Koṣa*. Kolkata: Sanskrit Collage, 1958.
- Chatterji, Kshitish. *Technical Terms and Technique of Sanskrit Grammar*. Kolkata: Calcutta University Press, 1964.
- Dāsgupta, Surendranāth. *A History of Indian Philosophy*. Vol-I. Delhi: Motilal Banarasidass, 1988.
- Gaṅgopādhyāy(a), Mṛṇālakānti. *Nyāyanivandhābalī*. Kolkata: Sanskrit Book Dipo, 2021 (1st Pub.).
- Gautam. *Nyāyadarśana*. Vol- I. Ed. Phanibhusan Tarkabagish. Kolkata: West Bengal State Book Board, 2018 (6th ed., 1981 1st ed.).
- Guha, Dinesh Chandra. *Navya Nyaya System of Logic* (Some Basic Theories & Techniques). Varanasi: Bharatiya Vidya Prakashan, 1968.
- Haribhadrāsūri. *Ṣaḍdarśanasamuccayaḥ*. Ed. Mahendrakumar Jaina Nayacharya. Delhi: Bharatiya Jnanpith, 1997 (4th ed.).
- Jhalakīkaraḥ, Bhīmācāryaḥ. *Nyāyakośaḥ*. Poona: The Bhandarkar Oriental Research Institute, 1928 (3rd ed.).
- Kaṇāda. *Vaiśeṣika Darśana*. Ed. Amit Bhattacharyya. Kolkata: Sanskrit Book Dipo, 2012 (1st ed.).
- Keśavamiśra. *Tarkabhāṣā*. Vol- I. Ed. Gangadhar Kar. Kolkata: Jadavpur University Press, 2013 (2nd ed., 2008 1st ed.).
- Mahāpātra, Bīṣṇupada. *Nyāya-pāribhaṣika-śabdāvalī*. New Delhi: Manyata Prakashan. 2010 (1st ed.).
- Pāṇini. *Aṣṭādhyāyī*. Ed. Tapan sankar Bhattacharyya. Kolkata: Sanskrit Book Depot, 2017 (3rd ed., 2004 1st ed.).

- Praśastapādācārya. *Praśastapādābhāṣyam*. Vol-I. Ed. Brahmachari Medhachaitanya. Kolkata: Sanskrit Book Depot, 2017 (1st Pub.).
- Rāḍhī, Kānticandra. *Navadvīpa Mahimā*, Navadvīper(a) prācīn(a) o ādhunik(a) vivaraṇa. Ed. Jitendriya Datta, Phanibhushan Datta. Navadvīpa: Navadvīpa Mahimā Kāryālaya, 1344 B.S. (2nd ed.).
- Raghunātha Śiromaṇi. *Padārthatattvanirūpaṇa* (With the Commentaries Padārthatattvāvaloka of Śrī Viśvanātha Pañcānana Bhaṭṭācāya & *Ṭīkā* of Śrīraghudeva Nyāyālaṅkāra). Ed. P.T.G.Y Sampathkumarachar-yulu. Tirupati: Rashtriya Sanskrit Vidyapeetha, 2010.
- Ibid.* Ed. Madhusudan Bhattacharya Nyayacharya. Kolkata: Sanskrit College, 1976.
- Ibid.* (With the Commentaries of Raghudeva and Ramabhadra Sarbbhama). Ed. Pandit Vindhyeswari Prasada Dvivedin. Benaras: J. Lazabus & Co Publishers, 2010.
- Ibid.* Ed. Karl H. Potter. Cambridge: Harvard University Press, 1957.
- Śaṅkaramiśra. *Vaiśeṣikasūtrapaskāraḥ*. Ed. Narayan Mishra. Varanasi: The Chowkhamba Sanskrit Series Office, 1969.
- Śivādityamiśra. *Saptapadārthī*. Ed. Tapan Sankar Bhattacharyya. Kolkata: Sanskrit Book Depot., 2012 (1st ed.).
- Tarkālārṇkāra, Jagadīśa. *Śabdaśaktiprakāśikā* (With *Kṛṣṇakāntī*, *Prabodhinī* Commentaries). Ed. Dhundhiraj Sastri. Varanasi: Chowkhamba Sanskrit Series Office, 1973.
- Tarkavāgīś(a), Phanibhūṣaṇ(a). *Nyāya Paricaya*. Kolkata: West Bengal State Book Board, 2006 (3rd Rpt., 1978 1st Print).
- Udayana. *Āmatattvaviveka* (With the Commentaries of *Nārāyaṇī*, *Dīdhiti* & *Bauddhādhikāra Vivṛti*). Ed. Dhundhiraj Sastri. Varanasi: Chowkhamba Sanskrit Series Office, 1940.
- Uddyotakara. *Nyāyavārttikam*. Ed. Vindhyeswari Prasad Tribedi. Varanasi: The Chowkhamba Sanskrit Series Office, 1913.
- Vācaspatimiśra. *Nyāyavārtikatātparyāṭīkā*. Ed. Rajeshwara Sastri. Benares: The Chowkhamba Sanskrit Series Office, 1925.
- Varadarāja. *Tārkikarakṣā* (With *Niṣkaṇṭaka* Commentary by Mallināthasūri). Ed. Vindhyeswari Prasad Tribedi. Varanasi: 1903.
- Viśvanātha Nyāyapañcānan(a). *Bhāṣāparicchedaḥ*. Ed. C. Sankara Rama Sastry. Madras: Sri Balamanora Press, 1923.



गढ़वाली लोकसाहित्य: संस्कृति और परंपरा का प्रतिबिंब

अमित मैठाणी

शोधार्थी,

डॉ० ब्रजलता शर्मा

शोध निर्देशक,

महाराज अग्रसेन हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय, धैड गाँव, पोखड़ा उत्तराखंड

प्रस्तावना

लोकसाहित्य किसी भी समाज की सांस्कृतिक धरोहर का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। यह न केवल भाषा की प्राचीनता और लोकजीवन की विविधता को दर्शाता है, बल्कि समाज के मानवीय अनुभवों, आस्थाओं, भावनाओं और परंपराओं का भी जीवंत चित्र प्रस्तुत करता है। गढ़वाली लोकसाहित्य, उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल क्षेत्र की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान का एक अनमोल हिस्सा है। यह साहित्य मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी संचित होता आया है। गढ़वाली लोकसाहित्य में लोकगीत, लोककथा, लोकनाटक, लोकोक्तियाँ, पहाड़ के देवताओं और नायकों पर आधारित गाथाएँ, और सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के विविध पहलुओं को समेटे हुए रचनाएँ शामिल हैं।

गढ़वाल की प्रकृति, पर्वत, नदी-नालों और ग्रामीण जीवन की विविधता ने गढ़वाली लोकसाहित्य को न केवल भावनात्मक गहराई प्रदान की है, बल्कि इसे सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बनाया है। इस शोधपत्र का उद्देश्य गढ़वाली लोकसाहित्य की विशेषताओं, इतिहास, प्रकार, सामाजिक-आर्थिक और धार्मिक महत्त्व, तथा आधुनिक संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है।

गढ़वाली लोकसाहित्य का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ

गढ़वाल क्षेत्र, जिसे हिमालय की गोद में बसा हुआ माना जाता है, सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। इसकी भाषा, रीति-रिवाज और लोकपरंपरा सदियों से इस क्षेत्र की जीवनशैली का अभिन्न अंग रही हैं। गढ़वाली लोकसाहित्य का इतिहास मुख्यतः मौखिक परंपरा पर आधारित रहा है। प्राचीन काल में लिखित साहित्य का अभाव होने के कारण लोककथाएँ, लोकगीत और कविताएँ मौखिक रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानांतरित होती रही हैं।

गढ़वाली लोकसाहित्य में प्राकृतिक दृश्यों का विशेष महत्व है। हिमालय की चोटियाँ, नदी-नाले, वन और ग्रामीण जीवन ने लोककथाओं और लोकगीतों में अपनी छाप छोड़ी है। इसके अलावा, स्थानीय देवी-देवताओं, ऐतिहासिक नायकों और पौराणिक पात्रों को गढ़वाली साहित्य में प्रमुख स्थान प्राप्त है। गढ़वाल की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों, जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में जीवन संघर्ष और सामूहिक कृषि कार्य, ने भी लोकसाहित्य को संवेदनशील और व्यवहारिक दृष्टिकोण प्रदान किया है।

गढ़वाली लोकसाहित्य के प्रकार

गढ़वाली लोकसाहित्य को कई श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक श्रेणी गढ़वाल की सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन की विविधता को प्रतिबिंबित करती है। प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं:

1. लोकगीत (Folk Songs)

गढ़वाली लोकगीत क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। ये गीत पर्वतों, नदियों, कृषि कार्य, त्यौहारों और सामाजिक जीवन से जुड़े होते हैं। गढ़वाली लोकगीत को मुख्य रूप से नवगीत, विवाहगीत, हलधूम गीत, बालगीत और वीर गीत के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

नवगीत: नवजात शिशु के स्वागत में गाए जाते हैं। इनमें माता-पिता की खुशी और परिवार की आस्था प्रकट होती है।

विवाहगीत: विवाह समारोह में गाए जाने वाले गीत, जो परिवार और समुदाय की सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखते हैं।

हलधूम गीत: कृषि और खेतों से जुड़े गीत। ये गीत ग्रामीण जीवन के संघर्ष और प्रकृति के साथ उनके संबंध को दर्शाते हैं।

वीर गीत: ऐतिहासिक नायकों और गढ़वाल की वीरता की कहानियों पर आधारित गीत।

2. लोककथा और मिथक (Folk Tales and Myths)

गढ़वाली लोककथाएँ और मिथक स्थानीय समाज की परंपराओं, धार्मिक विश्वासों और नैतिक मूल्यों का प्रतीक हैं। इनमें अक्सर देवी-देवताओं, ऋषियों, नायकों और रहस्यमय पात्रों की कहानियाँ मिलती हैं। प्रमुख लोककथाएँ हैं:

भाई और बहन की कथाएँ: परिवारिक संबंधों और भाई-बहन के प्रेम पर आधारित।

वीर गाथाएँ: क्षेत्रीय नायकों की वीरता और बलिदान की कहानियाँ।

पौराणिक कथाएँ: देवताओं और देवी-देवियों से जुड़ी कहानियाँ, जो धार्मिक आस्था और नैतिक शिक्षा प्रदान करती हैं।

3. लोकनाटक और नृत्य (Folk Drama and Dance)

गढ़वाली लोकनाटकों में ग्रामीण जीवन, सामाजिक मुद्दों और धार्मिक कथाओं का मंचीय प्रस्तुतीकरण होता है। इनमें हास्य, नाटक और नृत्य का मिश्रण होता है। प्रमुख लोकनाटकों में जंगल नाटक, देवी-देवता आधारित नाटक और सामाजिक नाटक शामिल हैं।

लोकनृत्य जैसे डोल, झूमर और चोल, गढ़वाली लोकगीतों के साथ मेल खाते हैं। ये नृत्य न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक उत्सवों का प्रतीक भी हैं।

4. लोकोक्तियाँ और कहावतें (Proverbs and Sayings)

गढ़वाली भाषा में कई लोकोक्तियाँ और कहावतें हैं, जो जीवन के व्यवहारिक अनुभवों और नैतिक शिक्षा का प्रतीक हैं। ये छोटे वाक्यांश गढ़वालियों की सोच, अनुभव और व्यावहारिक बुद्धिमत्ता को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण:

"जो बोएगा वही काटेगा।"

"धीरज रखो, पर्वत भी पिघलेंगे।"

गढ़वाली लोकसाहित्य की सामाजिक और धार्मिक भूमिका

गढ़वाली लोकसाहित्य केवल मनोरंजन या कलात्मक अभिव्यक्ति का साधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और धार्मिक जीवन का भी महत्वपूर्ण हिस्सा है।

1. सामाजिक भूमिका

सामुदायिक एकता: लोकगीत, नाटक और पर्व सामूहिक अनुभवों को साझा करने का माध्यम होते हैं, जिससे समाज में एकता और सहभागिता बढ़ती है।

शिक्षा और नैतिकता: लोककथाएँ और लोकोक्तियाँ बच्चों और युवाओं को नैतिक शिक्षा, साहस और परिश्रम का महत्व सिखाती हैं।

संस्कृति का संरक्षण: मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी सांस्कृतिक धरोहर संरक्षित होती है।

2. धार्मिक भूमिका

गढ़वाली लोकसाहित्य में देवी-देवताओं, ऋषियों और पौराणिक पात्रों का विशेष महत्व है। धार्मिक गीत और कथाएँ भक्ति, पूजा और पर्वों से जुड़ी होती हैं।

ये साहित्य न केवल आस्था को प्रबल करता है, बल्कि समाज में नैतिक और धार्मिक मूल्य भी स्थापित करता है।

आधुनिक संदर्भ में गढ़वाली लोकसाहित्य

आज के युग में गढ़वाली लोकसाहित्य विभिन्न चुनौतियों का सामना कर रहा है। आधुनिक शिक्षा, वैश्वीकरण और डिजिटल मीडिया के प्रभाव से मौखिक परंपरा धीरे-धीरे कमजोर हो रही है। इसके बावजूद, लोकसाहित्य का महत्व कम नहीं हुआ है। आधुनिक शोध, संग्रहण और मीडिया (जैसे रेडियो, टेलीविजन और इंटरनेट) ने इसे संरक्षित और प्रचलित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

संग्रहण प्रयास: विश्वविद्यालय और सांस्कृतिक संस्थान गढ़वाली लोकगीत और कथाओं का संग्रह कर रहे हैं।

सांस्कृतिक उत्सव: स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित पर्वों और महोत्सवों में गढ़वाली लोकसाहित्य को प्रस्तुत किया जाता है।

साहित्यिक शोध: शोधकर्ता गढ़वाली लोककथाओं और गीतों का विश्लेषण कर उनके सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व को उजागर कर रहे हैं।

निष्कर्ष

गढ़वाली लोकसाहित्य गढ़वाल क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर का अमूल्य हिस्सा है। यह न केवल भाषा और साहित्य का स्रोत है, बल्कि समाज के नैतिक, धार्मिक और सामाजिक जीवन का प्रतिबिंब भी प्रस्तुत करता है। लोकगीत, लोककथा, लोकनाटक और लोकोक्तियाँ गढ़वाली संस्कृति की विविधता और गहराई को दर्शाती हैं।

आज के युग में गढ़वाली लोकसाहित्य के संरक्षण और प्रचार-प्रसार के प्रयास आवश्यक हैं। युवा पीढ़ी को इसके महत्व से अवगत कराना, मौखिक परंपरा का डिजिटल रूपांतरण, और सांस्कृतिक उत्सवों के माध्यम से इसका संवर्धन आवश्यक है। ऐसा करने से न केवल गढ़वाली लोकसाहित्य जीवित रहेगा, बल्कि यह वैश्विक सांस्कृतिक मंच पर भी अपनी पहचान बनाएगा।

संदर्भ (References)

1. उप्रेती, के.डी. (2008). गढ़वाली लोकसाहित्य: इतिहास और संस्कृति. देहरादून: हिमालयन पब्लिशिंग।
2. जोशी, शंकर दत्त (2012). उत्तराखंड की लोककथाएँ और गीत. दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट।
3. पांडे, भीम सिंह (2010). हिमालयी लोककला और संस्कृति. रानीपोखरी: संस्कृति प्रकाशन।
4. रावत, कमल (2015). गढ़वाली भाषा और साहित्य का विकास. देहरादून: शैक्षणिक प्रकाशन।
5. सिंह, अनिल (2018). उत्तराखंड का लोकसाहित्य: एक सांस्कृतिक अध्ययन. हल्द्वानी: आर्यन पब्लिकेशन्स।
6. पाठक, रामप्रसाद (2014). हिमालय की लोककथाएँ और लोकगीत. देहरादून: लोक कला संस्थान।



शिक्षा में तकनीकी का बढ़ता प्रभाव : लाभ, हानियाँ, चुनौतियाँ एवं भविष्य की दिशा

डॉ. सुकन्या चल्ला

ए पी टी डब्लू आर एस गर्ल्स क्रेडु प्रकाशम जिला आंध्र प्रदेश

इक्कीसवीं सदी को ज्ञान, सूचना एवं तकनीकी की सदी कहा जाता है। शिक्षा के क्षेत्र में सूचना एवं संचार तकनीक (ICT) के प्रवेश ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। डिजिटल कक्षाएँ, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ऑनलाइन मूल्यांकन तथा आभासी शिक्षण संसाधनों ने शिक्षा को अधिक सुलभ, लचीला एवं प्रभावी बनाया है। नई शिक्षा नीति 2020 ने विद्यालयी एवं उच्च शिक्षा दोनों में तकनीकी के समावेशन को विशेष महत्व दिया है।

परंतु तकनीकी के सकारात्मक प्रभावों के साथ-साथ डिजिटल विभाजन, सामाजिक दूरी, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ, नैतिक चुनौतियाँ तथा मानवीय मूल्यों के क्षरण जैसी समस्याएँ भी उभर कर सामने आई हैं। प्रस्तुत लेख में शिक्षा में तकनीकी के बढ़ते प्रभावों का आलोचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए इसके लाभ, हानियाँ, चुनौतियाँ तथा भविष्य की दिशा पर विस्तार से चर्चा की गई है।

1. प्रस्तावना :

शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास की आधारशिला होती है। समय के साथ-साथ शिक्षा की प्रकृति, उद्देश्य एवं माध्यमों में निरंतर परिवर्तन होता रहा है। आज का युग वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी नवाचार का युग है, जहाँ ज्ञान का सृजन और प्रसार तकनीकी माध्यमों के बिना अधूरा माना जाता है।

वैश्वीकरण एवं डिजिटलीकरण के प्रभाव से शिक्षा प्रणाली भी अछूती नहीं रही है। पारंपरिक शिक्षण प्रणाली अब आधुनिक तकनीकी संसाधनों के साथ समन्वय स्थापित कर रही है। कंप्यूटर, इंटरनेट, स्मार्टफोन, डिजिटल बोर्ड, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ने शिक्षा को एक नई दिशा प्रदान की है।

भारत में नई शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा में तकनीकी को केवल सहायक साधन नहीं, बल्कि गुणवत्ता सुधार और समावेशी शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार माना है। इसी संदर्भ में शिक्षा में तकनीकी के बढ़ते प्रभावों का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

2. शिक्षा में तकनीकी की अवधारणा :

शिक्षा में तकनीकी से आशय शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सूचना एवं संचार तकनीकों के सुनियोजित, वैज्ञानिक एवं उद्देश्यपूर्ण उपयोग से है। इसके अंतर्गत कंप्यूटर आधारित शिक्षण, मल्टीमीडिया, इंटरनेट, डिजिटल सामग्री, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, वर्चुअल कक्षाएँ तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता सम्मिलित हैं।

शैक्षिक तकनीकी केवल उपकरणों का उपयोग नहीं है, बल्कि यह शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षण विधियों, सामग्री, मूल्यांकन एवं प्रबंधन की एक समग्र प्रणाली है। एनसीईआरटी के अनुसार, “शैक्षिक तकनीकी शिक्षा की समस्याओं के समाधान हेतु वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की प्रक्रिया है।”

इस प्रकार शिक्षा में तकनीकी शिक्षण को अधिक प्रभावी, रुचिकर एवं विद्यार्थी-केन्द्रित बनाने में सहायक सिद्ध होती है।

3. शिक्षा में तकनीकी विस्तार के प्रमुख कारण :

शिक्षा में तकनीकी के तीव्र विस्तार के पीछे अनेक कारण उत्तरदायी हैं—

वैश्वीकरण: वैश्विक प्रतिस्पर्धा ने शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार को अनिवार्य बना दिया है।

डिजिटल इंडिया पहल: भारत सरकार द्वारा डिजिटल साक्षरता एवं इंटरनेट पहुँच बढ़ाने के प्रयास।

कोविड-19 महामारी: महामारी के दौरान ऑनलाइन शिक्षा एकमात्र विकल्प के रूप में उभरी।

नई शिक्षा नीति 2020: NEP-2020 ने डिजिटल संसाधनों, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और तकनीकी नवाचार पर विशेष बल दिया।

ज्ञान आधारित समाज: वर्तमान समाज में ज्ञान को शक्ति माना जाता है, जिसे तकनीकी के माध्यम से ही व्यापक बनाया जा सकता है।

4. शिक्षा में तकनीकी के लाभ :

शिक्षा में तकनीकी के अनेक सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलते हैं—

4.1 शिक्षा की पहुँच में वृद्धि :

डिजिटल माध्यमों ने शिक्षा को भौगोलिक सीमाओं से मुक्त कर दिया है। दूरस्थ एवं वंचित क्षेत्रों के विद्यार्थी भी ऑनलाइन शिक्षा से लाभान्वित हो रहे हैं।

4.2 शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में लचीलापन :

ई-लर्निंग एवं ब्लेंडेड लर्निंग के माध्यम से विद्यार्थी अपनी गति और समय के अनुसार सीख सकते हैं।

4.3 गुणवत्ता एवं नवाचार :

मल्टीमीडिया, एनिमेशन और सिमुलेशन के प्रयोग से जटिल अवधारणाएँ सरल एवं रोचक बन जाती हैं।

4.4 व्यक्तिगत अधिगम :

तकनीकी आधारित शिक्षण में व्यक्तिगत भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए सामग्री उपलब्ध कराई जा सकती है।

4.5 मूल्यांकन में पारदर्शिता :

ऑनलाइन परीक्षण और डिजिटल मूल्यांकन से निष्पक्षता एवं त्वरित फीडबैक संभव हुआ है।

5. शिक्षा में तकनीकी की हानियाँ :

जहाँ तकनीकी के अनेक लाभ हैं, वहीं इसके कुछ नकारात्मक पक्ष भी हैं—

5.1 डिजिटल विभाजन :

सभी विद्यार्थियों को समान तकनीकी संसाधन उपलब्ध नहीं हैं, जिससे असमानता बढ़ती है।

5.2 सामाजिक संपर्क में कमी :

ऑनलाइन शिक्षा से शिक्षक-विद्यार्थी एवं विद्यार्थी-विद्यार्थी संवाद में कमी आती है।

5.3 स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ :

अधिक स्क्रीन समय से आँखों, मानसिक स्वास्थ्य एवं शारीरिक गतिविधि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
5.4 नैतिक एवं अनुशासनात्मक समस्याएँ :

ऑनलाइन माध्यमों में अनुचित सामग्री तक पहुँच और नकल की संभावना बढ़ जाती है।

6. शिक्षा में तकनीकी से जुड़ी चुनौतियाँ :

तकनीकी आधारित शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ हैं—

प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी

तकनीकी अवसंरचना की सीमाएँ।

भाषा एवं सांस्कृतिक विविधता।

इन चुनौतियों का समाधान नीति स्तर पर योजनाबद्ध प्रयासों से ही संभव है।

7. समाधान एवं सुझाव :

शिक्षकों के लिए नियमित तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।

ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में डिजिटल अवसंरचना का विस्तार किया जाए।

स्थानीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री विकसित की जाए।

तकनीकी के साथ मानवीय मूल्यों एवं नैतिक शिक्षा पर भी बल दिया जाए।

8. भविष्य की दिशा :

भविष्य में शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, वर्चुअल रियलिटी, ऑगमेंटेड रियलिटी एवं ब्लेंडेड लर्निंग की भूमिका और अधिक बढ़ेगी। तकनीकी शिक्षा को अधिक समावेशी, कौशल-आधारित एवं रोजगारोन्मुख बनाएगी।

हालाँकि, यह आवश्यक है कि तकनीकी को साधन के रूप में उपयोग किया जाए, न कि उद्देश्य के रूप में।

9. निष्कर्ष :

शिक्षा में तकनीकी ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को व्यापक, सुलभ एवं प्रभावी बनाया है। इसके माध्यम से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार संभव हुआ है, परंतु इसके साथ-साथ अनेक चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं।

यदि तकनीकी का संतुलित, नैतिक एवं मानवीय मूल्यों के साथ उपयोग किया जाए, तो यह शिक्षा को समावेशी एवं सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. भारत सरकार. (2020). नई शिक्षा नीति 2020. नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय।
2. NCERT. (2021). शिक्षा में सूचना एवं संचार तकनीक. नई दिल्ली।
3. Mishra, R. C. (2021). Educational Technology. New Delhi: APH Publishing.
4. Sharma, R. N. (2022). आधुनिक शिक्षा तकनीकी. मेरठ: सूर्या प्रकाश।



Quality Education in Rural India: SDG 4 Perspective

Dr. Yogendra Kumar

Associate professor,
Govt. Girls College, Ajmer (RAJASTHAN)

Abstract

Quality education is a cornerstone of sustainable development and is formally enshrined as **Sustainable Development Goal 4 (SDG 4)**, which seeks to “ensure inclusive and equitable quality education and promote lifelong learning opportunities for all.” This research paper explores the current state of rural education in India, challenges in achieving SDG 4 in rural contexts, key government and non-government initiatives, and recommendations for policy and practice.

Keywords- Sustainable Development, National Education Policy, Rural development, Empowerment

Introduction

Education forms the foundation for personal growth, community development, and national progress. In India — where over **65% of the population resides in rural areas** — access and quality of education in these regions critically determine broader developmental outcomes. Despite significant strides in enrolment and access over the past decades, rural India continues to grapple with profound **quality problems marked by infrastructural deficits, teacher shortages, learning gaps, and digital divides**, hindering the achievement of SDG 4 by 2030.

Understanding SDG 4 and Its Relevance to Rural India

What is SDG 4?

SDG 4 aims to “ensure inclusive and equitable quality education and promote lifelong learning opportunities for all.” Its targets include universal primary and secondary education completion, affordable technical and vocational training, gender equality in education, and literacy improvements among adults.

Rural Dimension of SDG 4

Rural education in India is central to SDG 4 because disparities between rural and urban learning outcomes persist. While rural enrolment in primary education is high, learning outcomes, retention rates, and resource availability lag significantly behind urban counterparts.

Current Challenges in Rural Education

Despite policy frameworks supporting education, rural India’s education system faces multiple systemic barriers:

- ❖ **Infrastructure and Basic Amenities-** Many rural schools lack basic infrastructure such as libraries, classrooms, toilets, and technology. Limited physical resources negatively impact student engagement and retention.
- ❖ **Teacher Shortage and Quality-** A shortage of qualified teachers is a pervasive issue. Many rural schools operate with multi-grade classrooms and high student-to-teacher ratios, reducing instructional effectiveness.
- ❖ **Digital Divide-** The COVID-19 pandemic exposed the digital divide in education. Rural households often lack internet access and digital learning devices, which further amplifies educational inequity.
- ❖ **Gender and Socio-Economic Disparities-** Girls and marginalized groups in rural areas face additional barriers such as socio-cultural norms, safety concerns, and economic constraints that can limit school participation.

Government Initiatives Supporting SDG 4 in Rural India

- ❖ **National Education Policy (NEP) 2020-** The **National Education Policy 2020** is the most comprehensive reform of India's education system in decades and is closely aligned with *SDG 4 goals* of inclusive, equitable, quality education and lifelong learning. It aims to:
 - Promote **foundational literacy and numeracy** through early learning reforms.
 - Restructure the schooling framework from *10+2* to *5+3+3+4*, corresponding to age groups from early childhood (3 years) to high school (18 years).
 - Introduce **multidisciplinary and experiential learning**, moving away from rote learning toward critical thinking and real-world skills.
 - Enhance **teacher quality** via a four-year integrated B.Ed., National Professional Standards for Teachers, and ongoing professional development.
 - Promote **gender inclusion**, accessible infrastructure, and digital technology across schools
 - **Contribution to SDG 4:** NEP 2020 directly supports SDG targets like universal completion of primary and secondary education, improved learning outcomes, inclusion of vulnerable groups, teacher quality, and lifelong learning opportunities.
- ❖ **Samagra Shiksha Abhiyan (SSA)-** **Samagra Shiksha Abhiyan** is the flagship school education program of the Government of India, focused on "*Education for All.*" It integrates with the **Right to Education (RTE) Act** and NEP principles to ensure:
 - Universal access to education and improved quality from **pre-primary to class 12**.
 - Enhanced **infrastructure** (classrooms, toilets, drinking water, boundary walls).
 - Special drives for **out-of-school children** and **retention/attendance**..
 - Provisions for **equity** — targeting girls, economically disadvantaged children, SC/ST communities, and children with disabilities.
 - **Contribution to SDG 4:** SSA directly contributes to SDG targets such as universal primary/secondary education, elimination of educational disparities, and promotion of quality teaching and learning.
- ❖ **PM Schools for Rising India (PM SHRI)-** **PM SHRI Schools** are model schools being developed across India to demonstrate *holistic, inclusive, and 21st-century education*. The **initiative seeks** to:
 - Emphasize child-centric learning, critical thinking, co-curricular activities, and strengthening foundational learning.

- **Contribution to SDG 4:** PM SHRI exemplifies quality improvements in school environments and teaching practices, helping to scale up effective educational strategies nationwide.
- **PM Poshan (Mid-Day Meal Scheme)-** Formerly known as the **Mid-Day Meal Programme**, PM Poshan -ensures a nutritious meal to children in government and aided schools. Its objectives: Boost school **attendance and retention**, especially among underprivileged students.
- Improve **nutritional levels**, which are directly linked to learning ability and cognitive development.
- Support gender parity by reducing the economic burden on families for sending children—especially girls—to school
- **Contribution to SDG 4:** By improving both enrolment and learning readiness, PM Poshan supports SDG 4's focus on equitable access and quality learning environments.
- ❖ **Right to Education (RTE) Act, 2009-** The **Right of Children to Free and Compulsory Education Act** ensures that all children aged 6–14 years have the **right to full-time elementary education** in a formal school. Key features:
 - Free education and no capitation fees in private schools.
 - **25% reservation** for disadvantaged children in private schools.
 - Standards for **infrastructure, teacher deployment, and learning environments**.
 - **Contribution to SDG 4:** RTE directly aligns with SDG 4's target for universal primary education and reducing inequality in education access.
- ❖ **Beti Bachao, Beti Padhao (BBBP)-** Launched to address **gender disparities**, this tri-ministerial initiative encourages:
 - *Girl child enrolment* in schools and reduced dropout rates.
 - Awareness campaigns to promote **girls' education and empowerment**.
 - Convergence of health, education, and child development services to facilitate schooling for girls.
 - **Contribution to SDG 4:** Supports SDG gender-specific targets like equal access to education for girls and closing gender gaps in learning outcomes.
- ❖ **Digital India Initiatives & PM eVidya-** Under **Digital India**, the Government has significantly expanded digital educational access:
 - **DIKSHA:** A digital platform providing e-learning content for teachers, students, and parents.
 - **Swayam Prabha:** TV channels offering curriculum-linked educational content.
 - **One Nation One Subscription (ONOS):** Nationwide access to academic journals and research databases for students and researchers.
 - **Contribution to SDG 4:** Digital initiatives support **quality education**, expanded access (especially in remote areas), and lifelong learning through online and blended modalities.
- ❖ **National Literacy & Adult Education Programmes-** While not always highlighted in school schemes, India also promotes **adult education and lifelong learning**, key tenets of SDG 4:
 - Focus on foundational literacy and basic education for adults.
 - Integration of vocational and life skills into continuing education pathways.
 - Encouraging volunteer participation to enhance community literacy.
 - **Contribution to SDG 4:** These programs support *SDG 4.6* (adult literacy and numeracy) and promote **lifelong learning opportunities**.

- ❖ **Inclusive Education Schemes for Children with Disabilities**-The Government's **Inclusive Education for Disabled at Secondary Stage (IEDSS)** scheme focuses on:
 - Assistance and resources for children with disabilities in secondary education.
 - Scholarships, special aids, and support mechanisms to facilitate schooling.
 - **Contribution to SDG 4:** Supports educational equity for children with disabilities, aligning with *SDG 4.5* which aims to eliminate discrimination in education.

CSR Initiatives Supporting SDG 4 in India

Corporate Social Responsibility (CSR) has emerged as a crucial partner in achieving the **Sustainable Development Goals (SDGs)**, particularly **SDG 4**, which aims to ensure *inclusive, equitable, and quality education and lifelong learning opportunities for all*. In India, CSR activities are legally mandated under the **Companies Act, 2013**, encouraging corporations to invest a portion of their profits in social development sectors, with **education being the largest recipient of CSR funding**. CSR initiatives play a significant role in bridging gaps left by public education systems, especially in **rural, tribal, and marginalized communities**.

Major CSR Initiatives

- ❖ The **Tata Group** is among the most significant corporate contributors to education through its long-standing CSR commitments. Through **Tata Trusts' School Improvement Programme**, the Group focuses on strengthening foundational literacy and numeracy among children, particularly in government and low-performing schools. The initiative emphasizes improving learning outcomes by enhancing teaching practices, curriculum delivery, and school management systems. Collectively, these initiatives contribute to SDG 4 by improving learning quality, expanding digital access, and promoting equitable opportunities in higher education.
- ❖ The **Infosys Foundation** plays a vital role in advancing quality education by focusing on infrastructure development and technology-enabled learning, particularly in rural and underserved regions. Its CSR initiatives include the construction of classrooms, libraries, hostels, and other educational facilities that create conducive learning environments for students. The Foundation actively supports **digital literacy and computer education**, equipping schools with technological resources and training students to adapt to a digital learning ecosystem. These efforts strengthen the foundational infrastructure of rural education and enhance teacher capacity, thereby contributing significantly to the realization of SDG 4.
- ❖ The **Reliance Foundation** emphasizes inclusive education and educational equity through a range of initiatives aimed at expanding access and improving learning continuity. Through **Reliance Foundation Schools**, the organization focuses on holistic school development, including curriculum enrichment, teacher professional development, and student-centered learning approaches. The Foundation also provides **scholarships to meritorious students from economically weaker sections**. These initiatives align closely with SDG 4 by enhancing access to education, promoting equity, and ensuring learning continuity in times of crisis.
- ❖ **ITC Limited** integrates education into its broader rural development and social investment strategy. Its CSR initiatives support **primary education in rural areas** by

strengthening school infrastructure, providing learning materials, and improving classroom environments. ITC also focuses on the development of **context-specific learning resources** that address local educational needs.

- ❖ The **Mahindra Group**, through its CSR platform “**Mahindra Rise for Good**,” focuses on youth empowerment by linking education with skills and employability. One of its flagship initiatives, the **Nanhi Kali Programme**, supports the education of underprivileged girls by providing academic support, learning materials, and mentoring, thereby addressing gender disparities in education. The Group also promotes **digital classrooms in rural schools**, improving access to modern learning tools.
- ❖ **Wipro Cares** has made sustained contributions to improving the quality of school education through long-term, systemic interventions. Its flagship program, **Wipro Applying Thought in Schools (WATIS)**, focuses on teacher professional development, curriculum reform, and pedagogical innovation, aiming to strengthen the overall teaching–learning process. Wipro also supports **education-focused NGOs and public school systems**, helping scale innovative educational practices across regions. Furthermore, Wipro invests in **digital education and learning innovation**, enabling schools to adopt technology in meaningful ways.
- ❖ **HDFC Bank**, through its CSR initiatives, promotes education as a key instrument for empowerment and social inclusion. Under its **Parivartan Programme**, the Bank supports rural education initiatives, including school infrastructure development, digital literacy programs, and community-based learning interventions. HDFC Bank also provides **scholarships to disadvantaged students**. A distinctive feature of its approach is the integration of **financial literacy with education**, equipping students with essential life skills alongside formal learning. These initiatives advance SDG 4 by fostering inclusive, equitable, and lifelong learning opportunities, particularly for vulnerable and rural populations.

Conclusion

Achieving **Quality Education for all (SDG 4)** in rural India is both a moral and developmental imperative. Significant progress has been made in access, yet quality, inclusivity, and equity remain challenging frontiers. A multi-stakeholder approach involving government, civil society, corporate partnerships, and community engagement is essential to ensure that rural students receive not just **education**, but **quality education** that prepares them for the realities of the 21st century.

References

1. *Education and Policy Reports* PubAdmin.Institute. (n.d.). *SDG 4 targets: Achieving quality education for all*. Retrieved from <https://pubadmin.institute/social-policies-and-administration/sdg-4-targets-quality-education> **Public Administration Institute**
2. Education for All in India. (n.d.). *SDG 4: Education in India — Empowering the nation’s future*. Retrieved from <https://educationforallinindia.com/sdg-4-education-india/> **Education for All in India** Academic and Sector Analyses International Journal of Social Sciences Research and Development. (2025). *Inclusive education in rural India: Challenges and prospects*. **IAEME**
3. Bardia, A., & Agrawal, A. (2025). *MindCraft: Revolutionizing education through AI-powered learning for rural India*. arXiv.



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/1

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह

हिंदी विभाग,

फीरोज गांधी कालेज रायबरेली,

लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

for the paper titled

आत्मसंकल्पनात्मक अनुभूति के कालजयी साहित्यकारः
जयशंकर प्रसाद

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 11-14

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/2

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Anjaly Prakash

Research Scholar, Department of Hindi

Dr. Sreeja G.R

Research Guide (Assistant Professor),
Department of Hindi, Nirmala college

Muvattupuzha, Ernakulam

for the paper titled

खामोशी में चुप्पी स्त्री जीवन : गीतांजलि
श्री के 'माई' उपन्यास के संदर्भ में

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 15-19



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/3

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

for the paper titled

**Agricultural Productivity and Regional Imbalances
in Brazil**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 20-24



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/4

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० चन्द्रप्रभा कण्डवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर (भूगोल विभाग)

रा० स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

for the paper titled

पौड़ी जनपद-दुगड़ा ब्लॉक के अन्तर्गत जैविक कृषि
का उत्पादन एवं अर्थव्यवस्था के नये आयाम

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 25-28


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/5

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ अनिता एस कर्पूर,

सह प्राध्यापिका,

हिन्दी विभाग रामैय्या इन्स्टीट्यूट ऑफ बिजनेस स्टडीस, गोकुला, बेंगलूर।

for the paper titled

भारतीय ज्ञान परंपरा और संत कबीरदास

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 11-14



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/6

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. देवेन्द्र कुमार शर्मा

उप पुस्तकालयाध्यक्ष,

केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश , धर्मशाला, जिला-कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश)

for the paper titled

पुस्तकालयों में डेटा प्रबंधन: सर्वोत्तम प्रथाएं और
भविष्य की दिशाएँ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 32-38


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/7

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Appu Borah

Assistant Professor,

Department of Assamese , Maibang Degree College, Maibang

for the paper titled

**Assamese modern songs and its essential features :
An Analysis**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 39-48



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/8

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

सत्यनारायणप्पा

सहायक प्रोफेसर, हिंदी- विभाग,
नागार्जुन कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, चिक्कमरलि, डोड्डामरलि,
नंदी पोस्ट व होबली चिक्काबल्लापुरा तालुक- जिला, कर्नाटक राज्य, पिन- 562101

for the paper titled

सूफी काव्य साहित्य की प्रवृत्तिया
(विशेष सन्दर्भ मलिक मुहम्मद जायसी)

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 49-55


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/9

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. अश्वनी कुमार धुव

प्रोफेसर,

शास. महाविद्यालय नगरी, जिला-धमतरी (छ० ग०)

for the paper titled

दिव्यांग विमर्श

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 56-59



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/10

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. ब्रजलता शर्मा,

शोध निर्देशिका,

आरती शुक्ला

शोधार्थी,

पी. के. विश्वविद्यालय करैरा जिला शिवपुरी (म०प्र०)

for the paper titled

कबीर के काव्य में आध्यात्मिक, अनुभव एवं
सामाजिक विद्रोह

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 60-62


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/11

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

अल्पना गौतम

शोधार्थी,

डॉ० सुषमा गौड़ियाल

शोध निर्देशिका,

हिन्दी विभाग बरेली कालेज, बरेली,

महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली।

for the paper titled

सुशीला टाकभोरे के साहित्य में दलित स्त्री की चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 63-66


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/12

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

लक्ष्मण राम मेहरा

सहायक आचार्य भूगोल विभाग ,

श्री भगवानदास तोदी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थान

for the paper titled

थार रेगिस्तान के असिंचित क्षेत्र में कृषि के नवाचार

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 67-70



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/13

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

अर्चना

शोधार्थी,

हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़-160014

for the paper titled

दिवरुक्ति के आधार पर 'गोदान' उपन्यास का विश्लेषण

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 71-75


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/14

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

सुश्री ब्याबंग याना

सहायक प्रोफेसर(हिन्दी विभाग),

शासकीय महाविद्यालय दोईमुख जिला- पापुम-पारे(अरुणाचल प्रदेश) पिन कोड:-
७९१११२(791112)

for the paper titled

“अरुणाचल प्रदेश की न्यीशी समुदाय की बोली में
देवनागरी लिपि का प्रयोग”

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 76-79



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/15

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Ms. Lod Mebin

Assistant Professor (Education),

Govt. College Doimukh District - Papum Pare Arunachal Pradesh Pin : 791112

for the paper titled

“Higher Education: Knowledge Economy”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 80-82



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/16

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

कविता कोठारी

शोधार्थी,

संस्थान सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा

for the paper titled

अलका सरावगी के उपन्यास एक सच्ची झूठी गाथा
उपन्यास में पात्रों का अनुशीलन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 83-88



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHIT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/17

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

for the paper titled

**Agricultural Productivity and Its
Regional Imbalance of North America**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 89-93



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/18

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. प्रकाश नारायण सिंह चौहान

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

कमल स्मृति महाविद्यालय सीधी (म.प्र.)

for the paper titled

“हिन्दी उपन्यासों में कथानक की विशिष्टता”

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 94-96



9 772395 711007


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/19

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

विनोद कुमार

सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान)

स्वामी विवेकानन्द राजकीय महाविद्यालय, खेतड़ी, झुंनझुनूं (राजस्थान)

for the paper titled

ज्योतिबा फुले के चिन्तन में सामाजिक न्याय की अवधारणा :
एक समीक्षात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 97-99


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/20

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

नेहा

पी०एच०डी० शोधार्थी (संगीत) ,

आगरा कॉलेज, आगरा

प्रोफेसर आन्शवना सक्सेना

शोध -निर्देशिका

डॉ० भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

for the paper titled

“भारतीय संगीत में महिलाओं का योगदान”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 100-104



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/21

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डा. श्रीकला.एस.आर,
प्रोफसर, हिन्दी विभाग,
यूनिवर्सिटी कालेज, तिरुवनन्तपुरम

for the paper titled

उत्तराधुनिक हिंदी महिला लेखिकाओं के उपन्यास :
एक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 105-109



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/22

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Naresh Kumar Meena

Phd Research Scholar,

Jayoti Vidyapeeth Women's University Vedaant Gyan Valley

for the paper titled

**Agricultural Productivity and Its Regional
Imbalances of Australia.**

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 110-114



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/23

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Karunarathne Rasika R A,

Research Scholar,

Department of Post Graduate Studies and Research in Sociology,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje.

Shyamali. W.M.

Lecturer,

Department of Sociology, University of Sri Jayewardenepura

for the paper titled

**Applying Social Engineering Techniques to Address
Social Issues: A Sociological Perspective**

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 115-119



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/24

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. नेमीचंद कुमावत

सहायक आचार्य (हिंदी),

मा. ला. वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान)

for the paper titled

“डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में
मानवतावादी चिंतन”

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 120-126



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/25

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. अश्वनी कुमार ध्रुव

प्रोफेसर,

शास. महाविद्यालय नगरी, जिला-धमतरी (छ.ग.)

for the paper titled

छत्तीसगढ़ी लोक गीतों का समाज के विकास में योगदान

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 127-129



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/26

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

किरण पवार

सहायक प्राध्यापक,

श्री वैष्णव इंस्टीट्यूट ऑफ टीचर्स एजुकेशन

डॉ. दीपक जहागीरदार

सह-प्राध्यापक,

सेज यूनीवर्सिटी, इन्दौर

for the paper titled

मानव संसाधन एवं तनाव प्रबंधन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 130-132



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/27

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. सुनीता प्रधान

प्रधान चौक भोजपुर चांपा, पोस्ट चांपा,
जिला-जांजगीर चांपा, पिन 495671 छत्तीसगढ़

for the paper titled

छत्तीसगढ़ के महिला कृषि श्रमिकों की समस्याओं
का अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 133-135



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/28

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डा० चन्द्र शेखर उपाध्याय

असिस्टेंट प्रोफेसर,

भोलानाथ महाविद्यालय (स्वायत्तशासित) धुबरी, असम।

for the paper titled

भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत के रूप में
उपनिषद : एक समीक्षात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 136-140



9 772395 711007


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/29

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

वी. अनीता

(पीएच.डी. हिंदी)

जूनियर लेक्चरर इन हिंदी,

गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज, गरीब नगर, विकाराबाद तेलंगाना - 501101

for the paper titled

रमणिका गुप्ता की कविताओं में चित्रित सामाजिक
चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 141-145



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/30

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

पुरी गोदावरी

पीएच.डी. (हिंदी)

जूनियर लेक्चरर इन हिंदी,

गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज गर्ल, कोटागल्ली, निजामाबाद, तेलंगाना - 503002

for the paper titled

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन का चित्रण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 146-149



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/31

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. ममता उपाध्याय

सह प्राध्यापक, हिन्दी

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

for the paper titled

आधुनिक कविता में किसान चित्रण

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 150-153



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/32

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

संगीता सिंह

सहायक प्राध्यापक, हिंदी

विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरार, ग्वालियर (मप्र)

for the paper titled

कुबेरनाथ राय के निबंधों में सामाजिक समरसता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 154-156



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/33

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ . जूलिया एम्मानुएल

सहायक आचार्या एवं विभागाध्यक्षा,

हिन्दी स्नातकोत्तर एवं शोध विभाग, निर्मला कॉलेज, मूवात्तपुजा, केरल-
पिन 686661

for the paper titled

मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री: सत्ता,
स्वायत्तता और संघर्ष

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 157-160



9 772395 711007


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/34

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

सुशीला बाणी

हिंदी शोधार्थी,

एस.एस.जे.विश्वविद्यालय अल्मोड़ा

for the paper titled

‘विमल मित्र’ के उपन्यास ‘चार आँखों का खेल’
का सामाजिक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 161-164



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/35

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Dr.R.REKHA ,

Assistant Professor, Department of BBA,

Dr.VIDHYA .P

Asso.Prof&Head,Dept. Of. BCOM CS,

Dr SAJITHA J

Asst.Prof&Head,Dept of Other Languages,

Sri Ramakrishna College of Arts&Science

for the paper titled

THE ROLE OF SOFT SKILLS IN EFFECTIVE CROSS-LINGUISTIC TRANSLATION

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 165-168

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/36

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. शकुन्तला प्रजापति

सहायक प्राध्यापक, हिंदी

पी.एम.सी.ओ.ई. शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

for the paper titled

जनजातीय क्रांति के महानायक : बिरसा मुंडा

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 169-173



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/37

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

भरत लाल बंशकार
शोधार्थी (पी-एच. डी. हिन्दी),
बरकत उल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल

for the paper titled

निर्गुण कवि रैदास के काव्य में मानव मूल्यों की
सामाजिक चेतना

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 174-175


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/38

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

मितीश दुबे

शोधछात्र,

डॉ० विद्याधर सिंह

निर्देशक,

संस्कृतविभाग, जम्मू विश्वविद्यालय

for the paper titled

आचार्य क्षेमेन्द्र की दृष्टि में कल्कि अवतार एवं
उसकी समीचीनता

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 176-179


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/39

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

नीरज जम्वाल ,
शोधछात्र,
संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय
प्रो. रामबहादुर शुक्ल:
निर्देशक

for the paper titled

मीमांसा दर्शन में यज्ञ विधान शांखायन
ब्राह्मण के आलोक में

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 180-183


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/40

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० कल्पना सुधांशु
मगध विश्वविद्यालय ,बोधगया

for the paper titled

मधुकर गंगाधर की कहानी का साहित्यिक अवलोकन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 184-191



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : **INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED**
8.642 **MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES**

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/41

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Deepa Dewangan

Assistant Professor Commerce,

Govt. Sukhram Nage Mahavidyalay Nagari, Dist.- Dhamtari C.G.

Pawan Kumar Tamrakar

H. O. D.

Department Of Commerce,

Assistant Professor,

Sant Gurughasis Govt. P. G. College

for the paper titled

छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक का वित्तीय समावेशन में योगदान

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 192-199



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

বোহল শোধ মঞ্জুষা Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/42

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

সুদীপ্ত মণ্ডল

গবেষক, সংস্কৃত বিভাগ, যাদবপুর বিশ্ববিদ্যালয়, কলকাতা, ভারত

for the paper titled

পদার্থতত্ত্বনিরূপণ গ্রন্থের দৃষ্টিতে বিশেষপদার্থ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 200-205


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/43

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

अमित मैठाणी

शोधार्थी,

डॉ० ब्रजलता शर्मा

शोध निर्देशक,

महाराज अग्रसेन हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय, धैड गाँव, पोखड़ा उत्तराखंड

for the paper titled

गढ़वाली लोकसाहित्य: संस्कृति और परंपरा का प्रतिबिंब

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 206-208


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)



9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/44

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. सुकन्या चल्ला

ए पी टी डब्लू आर एस गर्ल्स करेडु प्रकाशम जिला आंध्र प्रदेश

for the paper titled

शिक्षा में तकनीकी का बढ़ता प्रभाव : लाभ,
हानियाँ, चुनौतियाँ एवं भविष्य की दिशा

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 209-211



9 772395 711007


Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib. & Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152



ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642 INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. January 2026/45

<https://doi.org/10.5281/zenodo.18380036>

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Yogendra Kumar

Associate professor,
Govt. Girls College, Ajmer (RAJASTHAN)

for the paper titled

**Quality Education in Rural India:
SDG 4 Perspective**

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

January 2026, Vol. 23, Issue-1, Page No 212-216



9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152